जैन साहित्य एवं मंदिर उपकरण
हमारे यहाँ सभी प्रकार का दिगंबर जैन एवं भारत के सभी प्रमुख
धार्मिक संस्थानों का सत साहित्य एवं मंदिर में उपयोग हेतु उपकरण
और प्रभावना में बाटने योग्य सामग्री सीमित मूल्य पर उपलब्ध है
(पांडुशिला ,सिंघासन, छत्र, चवर प्रातिहार्य,जाप माला ,मंगल कलश, पूजा बर्तन ,चंदोवा,तोरण ,झारी ,
(शुद्ध चांदी के उपकरण आर्डर पर निर्मित किया जाता है)
नोट:-हमारे यहाँ घरो में उपयोग हेतु ,साधुओ के उपयोग हेतु ,
अनुष्ठानों में उपयोग हेतु शुद्ध घी भी आर्डर पर
उपलब्ध कराया जाता है
SOURABH KUMAR JAIN
9993602663
77229 83010
SOURABHJN1989@GMAIL.COM

जिन उपासना

(पूजा-पाठ-स्तोत्र संग्रह)

प्रकाशक
धर्मोदय साहित्य प्रकाशन
सागर (म०प्र०)

कृति	:	जिन उपासना
संकलन/सम्पादन	:	ब्रह्मचारी भाई गण
संस्करण	:	प्रथम, अगस्त, २०१६
आवृत्ति	:	२२००
मूल्य	:	७५/-
मुद्रक	:	विकास आफसेट, भोपाल

- प्राप्ति स्थल -

१. धर्मोदय साहित्य प्रकाशन
बाहुबली कालोनी, सागर (म०प्र०)
०७५८२९-८६२२२

२. श्री वर्णी दिगम्बर जैन गुरुकुल
पाण्डुक शिला परिसर
पिसनहारी की मढ़िया, जबलपुर (म०प्र०)
०९४२४६-९०६०७

३. अमर ग्रन्थालय, उदासीन आश्रम
५८४, एम० जी० रोड, तुकोगंज, इन्दौर (म०प्र०)
०९४२५४-७८८४६

४. श्री दिगम्बर जैन सिद्धायतन
महावीरनगर, खुरई रोड, सागर (म०प्र०)
०९९९३१-५५६६७

५. धर्म प्रभावना सदन
पटैल मार्केट, लिंक रोड, सागर (म०प्र०)
०९४०६९-२०१७३

अनुक्रम

स्तुतियाँ

णमोकार महामंत्र	....	१
प्रातःकालीन स्तुति	....	२
सुप्रभातस्तोत्रम्	....	३
दर्शनपाठः (दर्शनं देव)	....	५
दर्शन पच्चीसी (तुम निरखत)	....	७
दर्शन स्तुति (सकलज्ञेय)	....	९
दर्शन स्तुति (अतिपुण्य)	....	११
दर्शन स्तुति (प्रभु पतितपावन)	....	१२
देव स्तुति (अहो जगतगुरु)	....	१३
मङ्गलाष्टक	....	१४
श्री लघ्वभिषेक पाठः	....	१६
श्री माघनन्दिकृताभिषेक पाठः	....	१९
जलाभिषेक पाठ	....	२३
लघुशान्तिधारा पाठ	....	२७
शान्तिधारा पाठ	....	२९
शान्तिधारा पाठ	....	३४
विनय पाठ	....	३८
नित्यपूजापीठिका	....	४०
परमर्षि स्वस्ति मंगलपाठ	....	४४
देवशास्त्रगुरु पूजा	....	४५

बीस तीर्थंकर पूजा	....	५०
कृत्रिमाकृत्रिम जिन बिम्बार्घ	....	५३
लघु चैत्य भक्ति	....	५३
सिद्धपूजा (द्रव्याष्टक)	....	५५
सिद्धपूजा (भावाष्टक)	....	५९
सिद्धपूजा (भाषा) (पं॰द्यानतराय)	....	६१
सिद्धपूजा (भाषा) (पं॰हीराचन्द्र)	....	६५
देवशास्त्रगुरुपूजा (केवल रवि)	....	६९
समुच्चय पूजा	....	७४
नवदेवता (अरिहन्त)	....	७८
णमोकार महामंत्र पूजा	....	८२
पञ्चपरमेष्ठी पूजा	....	८६
श्री बाहुबली पूजा	....	९०
अर्घ्यावली	....	९४
महार्घ्य	....	१०१
शान्तिपाठ	....	१०३
विसर्जन	....	१०५
स्तुतिपाठ (तुम तरणतारण)	....	१०५

पर्वपूजाएँ

सोलहकारण पूजा	....	१०८
पंचमेरु पूजा	....	१११
नन्दीश्वरद्वीप पूजा	....	११४
दशलक्षणधर्म पूजा	....	११८

रत्नत्रय पूजा १२४
क्षमावाणी पूजा १३३
सरस्वती पूजा १३७
श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतमुनि पूजा १४०
श्री विष्णुकुमार महामुनि पूजा १४४

तीर्थंकर पूजाएँ

श्री आदिनाथ जिन पूजा १४८
श्री चन्द्रप्रभ जिन पूजा १५२
श्री चन्द्रप्रभ पूजा (देहरा) १५७
श्री शीतलनाथ जिन पूजा १६१
श्री वासुपूज्य जिन पूजा १६६
श्री शान्तिनाथ जिन पूजा १७०
श्री मुनिसुव्रत जिन पूजा १७४
श्री नेमिनाथ जिन पूजा १७८
श्री पार्श्वनाथ जिन पूजा १८२
श्री रविव्रत पूजा १८७
श्री वर्द्धमान जिन पूजा १९१
श्री चौबीसी जिन पूजा १९६
श्री निर्वाणक्षेत्र पूजा १९८

आर्यिका पूर्णमती माताजी द्वारा रचित पूजाएँ

देव शास्त्र गुरु समुच्चयपूजन २०२
सोलहकारण पूजन २०७
नवदेवता पूजन २११

श्री तीर्थंकर विधान प्रारंभ	....	२१५
श्री चौबीसी समुच्चय पूजन	....	२१६
श्री आदिनाथ जिन पूजन	....	२२१
श्री अजितनाथ जिन पूजन	....	२२६
श्री संभवनाथ जिन पूजन	....	२३०
श्री अभिनन्दननाथ जिन पूजन	....	२३४
श्री सुमतिनाथ जिन पूजन	....	२३८
श्री पद्मप्रभ जिन पूजन	....	२४२
श्री सुपार्श्वनाथ जिन पूजन	....	२४६
श्री चन्द्रप्रभ जिन पूजन	....	२५१
श्री सुविधिनाथ जिन पूजन	....	२५६
श्री शीतलनाथ जिन पूजन	....	२६०
श्री श्रेयांसनाथ जिन पूजन	....	२६४
श्री वासुपूज्य जिन पूजन	....	२६९
श्री विमलनाथ जिन पूजन	....	२७४
श्री अनन्तनाथ जिन पूजन	....	२७९
श्री धर्मनाथ जिन पूजन	....	२८४
श्री शान्तिनाथ जिन पूजन	....	२८७
श्री कुंथुनाथ जिन पूजन	....	२९३
श्री अरनाथ जिन पूजन	....	२९८
श्री मल्लिनाथ जिन पूजन	....	३०२
श्री मुनिसुव्रत जिन पूजन	....	३०८
श्री नमिनाथ जिन पूजन	....	३१२

श्री नेमिनाथ जिन पूजन ३१७
श्री पार्श्वनाथ जिन पूजन ३२३
श्री महावीर जिन पूजन ३२९

गुरुपूजाएँ

सप्तर्षि पूजा ३३९
गुरु पूजा ३४३
श्री शान्तिसागर महाराज पूजा ३४६
आचार्य श्री विद्यासागर पूजा ३५०

स्वाध्याय पाठ

तत्त्वार्थसूत्रम् ३५५
श्री जिनसहस्रनाम स्तोत्रम् ३७२
भक्तामर स्तोत्रम् ३९०
महावीराष्टक स्तोत्रम् ३९९
छहढाला ४०१
भक्तामर स्तोत्र (भाषा) ४१४
स्वयम्भूस्तोत्र (भाषा) ४२१
निर्वाणकाण्ड (भाषा) ४२३

भावनाएँ

वैराग्यभावना (बीज राख) ४२६
बारह भावना (राजा राणा) ४२९
बारह भावना (वन्दूँ श्री) ४३०
सामायिक पाठ (प्रेमभाव) ४३५
भावना बत्तीसी (मेरा आतम) ४३८

आत्मकीर्तन (हूँ स्वतन्त्र) ४४४
भावना गीत (भावना दिनरात) ४४४
मेरी भावना ४४५
समाधिमरण पाठ (छोटा) ४४७
समाधिमरण पाठ (बड़ा) ४४९
आलोचना पाठ ४५७
गुरु स्तुति (ते गुरु मेरे) ४६०

आरती

श्री पञ्चपरमेष्ठी की आरती ४६२
श्री महावीर स्वामी की आरती ४६२
श्री विद्यासागरजी की आरती ४६३
संक्षिप्त सूतक विधि ४६४
श्री आदिनाथ चालीसा ४६६
श्री चन्द्रप्रभ चालीसा ४६८
श्री मुनिसुव्रतनाथ चालीसा ४७०
श्री पार्श्वनाथ चालीसा ४७१
श्री महावीर चालीसा ४७४
श्री ज्ञान चालीसा ४७६
समाधि भावना ४८०

स्तुतियाँ

[1]णमोकार महामन्त्र

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ॥

चत्तारि मंगलं अरहंतमंगलं सिद्धमंगलं साहुमंगलं
केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ।

चत्तारि लोगोत्तमा अरहंतलोगोत्तमा सिद्धलोगोत्तमा
साहु लोगोत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगोत्तमो ।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरहंतसरणं पव्वज्जामि
सिद्धसरणं पव्वज्जामि साहुसरणं पव्वज्जामि
केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ।

एसो पंच णमोयारो, सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥

मंगल गान

(आचार्य श्री विद्यासागर द्वारा रचित)

हे! शान्त सन्त अरहन्त अनन्त ज्ञाता,
हे! शुद्ध-बुद्ध जिन सिद्ध अबद्ध धाता।
आचार्यवर्य उवझाय सुसाधु सिन्धु,
मैं बार-बार तुम पाद-पयोज बन्दूँ ॥१॥

१. मूल पाठ

है मूलमंत्र नवकार सुखी बनाता,
जो भी पढ़े विनय से अघ को मिटाता।
है आद्य मंगल यही सब मंगलों में,
ध्याओ इसे न भटको जग-जंगलों में।।२।।

सर्वज्ञदेव अरहन्त परोपकारी,
श्री सिद्ध वन्द्य परमातम निर्विकारी।
श्री केवली कथित आगम साधु प्यारे,
ये चार मंगल, अमंगल को निवारे।।३।।

श्री वीतराग अरहन्त कुकर्मनाशी,
श्री सिद्ध शाश्वत सुखी शिवधाम वासी।
श्री केवली कथित आगम साधु प्यारे,
ये चार उत्तम, अनुत्तम शेष सारे।।४।।

जो श्रेष्ठ हैं शरण मंगल कर्मजेता,
आराध्य हैं परम हैं शिवपंथ नेता।
है वन्द्य खेचर, नरों, असुरों सुरों के,
वे ध्येय पंचगुरु हों हम बालकों के।।५।।

प्रातःकालीन स्तुति

वीतराग सर्वज्ञ हितङ्कर, भविजन की अब पूरो आश।
ज्ञानभानु का उदय करो मम, मिथ्यातम का होय विनाश।।

जीवों की हम करुणा पालें, झूठ वचन नहिं कहें कदा ।
परधन कबहूँ न हरहूँ स्वामी, ब्रह्मचर्य व्रत रखें सदा।।

तृष्णा लोभ बढ़े न हमारा, तोष सुधा नित पिया करें ।
श्रीजिन धर्म हमारा प्यारा, तिसकी सेवा किया करें।।

दूर भगावें बुरी रीतियाँ, सुखद रीति का करें प्रचार ।
मेल मिलाप बढावे हम सब, धर्मोन्नति का करें प्रसार ॥

सुख-दुःख में हम समता धारें, रहें अचल जिमि सदा अटल ।
न्यायमार्ग को लेश न त्यागें, वृद्धि करें निज आतमबल ॥

अष्ट कर्म जो दुःख हेतु हैं, तिनके क्षय का करें उपाय ।
नाम आपका जपें निरन्तर, विघ्न शोक सब ही टल जाय ॥

आतम शुद्ध हमारा होवे, पाप मैल नहिं चढ़े कदा ।
शिक्षा की हो उन्नति हममें, धर्म ज्ञान हू बढ़े सदा ॥

हाथ जोड़कर शीश नवावें, तुमको भविजन खड़े खड़े ।
यह सब पूरो आश हमारी, चरण शरण में आन पड़े ॥

सुप्रभात-स्तोत्रम्

शार्दूलविक्रीडितम्

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे,
यद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे ।
यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः, पूजाद्‌भुतं तद्‌भवैः,
सङ्गीतस्तुतिमङ्गलैः प्रसरतां, मे सुप्रभातोत्सवः ॥१॥

वसन्ततिलकाछन्दः

श्रीमन् - नतामर - किरीट - मणिप्रभाभि-
रालीढपाद - युग ! दुर्द्धर- कर्मदूर !
श्रीनाभिनन्दन ! जिनाजित ! शम्भवाख्य !
त्वद्‌ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥२॥

छत्रत्रय - प्रचल - चामर - वीज्यमान !
देवाभिनन्दनमुने ! सुमते ! जिनेन्द्र !

पद्मप्रभारुणमणि - द्युति - भासुराङ्ग !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥३॥

अर्हन् ! सुपार्श्व ! कदली-दलवर्ण-गात्र !
प्रालेय - तारगिरि - मौक्तिक - वर्णगौर !
चन्द्रप्रभ ! स्फटिक - पाण्डुर - पुष्पदन्त !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥४॥

सन्तप्त-काञ्चनरुचे ! जिनशीतलाख्य !
श्रेयन् ! विनष्ट-दुरिताष्ट-कलङ्क-पङ्क !
बन्धूक - बन्धुररुचे ! जिनवासुपूज्य !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥५॥

उद्दण्ड - दर्पक - रिपो ! विमलामलाङ्ग !
स्थेमन्ननन्तजिदनन्त - सुखाम्बुराशे !
दुष्कर्म - कल्मष - विवर्जित - धर्मनाथ !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥६॥

देवामरी - कुसुम - सन्निभ - शान्तिनाथ !
कुन्थो ! दयागुण - विभूषण - भूषिताङ्ग !
देवाधिदेव ! भगवन्नरतीर्थ-नाथ !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥७॥

यन्मोह-मल्ल-मद-भञ्जन-मल्लिनाथ !
क्षेमङ्करावितथ - शासन - सुव्रताख्य !
सत्-सम्पदा प्रशमितो नमिनामधेय !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥८॥

तापिच्छगुच्छ-रुचिरोज्ज्वल-नेमिनाथ !
घोरोपसर्गविजयिन् ! जिनपार्श्वनाथ !

स्याद्वाद-सूक्ति-मणि-दर्पण ! वर्द्धमान !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥९॥

प्रालेय-नील-हरितारुण-पीत-भासं,
यन्मूर्तिमव्यय-सुखावसथं मुनीन्द्राः ।
ध्यायन्ति सप्तति-शतं जिनवल्लभानां,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥१०॥

अनुष्टुप्छन्दः

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, माङ्गल्यं परिकीर्तितम् ।
चतुर्विंशतितीर्थानां, सुप्रभातं दिने दिने ॥११॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम् ।
देवता ऋषयः सिद्धाः, सुप्रभातं दिने दिने ॥१२॥

सुप्रभातं तवैकस्य, वृषभस्य महात्मनः ।
येन प्रवर्तितं तीर्थं, भव्यसत्त्वसुखावहम् ॥१३॥

सुप्रभातं जिनेन्द्राणां, ज्ञानोन्मीलितचक्षुषाम् ।
अज्ञानतिमिरान्धानां नित्यमस्तमितो रविः ॥१४॥

सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य, वीरः कमललोचनः ।
येन कर्माटवी दग्धा, शुक्लध्यानोग्रवह्निना ॥१५॥

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, सुकल्याणं सुमङ्गलम् ।
त्रैलोक्यहितकर्त्तॄणां, जिनानामेव शासनम् ॥१६॥

दर्शन-पाठः

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम् ।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम् ॥१॥

दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वन्दनेन च ।
न चिरं तिष्ठते पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥२॥

वीतराग-मुखं दृष्ट्वा, पद्म-राग-समप्रभम् ।
जन्म-जन्म-कृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ॥३॥

दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसारध्वान्त-नाशनम् ।
बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थ-प्रकाशनम् ॥४॥

दर्शनं जिनचन्द्रस्य, सद्धर्मामृत-वर्षणम् ।
जन्मदाह - विनाशाय, वर्धनं सुखवारिधेः ॥५॥

जीवादितत्त्वप्रतिपादकाय, सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणार्णवाय ।
प्रशान्तरूपाय दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥६॥

चिदानन्दैक-रूपाय, जिनाय परमात्मने ।
परमात्म-प्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥७॥

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ! ॥८॥

न हि त्राता न हि त्राता, न हि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात् परो देवो, न भूतो न भविष्यति ॥९॥

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥१०॥

जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवेच्चक्रवर्त्यपि ।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानुवासितः ॥११॥

जन्म-जन्मकृतं पापं, जन्मकोटिमुपार्जितम् ।
जन्म-मृत्यु-जरा-रोगो, हन्यते जिनदर्शनात् ॥१२॥

अद्याभवत् सफलता नयन-द्वयस्य,
देव! त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।
अद्य त्रिलोक-तिलक! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधि-रयं चुलुक-प्रमाणः ॥१३॥

दर्शनपच्चीसी

तुम निरखत मोंको मिली, मेरी सम्पति आज ।
कहाँ चक्रवति-संपदा कहाँ स्वर्ग-साम्राज ॥१॥

तुम वन्दत जिनदेव जी, नित नव मंगल होय ।
विघ्न कोटि ततछिन टरैं, लहहिं सुजस सब लोय ॥२॥

तुम जाने बिन नाथ जी, एक स्वास के माँहिं ।
जन्म-मरण अठदस किये, साता पाई नाहिं ॥३॥

आप बिना पूजत लहे, दुःख नरक के बीच ।
भूख प्यास पशुगति सही, कर्यो निरादर नीच ॥४॥

नाम उचारत सुख लहै, दर्शनसों अघ जाय ।
पूजत पावै देव पद, ऐसे हैं जिनराय ॥५॥

वंदत हूँ जिनराज मैं, धर उर समताभाव ।
तन-धन-जन जगजाल तैं धर विरागता भाव ॥६॥

सुनो अरज हे नाथ जी, त्रिभुवन के आधार ।
दुष्ट कर्म का नाश कर, वेगि करो उद्धार ॥७॥

जाचत हूँ मैं आपसों, मेरे जियके माँहि ।
रागद्वेष की कल्पना, कबहूँ उपजै नाहि ॥८॥

अति अद्भुत प्रभुता लखी, वीतरागता माँहि ।
विमुख होहि ते दुख लहैं, सन्मुख सुखी लखाहि ॥९॥

कलमल कोटिक नहि रहैं, निरखत ही जिनदेव ।
ज्यों रवि ऊगत जगत् में, हरै तिमिर स्वयमेव ॥१०॥

परमाणू पुद्गलतणी, परमातम संजोग ।
भई पूज्य सब लोक में, हरे जन्म का रोग ॥११॥

कोटि जन्म में कर्म जो, बाँधे हुते अनन्त ।
ते तुम छवी विलोकते, छिन में हो हैं अन्त ॥१२॥

आन नृपति किरपा करै, तब कछु दे धन धान ।
तुम प्रभु अपने भक्त को, करल्यो आप समान ॥१३॥

यंत्र मंत्र मणि औषधी, विषहर राखत प्रान ।
त्यों जिनछवि सब भ्रम हरै, करै सर्व परधान ॥१४॥

त्रिभुवनपति हो ताहि तैं, छत्र विराजैं तीन ।
सुरपति नाग नरेशपद, रहैं चरन आधीन ॥१५॥

भवि निरखत भव आपने, तुव भामण्डल बीच ।
भ्रम मेटैं समता गहै, नाहिं सहै गति नीच ॥१६॥

दोई ओर ढोरत अमर, चौंसठ चमर सफेद ।
निरखत भविजन का हरैं, भव अनेक का खेद ॥१७॥

तरु अशोक तुव हरत है, भवि-जीवन का शोक ।
आकुलता कुल मेटि कें, करैं निराकुल लोक ॥१८॥

अन्तर बाहिर परिगहन, त्यागा सकल समाज ।
सिंहासन पर रहत हैं, अन्तरीक्ष जिनराज ॥१९॥

जीत भई रिपु मोहतैं, यश सूचत है तास ।
देव दुन्दुभिन के सदा, बाजे बजैं अकाश ॥२०॥

बिन अक्षर इच्छा रहित, रुचिर दिव्यध्वनि होय ।
सुर नर पशु समझैं सबै, संशय रहै न कोय ॥२१॥

बरसत सुरतरु के कुसुम, गुंजत अलि चहुँ ओर ।
फैलत सुजस सुवासना, हरषत भवि सब ठौर ॥२२॥

समुद्र बाध अरु रोग अहि, अर्गल बंध संग्राम ।
विघ्न विषम सबही टरैं, सुमरत ही जिननाम ॥२३॥

सिरीपाल, चंडाल पुनि, अञ्जन भीलकुमार ।
हाथी हरि अरि सब तरे, आज हमारी बार ॥२४॥

'बुधजन' यह विनती करै, हाथ जोड़ शिर नाय ।
जबलौं शिव नहि होय तुव-भक्ति हृदय अधिकाय ॥२५॥

दर्शन-स्तुति

कविवर दौलतराम

दोहा–सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द-रस-लीन ।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि-रज-रहस-विहीन ॥

पद्धरि

जय वीतराग विज्ञान-पूर, जय मोह-तिमिर को हरन सूर ।
जय ज्ञान अनन्तानन्त धार, दृग-सुख-वीरज-मण्डित अपार ॥१॥

जय परम शान्त मुद्रा समेत, भवि-जन को निज अनुभूति हेत ।
भवि-भागन वच-जोगे वशाय, तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय ॥२॥

तुम गुण चिन्तत निज-पर-विवेक, प्रगटै, विघटैं आपद अनेक ।
तुम जगभूषण दूषणवियुक्त, सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥३॥

अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप ।
शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन, स्वाभाविक परिणतिमय अछीन ॥४॥

अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्व-चतुष्टयमय राजत गभीर ।
मुनि गणधरादि सेवत महन्त, नव-केवल-लब्धि-रमा धरन्त ॥५॥

तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जैहैं सदीव ।
भव-सागर में दुख छार वारि, तारन को अवर न आप टारि ॥६॥

यह लखि निज दुख-गदहरण-काज, तुम ही निमित्त कारण इलाज ।
जाने, तातैं मैं शरण आय, उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥७॥

मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधिफल-पुण्यपाप ।
निज को पर को करता पिछान, पर में अनिष्टता-इष्ट ठान ॥८॥

आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृग-तृष्णा जानि वारि ।
तन-परिणति में आपो चितार, कबहूँ न अनुभवो स्व-पदसार ॥९॥

तुम को बिन जाने जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश ।
पशु-नारक-नर-सुर-गति-मँझार, भव धर धर मर्यो अनन्त बार ॥१०॥

अब काल-लब्धि-बल तैं दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ।
मन शान्त भयो मिटि सकलद्वन्द्व, चाख्यो स्वातम-रस दुखनिकन्द ।११।

तातैं अब ऐसी करहु नाथ, बिछुरै न कभी तुव चरण साथ ।
तुम गुणगण को नहिं छेव देव, जग तारन को तुम विरद एव ॥१२॥

आतम के अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय ।
मैं रहूँ आपमें आप लीन, सो करो होउँ ज्यों निजाधीन ॥१३॥

मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रय-निधि दीजै मुनीश ।
मुझ कारज के कारन सु आप, शिव करहु, हरहु मम मोह-ताप ॥१४॥

शशि शान्तकरन तप हरन हेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ।
पीवत पियूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभव तैं भव नशाय ॥१५॥

त्रिभुवन तिहुँकाल मँझार कोय, नहि तुम बिन निज सुखदाय होय ।
मो उर यह निश्चय भयो आज, दुख-जलधि उतारन तुम जिहाज ॥१६॥

दोहा–तुम गुण-गण-मणि गणपती, गणत न पावहि पार ।
'दौल' स्वल्प-मति किम कहै, नमूँ त्रियोग सँभार ॥

दर्शन-स्तुति

सखी

अति पुण्य उदय मम आया, प्रभु तुमरा दर्शन पाया ।
अब तक तुमको बिन जाने, दुख पाये निज गुण हाने ॥

हरिगीतिका

पाये अनन्ते दुःख अब तक, जगत को निज जानकर ।
सर्वज्ञ भाषित जगत हितकर, धर्म नहि पहिचान कर ॥
भव बंधकारक सुख प्रहारक, विषय में सुख मानकर ।
निज पर विवेचक ज्ञानमय, सुखनिधि सुधा नहि पानकर ॥१॥

सखी-हरिगीतिका

तव पद मम उर में आये, लखि कुमति विमोह पलाये ।
निज ज्ञान कला उर जागी, रुचि पूर्ण स्वहित में लागी ॥
रुचि लगी हित में आत्म के, सतसंग में अब मन लगा ।
मन में हुई अब भावना, तव भक्ति में जाऊँ रँगा ॥
प्रिय वचन की हो टेव, गुणि गण गान में ही चित पगै ।
शुभ शास्त्र का नित हो मनन, मन दोष वादन तैं भगै ॥२॥

कब समता उर में लाकर, द्वादश अनुप्रेक्षा भाकर ।
ममतामय भूत भगाकर, मुनिव्रत धारूँ वन जाकर ॥
धरकर दिगम्बर रूप कब, अठ-बीस गुण पालन करूँ ।
दो-बीस परिषह सह सदा, शुभ धर्म दस धारन करूँ ॥
तप तपूँ द्वादश विधि सुखद नित, बंध आस्रव परिहरूँ ।
अरु रोकि नूतन कर्म संचित, कर्म रिपु को निर्जरूँ ॥३॥

कब धन्य सुअवसर पाऊँ, जब निज में ही रम जाऊँ ।
कर्तादिक भेद मिटाऊँ, रागादिक दूर भगाऊँ ॥
कर दूर रागादिक निरन्तर, आत्म को निर्मल करूँ ।
बल ज्ञान दर्शन सुख अतुल, लहि चरित क्षायिक आचरूँ ॥
आनन्दकन्द जिनेन्द्र बन, उपदेश को नित उच्चरूँ ।
आवै 'अमर' कब सुखद दिन, जब दुखद भवसागर तरूँ ॥४॥

दर्शन-स्तुति

कविवर बुधजन

प्रभु पतित-पावन मैं अपावन, चरन आयो सरन जी ।
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरन जी ॥१॥

तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव विविध प्रकार जी ।
या बुद्धि सेती निज न जाण्यो, भ्रम गिण्यो हितकार जी ॥२॥

भव-विकट-वन में करम बैरी, ज्ञान-धन मेरो हर्यो ।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट-गति धरतो फिर्यो ॥३॥

धन घड़ी यो धन दिवस, यो ही धन जनम मेरो भयो ।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभु को लख लयो ॥४॥

छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासा पै धरैं ।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुणजुत, कोटि रवि-छवि को हरैं ॥५॥

मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदय रवि आतम भयो ।
मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रंक चिन्तामणि लयो ॥६॥

मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, वीनऊँ तुव चरन जी ।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोक-पति जिन, सुनहु तारन तरन जी ॥७॥

जाचूँ नहीं सुर-वास पुनि, नर-राज परिजन साथ जी ।
'बुध' जाचहूँ तुव भक्ति भव-भव, दीजिए शिवनाथ जी ॥८॥

देव-स्तुति

कविवर भूधरदास

ढाल परमादी

[१]अहो जगतगुरु! एक सुनिए अरज हमारी ।
तुम प्रभु दीनदयाल, मैं दुखिया संसारी ॥१॥

इस भव-वन के माँहि, काल अनादि गमायो ।
भ्रम्यो चहूँ गति माँहि, सुख नहि दुख बहु पायो ॥२॥

कर्म-महारिपु जोर, एक न कान करै जी ।
मनमाने दुख देहि, काहू सौं नाहि डरै जी ॥३॥

कबहूँ इतर निगोद, कबहूँ नरक दिखावै ।
सुर-नर-पशु-गति माँहि, बहुविध नाच नचावै ॥४॥

प्रभु! इनको परसंग, भव-भव माँहि बुरो जी ।
जे दुख देखे देव! तुमसौं नाहि दुरो जी ॥५॥

एक जनम की बात, कहि न सकौं सब स्वामी! ।
तुम अनन्त परजाय, जानतु अन्तरजामी ॥६॥

मैं तो एक अनाथ, ये मिल दुष्ट घनेरे ।
कियो बहुत बेहाल, सुनियो साहिब मेरे ॥७॥

ज्ञान महानिधि लूटि, रंक निबलकरि डार्यो ।
इनही तुम मुझ माँहि, हे जिन! अन्तर पार्यो ॥८॥

१ पाठांतर : अहो जगतगुरु देव!

पाप-पुन्य मिलि दोय, पायनि बेड़ी डारी ।
तन-कारागृह माँहिं, मोहि दियो दुख भारी ॥९॥

इनको नेक बिगार, मैं कछु नाहि कियो जी ।
बिन कारन जगवन्द्य, बहुविध बैर लियो जी ॥१०॥

अब आयौ तुम पास, सुन जिन सुजस तिहारो ।
नीति-निपुन जगराय, कीजै न्याय हमारो ॥११॥

दुष्टन देहु निकार, साधन कौं रखि लीजै ।
विनवै 'भूधरदास' हे प्रभु! ढील न कीजै ॥१२॥

मङ्गलाष्टकम्

(अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः, सिद्धाश्च सिद्धीश्वरा,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः, पूज्या उपाध्यायकाः ।
श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा, रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥)

श्रीमन्नम्र - सुरासुरेन्द्र - मुकुट - प्रद्योत - रत्नप्रभा-
भास्वत्पाद-नखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः ।
ये सर्वे जिन - सिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥

सम्यग्दर्शन - बोध - वृत्तममलं, रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्रीनगराधिनाथ - जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः ।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं, चैत्यालयं श्र्यालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥२॥

नाभेयादिजिनाधिपास्त्रिभुवन-ख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वर - प्रभृतयो, ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु-प्रतिविष्णु-लाङ्गलधराः, सप्तोत्तरा विंशतिः,
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥३॥

ये सर्वौषधि-ऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगताः पञ्च ये,
ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकुशला येऽष्टौ विधाश्चारणाः।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो, ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥४॥

कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमही, वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्यतुग्जिनपतेः, सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे, नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥५॥

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः
जम्बू-शाल्मलि-चैत्य-शाखिषु तथा, वक्षार-रूप्याद्रिषु।
इष्वाकार-गिरौ च कुण्डल-नगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥६॥

(सर्पो हारलता भवत्यसिलता सत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायनं विषमपि प्रीतिं विधत्ते रिपुः।
देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः किं वा बहुब्रूमहे,
[1]धर्मादेव नभोऽपि वर्षति नगैः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥)

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां, जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो, यः केवलज्ञानभाक्।

---

१. धर्मो यस्य नभोऽपि तस्य सततं रत्नैः परैर्वर्षति (पद्मनन्दिपंचविंशतिका १९१)

यः कैवल्यपुर-प्रवेश-महिमा, सम्पादितः स्वर्गिभिः
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।।७।।

इत्थं श्रीजिन-मङ्गलाष्टकमिदं, सौभाग्य-[1]सम्पत्प्रदं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणामुषः।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनै-र्धमार्थ-कामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय-रहिता, निर्वाण-लक्ष्मीरपि ।।८।।

निम्न मन्त्र पढ़कर अमृतस्नान करें।

ॐ ह्रीं अमृते अमृतोद्‌भवे अमृतवर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय हं सं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

लघ्वभिषेक-पाठः

अभयनन्दिना संकलितम्

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वाद-नायकमनन्त-चतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघ-सुदृशां सुकृतैकहेतु-
र्जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष मयाभ्यधायि ।।१।।

श्लोकमिमं पठित्वा जिनचरणयोः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

श्रीमन्मन्दर-सुन्दरे शुचिजलैर्धौतैः सदर्भाक्षतैः,
पीठे मुक्तिवरं निधाय [2]रचितां त्वत्पाद-[3]पद्मस्रजः।
इन्द्रोऽहं निज-भूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे,
मुद्रा-कङ्कण-शेखराण्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे ।।२।।

सौगन्ध्य-संगत-मधुव्रत-झङ्कृतेन,
संवर्ण्यमानमिव गन्धमनिन्द्यमादौ।

पाठान्तर १. सम्पत्करं २. रचितं ३. पद्मस्रजा

आरोपयामि विबुधेश्वर-वृन्द-वन्द्य-
पादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानाम् ।।३।।

इति पठित्वा नवस्थानेषु तिलकन्यासः ।

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुल-प्रसूता,
नागाः प्रभूत-बल-दर्पयुता विबोधाः ।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां,
प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ।।४।।

इति पठित्वा नागसंतर्पणं भूमिशोधनम् ।

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः,
प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम् ।
अत्युद्घमुद्यतमहं जिनपादपीठं,
प्रक्षालयामि भव-सम्भव-तापहारि ।।५।।

इति पठित्वा पीठ-प्रक्षालनम् ।

श्रीशारदा-सुमुख-निर्गत-बीजवर्णं,
श्रीमङ्गलीक-वर-सर्वजनस्य नित्यम् ।
श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य विनाशविघ्नं,
श्रीकार-वर्ण-लिखितं जिन-भद्रपीठे ।।६।।

इति पठित्वा पीठे श्रीकार-लेखनम् ।

दध्युज्ज्वलाक्षत-मनोहर-पुष्प-दीपैः,
पात्रार्पितं प्रतिदिनं महतादरेण ।
त्रैलोक्य-मङ्गल-सुखालय-कामदाह-
मारार्तिकं तव विभोरवतारयामि ।।७।।

पात्रार्पितदधि-तण्डुल-पुष्पदीपैर्जिनस्यारार्तिकावतरणम् ।

यं पाण्डुकामल-शिलागतमादिदेव-
मस्नापयन् सुरवराः सुर-शैल-मूर्ध्नि ।

कल्याणमीप्सुरहमक्षत-तोय-पुष्पैः,
सम्भावयामि पुर एव तदीय-बिम्बम् ॥८॥

जलाक्षतपुष्पाणि निक्षिप्य श्रीवर्णे प्रतिमा-स्थापनम् ।

सत्पल्लवार्चित-मुखान् कलधौतरौप्य-
ताम्रारकूट-घटितान् पयसा सुपूर्णान् ।
संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्,
संस्थापयामि कलशाञ्जिनवेदिकान्ते ॥९॥

आम्रादि-पल्लव-शोभित-मुखांश्चतुःकलशान् पीठचतुःकोणेषु स्थापयेत् ।

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमल-बहुलेनामुना चन्दनेन,
श्रीदृक्-पेयैरमीभिः शुचि-सदक-चयैरुद्गमैरेभिरुद्धैः ।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मख - भवनमिमैर्दीपयद्भिः प्रदीपैः,
धूपैः प्रेयोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीपरमदेवाय श्रीअर्हत्परमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दूरावनम्र-सुरनाथ-किरीट-कोटी-
संलग्न-रत्न-किरण-च्छवि-धूसराङ्घ्रिम् ।
प्रस्वेद-ताप-मल-मुक्तमपि प्रकृष्टैर्भक्त्या
जलैर्जिनपतिं बहुधाऽभिषिञ्चे ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादिमहावीरपर्यन्त-चतुर्विंशतितीर्थंकर-परमदेवान् आद्यानाम् आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे........नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे.......मासे ....पक्षे ...... शुभदिने मुन्यार्यिका-श्रावक-श्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिञ्चे, नमः ।

इति पठित्वा जिनस्य जलाभिषेकं कृत्वा उदकचन्दनेति श्लोकं पठित्वा अर्घ्यं समर्पयेत् ।

द्रव्यैरनल्प-घनसार-चतुःसमाद्यै-
रामोद-वासित-समस्त-दिगन्तरालैः ।
मिश्रीकृतेन पयसा जिन-पुङ्गवानां,
त्रैलोक्य-पावनमहं स्नपनं करोमि ॥१२॥

जलेनाभिषिञ्चे इति स्थाने सुगन्धिजलेनेति पठित्वा स्नपनं कुर्यात् ।

इष्टैर्मनोरथ-शतैरिव भव्यपुंसां,
पूर्णैः सुवर्ण-कलशैर्निखिलावसानैः ।
संसार - सागर- विलंघन - हेतु - सेतु-
माप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेन्द्रम् ॥१३॥

उपरितनमन्त्रेणैव समस्तकलशैरभिषेकं कुर्यात् अर्घ्यं च दद्यात् ।

मुक्ति-श्री-वनिताकरोदकमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकं,
नागेन्द्र- त्रिदशेन्द्र - चक्र - पदवी - राज्याभिषेकोदकम् ।
सम्यग्ज्ञान - चरित्र - दर्शनलता - संवृद्धि - सम्पादकं,
कीर्ति-श्री-जय-साधकं तव जिन ! स्नानस्य गन्धोदकम् ॥१४॥

श्लोकमिमं पठित्वा गन्धोदकं गृह्णीयात् ।

अभिषेक-पाठः

(श्रीमाघनन्दिमुनिकृतः)

श्रीमन्नतामरशिरस्तट-रत्न-दीप्ति-
तोयावभासि-चरणाम्बुज-युग्ममीशम् ।
अर्हन्तमुन्नत-पद-प्रदमाभिनम्य,
तन्मूर्तिषूद्यदभिषेक-विधिं करिष्ये ॥१॥

अथ पौर्वाह्णिकदेव-वन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्म-क्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तव-समेतं श्रीपञ्चगुरुभक्ति-पुरस्सरं कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यह पढ़कर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

याः कृत्रिमास्तदितराः प्रतिमा जिनस्य,
संस्नापयन्ति पुरुहूत-मुखादयस्ताः।
सद्भाव-लब्धि-समयादि-निमित्तयोगात्,
तत्रैवमुज्ज्वलधिया कुसुमं क्षिपामि ॥२॥

(यह पढ़कर थाली में पुष्पाञ्जलि छोड़कर अभिषेक की प्रतिज्ञा करें।)

श्रीपीठक्लृप्ते विशदाक्षतौघैः, श्रीप्रस्तरे पूर्णशशाङ्क-कल्पे ।
श्रीवर्तके चन्द्रमसीति वार्तां, सत्यापयन्तीं श्रियमालिखामि ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकारलेखनं करोमि ।

कनकाद्रि-निभं कम्रं पावनं पुण्यकारणम् ।
स्थापयामि परं पीठं जिनस्नपनाय भक्तितः ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीपीठस्थापनं करोमि ।

(यह पढ़कर अभिषेक की थाली में सिंहासन स्थापित करें)

भृङ्गार- चामर- सुदर्पण - पीठ- कुम्भ-
ताल-ध्वजातप-निवारक-भूषिताग्रे ।
वर्धस्व - नन्द - जय - पाठपदावलीभिः,
सिंहासने जिन! भवन्तमहं श्रयामि ॥५॥

वृषभादि-सुवीरान्तान् जन्माप्तौ जिष्णुचर्चितान् ।
स्थापयाम्यभिषेकाय भक्त्या पीठे महोत्सवम् ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मतीर्थाधिनाथ! भगवन्निह पाण्डुक-शिलापीठे सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ ।

(यह पढ़कर प्रतिमाजी स्थापित करना)

श्रीतीर्थकृत्स्नपन-वर्य-विधौ सुरेन्द्रः
क्षीराब्धि-वारिभिरपूरयदुद्ध-कुम्भान् ।
तांस्तादृशानिव विभाव्य यथार्हणीयान्,
संस्थापये कुसुमचन्दनभूषिताग्रान् ॥७॥

शातकुम्भीय-कुम्भौघान् क्षीराब्धेस्तोयपूरितान् ।
स्थापयामि जिनस्नान-चन्दनादि-सुचर्चितान् ।।८।।

ॐ ह्रीं चतुःकोणेषु चतुःकलशस्थापनं करोमि ।

(यह पढ़कर चार कोनों में चार कलश स्थापित करें)

आनन्द-निर्भर-सुर-प्रमदादि-गानै-
र्वादित्र-पूर-जय-शब्द-कलप्रशस्तैः ।
उद्गीयमान-जगतीपति-कीर्तिमेनां,
पीठस्थलीं वसु-विधार्चनयोल्लसामि ।।९।।

ॐ ह्रीं स्नपनपीठस्थिताय जिनायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्म-प्रबन्ध-निगडैरपि हीनताप्तं,
ज्ञात्वापि भक्तिवशतः परमादि-देवम् ।
त्वां स्वीयकल्मषगणोन्मथनाय देव!
शुद्धोदकैरभिनयामि [1]नयार्थतत्त्वम् ।।१०।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामीति स्वाहा ।

तीर्थोत्तम-भवैर्नीरैः, क्षीर-वारिधि-रूपकैः ।
स्नपयामि सुजन्माप्तान्, जिनान् सर्वार्थसिद्धिदान् ।।११।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामीति स्वाहा ।

(यह पढ़ते हुये कलश से धारा प्रतिमा जी पर छोड़े)

सकलभुवननाथं तं जिनेन्द्रं सुरेन्द्रै-
रभिषवविधिमाप्तं स्नातकं स्नापयामः ।

पाठान्तर १. महाभिषेकम्

यदभिषवन-वारां बिन्दुरेकोऽपि नृणां,
प्रभवति हि विधातुं भुक्तिसन्मुक्तिलक्ष्मीम् ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं झं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः झं वं ह्रः यः सः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः द्रां द्रीं नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः इति बृहच्छान्ति-मन्त्रेणाभिषेकं करोमि ।

(यह पढ़कर चारों कोनों में रखे हुए चार कलशों से अभिषेक करें)

पानीय-चन्दन-सदक्षत-पुष्प-पुञ्ज-
नैवेद्य-दीपक-सुधूप-फलव्रजेन ।
कर्माष्टकक्रथन-वीरमनन्त-शक्तिं,
सम्पूजयामि महसा महसां निधानम् ॥१३॥

ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते वृषभादिवीरान्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

हे तीर्थपा निज-यशो-धवली-कृताशाः,
सिद्धौषधाश्च भव-दुःखमहागदानाम् ।
सद्भव्यहृज्जनित - पङ्क - कबन्ध - कल्पाः,
यूयं जिनाः सतत-शान्तिकरा भवन्तु ॥१४॥

(यह पढ़कर शान्ति के लिये पुष्पाञ्जलि छोड़े)

नत्वा मुहुर्निज-करैरमृतोपमेयैः, ।
स्वच्छैर्जिनेन्द्र ! तव चन्द्र-करावदातैः ।
शुद्धांशुकेन विमलेन नितान्तरम्ये, ।
देहे स्थितान् जलकणान् परिमार्जयामि ॥१५॥

ॐ ह्रीं अमलांशुकेन जिनबिम्बपरिमार्जनं करोमि ।

(यह पढ़कर शुद्ध और स्वच्छवस्त्र से प्रतिमा जी को पोछें)

स्नानं विधाय भवतोऽष्टसहस्रनाम्ना-
मुच्चारणेन मनसो वचसो विशुद्धिम् ।
जिघृक्षुरिष्टिमिन तेऽष्ट-तयीं विधातुं,
सिंहासने विधिवदत्र निवेशयामि ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीसिंहासनपीठे जिनबिम्बं स्थापयामि ।

जलगन्धाक्षतैः पुष्पैश्चरुदीपसुधूपकैः ।
फलैरर्घैर्जिनमर्चेज्जन्म-दुःखापहानये ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीपीठस्थितजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

नत्वा परीत्य निजनेत्रललाटयोश्च,
व्यातुक्षणेन हरतादघ-सञ्चयं मे ।
शुद्धोदकं जिनपते! तव पादयोगाद्,
भूयाद् भवातपहरं धृतमादरेण ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनगन्धोदकं स्वललाटे धारयामि ।

इमे नेत्रे जाते सुकृतजलसिक्ते सफलिते ।
ममेदं मानुष्यं कृतिजनगणादेयमभवत् ।
मदीयाद् भल्लाटादशुभतर-कर्माटनमभूत् ।
सदेदृक् पुण्यार्हन् मम भवतु ते पूजनविधौ ॥१९॥

(यह पढ़कर पुष्पाञ्जलि छोड़े)

जलाभिषेक-पाठ

(पं. जसहरराय कृत)

दोहा

जय जय भगवंते सदा, मंगल मूल महान ।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमौं जोरि जुगपान ॥

अडिल्ल और गीता

श्रीजिन जग में ऐसो को बुधवंत जू ।
जो तुम गुण वरननि करि पावै अंत जू ॥
इंद्रादिक सुर, चार ज्ञानधारी मुनी ।
कहि न सकै तुम गुणगण हे त्रिभुवनधनी ॥
अनुपम अमित तुम गुणनिवारिधि, ज्यों अलोकाकाश है ।
किमि धरैं हम उर कोष में सो अकथ-गुण-मणि-राश है ॥
पै निज प्रयोजन सिद्धि की तुम नाम में ही शक्ति है ।
यह चित्त में सरधान यातैं नाम ही में भक्ति है ॥१॥

ज्ञानावरणी दर्शन-आवरणी भने ।
कर्म मोहनी अंतराय चारों हने ॥
लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञान में ।
इंद्रादिक के मुकुट नये सुरथान में ॥
तब इन्द्र जान्यो अवधितैं, उठि सुरन-युत वंदत भयौ ।
तुम पुन्य को प्रेरचो हरी ह्वै मुदित धनपति सौं कह्यौ ॥
अब वेगि जाय रचौ समवसृति सफल सुरपद को करौ ।
साक्षात् श्री अरहंत के दर्शन करौ कल्मष हरौ ॥२॥

ऐसे वचन सुने सुरपति के धनपती ।
चल आयो तत् काल मोद धारै अती ॥
वीतराग छवि देखि शब्द जय जय चयौ ।
दे प्रदच्छिना बार-बार वंदत भयौ ॥
अति भक्ति-भीनो नम्र-चित ह्वै समवसरण रच्यौ सही ।
ताकी अनूपम शुभ गती को, कहन समरथ कोउ नहीं ॥
प्राकार तोरण सभामंडप कनक मणिमय छाजहीं ।
नग-जड़ित गंधकुटी मनोहर मध्यभाग विराजहीं ॥३॥

सिंहासन तामध्य बन्यौ अद्‌भुत दिपै ।
तापर वारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै ॥
तीन छत्र सिर शोभित चौंसठ चमर जी ।
महा भक्तिजुत ढोरत हैं तहां अमर जी ॥
प्रभु तरन-तारन कमल ऊपर, अन्तरीक्ष विराजिया ।
यह वीतराग दशा प्रतच्छ विलोकि भविजन सुख लिया ॥
मुनि आदि द्वादश सभा के भवि जीव मस्तक नायकैं ।
बहुभाँति बारंबार पूजैं, नमैं गुण गण गायकैं ॥४॥

परमौदारिक दिव्य देह पावन सही ।
क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नहीं ॥
जन्म जरा मृति अरति शोक विस्मय नसे ।
राग रोष निद्रा मद मोह सबै खसे ॥
श्रम बिना श्रमजलरहित पावन अमल ज्योति-स्वरूप जी ।
शरणागतनिकी अशुचिता हरि, करत विमल अनूप जी ॥
ऐसे प्रभु की शान्तमुद्रा को न्हवन जलतैं करैं ।
'जस' भक्तिवश मन उक्ति तैं हम भानु ढिग दीपक धरैं ॥५॥

तुम तौ सहज पवित्र यही निश्चय भयो ।
तुम पवित्रता हेत नहीं मज्जन ठयो ॥
मैं मलीन रागादिक मलतैं ह्वै रह्यो ।
महा मलिन तन में वसुविधिवश दुख सह्यो ॥
बीत्यो अनंतो काल यह मेरी अशुचिता ना गई ।
तिस अशुचिता-हर एक तुम ही, भरहु वांछा चित ठई ॥
अब अष्टकर्म विनाश सब मल रोष-रागादिक हरौ ।
तनरूप कारागेहतैं उद्धार शिव वासा करौ ॥६॥

मैं जानत तुम अष्टकर्म हरि शिव गये ।
आवागमन विमुक्त राग-वर्जित भये ॥
पर तथापि मेरो मनरथ पूरत सही ।
नय-प्रमानतैं जानि महा साता लही ॥
पापाचरण तजि न्हवन करता चित्त में ऐसे धरूं ।
साक्षात श्री अरहंत का मानों न्हवन परसन करूं ॥
ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबंधतैं ।
विधि अशुभ नसि शुभबंधतैं ह्वै शर्म सब विधि नासतैं ॥७॥

पावन मेरे नयन, भये तुम दरसतैं ।
पावन पानि भये तुम चरननि परसतैं ॥
पावन मन ह्वै गयो तिहारे ध्यानतैं ।
पावन रसना मानी, तुम गुण गानतैं ॥
पावन भई परजाय मेरी, भयौ मैं पूरण-धनी ।
मैं शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी, पूर्णभक्ति नहीं बनी ॥
धन धन्य ते बड़भागि भवि तिन नींव शिव-घर की धरी ।
वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुंभ भर भक्ती करी ॥८॥

विघन - सघन - वन - दाहन - दहन -प्रचंड हो ।
मोह-महा-तम-दलन प्रबल मारतण्ड हो ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश, आदि संज्ञा धरो ।
जग-विजयी जमराज नाश ताको करो ॥
आनन्द कारण दुख-निवारण, परम मंगल-मय सही ।
मोसो पतित नहिं और तुमसो, पतित-तार सुन्यौ नहीं ॥
चिंतामणी पारस कलपतरु, एक भव सुखकार ही ।
तुम भक्ति-नवका जे चढ़े, ते भये भवदधि पार ही ॥९॥

दोहा—तुम भवदधितैं तरि गये, भये निकल अविकार ।
तारतम्य इस भक्ति को, हमैं उतारो पार ॥१०॥

लघुशान्तिधारा-पाठः

ॐ नमः सिद्धेभ्यः श्रीवीतरागाय नमः। ॐ नमोऽर्हते, भगवते, श्रीमते पार्श्व-तीर्थङ्कराय, द्वादश-गणपरिवेष्टिताय, शुक्लध्यान-पवित्राय, सर्वज्ञाय, स्वयंभुवे, सिद्धाय, बुद्धाय, परमात्मने, परमसुखाय, त्रैलोक्य-महीव्याप्ताय, अनन्त-संसारचक्र-परिमर्दनाय, अनन्त-दर्शनाय, अनन्त-ज्ञानाय, अनन्त-सुखाय, अनन्त-वीर्याय, त्रैलोक्य-वशङ्कराय, सत्य-ज्ञानाय, सत्य-ब्रह्मणे, धरणेन्द्र-फणामण्डलमण्डिताय, ऋष्यार्यिका - श्रावक - श्राविका-प्रमुख-चतुस्संघोपसर्ग-विनाशनाय, घातिकर्म-विनाशनाय, अघातिकर्म-विनाशनाय। [1]अपवादं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। मृत्युं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। अतिकामं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। रतिकामं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। क्रोधं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वोपसर्गं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वविघ्नं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वभयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वराज्यभयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्व-अग्नि-भयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्व-शत्रुभयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वचौरभयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वदुष्टभयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वमृगभयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वात्मचक्रभयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वपरमन्त्रं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि।

१. अपवायं २. मारीं

सर्वशूलरोगं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वक्षयरोगं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वकुष्ठरोगं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वक्रूररोगं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वनर[२]मारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वगजमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वाश्वमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वगोमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वमहिषमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वधान्यमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्ववृक्षमारीं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वगुल्ममारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वपत्रमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वपुष्पमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वफलमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वराष्ट्रमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वदेशमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वविषमारिं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्ववेताल-शाकिनीभयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्ववेदनीयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वमोहनीयं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि। सर्वकर्माष्टकं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि।

ॐ सुदर्शन-महाराज मम चक्र-विक्रम-तेजो-बल-शौर्य-वीर्य-शांतिं कुरु कुरु। सर्व-जनानन्दनं कुरु कुरु। सर्व-भव्यानन्दनं कुरु कुरु। सर्व-गोकुलानन्दनं कुरु कुरु। सर्व-ग्राम-नगर-खेट-कर्वट-मटम्ब-पत्तन-द्रोणमुख-संवाहानन्दनं कुरु कुरु। सर्व-लोकानन्दनं कुरु कुरु। सर्व-देशानन्दनं कुरु कुरु। सर्व-यजमानानन्दनं कुरु कुरु। सर्वदुःखं हन हन, दह दह, पच पच, कुट कुट, शीघ्रं शीघ्रं।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधि-व्यसन-वर्जितम्।
अभयं क्षेम-मारोग्यं, स्वस्ति-रस्तु विधीयते॥

शिवमस्तु । कुल-गोत्रधन-धान्यं सदास्तु । चन्दप्रभ-वासुपूज्य-मल्लि-वर्धमान-पुष्पदन्त-शीतल-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-इत्येतेभ्यो नमः ।

इत्यनेन मन्त्रेण नवग्रहाणां शान्त्यर्थं गन्धोदक-धारा-वर्षणम् ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं त्रिभुवनपते शान्तिधारां करोमि नमोऽर्हते स्वाहा ।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानां ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोति शान्तिं [1]भगवज्जिनेन्द्रः ॥

अर्घ्य– उदकचन्दन .... जिननाथमहं यजे ।

शान्तिधारा-पाठः

ॐ नमः सिद्धेभ्यः श्रीवीतरागाय नमः ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं चत्तारि मंगलं अरिहंता मंगलं सिद्धा मंगलं साहू मंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं चत्तारि लोगुत्तमा अरहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो चत्तारि सरणं पव्वज्ञामि अरहंते सरणं पव्वज्ञामि सिद्धे सरणं पव्वज्ञामि साहू सरणं पव्वज्ञामि केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्ञामि ।

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः सर्वशान्तिं तुष्टिं पुष्टिं च कुरु कुरु ।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगा-पमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वक्षाम-डामर-विनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरु कुरु ।

पाठान्तर १. भगवान् जिनेन्द्रः

ॐ क्ष्रूं ह्रूं फट् किरिटि किरिटि घातय घातय परविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्रखण्डान् कुरु कुरु परमुद्रां छिन्द छिन्द परमन्त्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वः वः ह्रूं फट् सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ अ ह्रां सि ह्रीं आ ह्रूं उ ह्रौं सा ह्रः जगदापद्-विनाशनाय ह्रीं शान्तिनाथाय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय अशोकतरुसत्प्रातिहार्यमण्डिताय अशोक-तरु-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय ह्म्ल्व्र्यूं-बीजाय सर्वोपद्रवशान्ति-कराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय सुरपुष्पवृष्टि-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय सुरपुष्पवृष्टि-सत्प्रातिहार्य शोभनपदप्रदाय भ्म्ल्व्र्यूं-बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय दिव्यध्वनिसत्प्रातिहार्यमण्डिताय दिव्यध्वनि-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय म्म्ल्व्र्यूं-बीजाय सर्वोपद्रव-शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय चामरोत्तोलन-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय चामरोत्तोलन-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय र्म्ल्व्र्यूं-बीजाय सर्वोपद्रव-शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय सिंहासनसत्प्रातिहार्यमण्डिताय सिंहासन-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय घ्म्ल्व्र्यूं-बीजाय सर्वोपद्रवशान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय भामण्डलसत्प्रातिहार्यमण्डिताय भामण्डल-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय झ्म्ल्व्र्यूं-बीजाय सर्वोपद्रव-शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय दुन्दुभिसत्प्रातिहार्यमण्डिताय दुन्दुभिसत्प्रातिहार्यशोभनपदप्रदाय सूम्ल्व्र्यूं-बीजाय सर्वोपद्रव-शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय छत्रत्रयसत्प्रातिहार्यमण्डिताय छत्रत्रयसत्प्रातिहार्यशोभनपदप्रदाय खूम्ल्व्र्यूं-बीजाय सर्वोपद्रव-शान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय प्रातिहार्याष्टसहिताय बीजाष्टमण्डन-मण्डिताय सर्वविघ्नशान्तिकराय नमः सर्वशान्तिं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहिजिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पदाणुसारीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिण्णसोदाराणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो चोद्दसपुव्वीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वणपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्ञाहराणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरपरक्कमाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अघोरगुणबंभचारीणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेलोसहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विट्ठोसहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचिबलीणं सर्वशान्तिर्भवतु।
ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुसवीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमडसवीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीण-महाणसाणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणबुद्धिरिसीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो लोए सव्वसिद्धायदणाणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो भगवदो महदिमहावीरवड्ढमाणबुद्धिरिसीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

तव भक्तिप्रसादाल्लक्ष्मी-पुर-राज्यगेहपद-भ्रष्टोपद्रव-दारिद्रोद्-भवोपद्रव-स्वचक्र-परचक्रोद्भयोपद्रव-प्रचण्ड-पवनानल-जलोद्-भवोपद्रव-शाकिनी-डाकिनी भूत-पिशाच-कृतोपद्रव-दुर्भिक्षव्यापार-वृद्धिरहितोपद्रवाणां विनाशनं भवतु।

श्रीशान्तिरस्तु शिवमस्तु जयोऽस्तु नित्यमारोग्यमस्तु अस्माकं तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु समृद्धिरस्तु कल्याणमस्तु सुखमस्तु अभिवृद्धिरस्तु दीर्घायुरस्तु कुलगोत्रधनानि सदा सन्तु। सद्धर्मश्रीबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सम्पूर्णकल्याणमङ्गलरूपमोक्ष-पुरुषार्थश्चभवतु।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानां।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोति शान्तिं [1]भगवज्जिनेन्द्रः॥

पाठान्तर १. भगवान् जिनेन्द्रः

शान्तिधारा पाठ

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते । ॐ ह्रीं क्रौं मम पापं खण्डय खण्डय जहि जहि दह दह पच पच पाचय पाचय ॐ नमो अर्हं झं झ्वीं क्ष्वीं हं सं झं वं ह्वः यः सः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्ष्वीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः द्रां द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः [1]**अस्माकं** श्रीरस्तु वृद्धिरस्तु तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु शान्तिरस्तु कान्तिरस्तु कल्याणमस्तु स्वाहा । एवमस्माकं कार्यसिद्ध्यर्थं सर्वविघ्ननिवारणार्थं श्रीमद्भगवदर्हत्सर्वज्ञपरमेष्ठिपरम-पवित्राय नमो नमः । **अस्माकं** श्रीशान्तिभट्टारकपादपद्म-प्रसादात् सद्धर्मश्रीबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु सद्धर्म-स्वशिष्यपरशिष्यवर्गाः प्रसीदन्तु नः ।

ॐ वृषभादयः श्रीवर्द्धमानपर्यन्ताश्चतुर्विंशत्यर्हन्तो भगवन्तः सर्वज्ञाः परममङ्गलनामधेया **अस्माकं** इहामुत्र च सिद्धिं तन्वन्तु सद्धर्मकार्येषु इहामुत्र च सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थङ्कराय श्रीमद्रत्न-त्रयरूपाय दिव्यतेजोमूर्तये प्रभामण्डलमण्डिताय द्वादशगणसहिताय अनन्तचतुष्टयसहिताय समवसरण-केवलज्ञानलक्ष्मीशोभिताय अष्टादशदोषरहिताय षट्-

१. **अस्माकं** का अर्थ हम सब का होता है। यदि चाहे तो अस्माकं के बाद अपना नामोच्चारण कर सकते हैं।

चत्वारिंशद्गुणसंयुक्ताय परमेष्ठिपवित्राय सम्यग्ज्ञानाय स्वयम्भुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्यमहिताय अनन्तसंसारचक्रप्रमर्दनाय अनन्तज्ञान-दर्शनवीर्य-सुखास्पदाय त्रैलोक्यवशङ्कराय सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे बृहत्फणा-मण्डलमण्डिताय ऋष्यार्यिकाश्रावक-श्राविकाप्रमुखचतुःसंघोपसर्ग-विनाशनाय घातिकर्मक्षयङ्कराय अजराय अभवाय **अस्माकं** (अमुकराशिनामधेयानां) व्याधिं घ्नन्तु । श्रीजिनाभिषेकपूजनप्रसादात् **अस्माकं** सेवकानां सर्वदोषरोगशोकभयपीडाविनाशनं भवतु ।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये, नमः श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृत-क्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वक्षामडामरविनाशनाय सर्वारिष्ट-शान्तिकराय । ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः मम सर्वविघ्नशान्तिं कुरु कुरु मम तुष्टिं कुरु कुरु मम पुष्टिं कुरु कुरु स्वाहा । मम कामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । रतिकामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । बलिकामं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । क्रोधं पापं वैरं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । अग्निवायुभयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वशत्रुविघ्नं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वोपसर्गं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वविघ्नं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वराज्यभयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वचौरदुष्टभयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वसर्पवृश्चिकसिंहादिभयं छिन्धि

छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वग्रहभयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वदोषं व्याधिं डामरं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वपरमन्त्रं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वात्मघातं परघातं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वशूलरोगं कुक्षिरोगं अक्षिरोगं शिरोरोगं ज्वररोगं च छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वनरमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वगजाश्वगोमहिषाजमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वसस्यधान्यवृक्षलता-गुल्मपत्रपुष्पफलमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वराष्ट्रमारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वक्रूर-वेताल-शाकिनीडाकिनीभयानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्ववेदनीयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वमोहनीयं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वापस्मारिं छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । **अस्माकं** अशुभ-कर्म-जनितदुःखानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । दुष्टजन-कृतान् मन्त्रतन्त्रदृष्टिमुष्टिछलछिद्रदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वदुष्टदेवदानववीरनरनाहरसिंह-योगिनी-कृतदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वाष्टकुली-नागजनितविषभयानि छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि। सर्वस्थावरजङ्गमवृश्चिकसर्पादिकृतदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । सर्वसिंहाष्टापदादिकृतदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । परशत्रुकृतमारणोच्चाटनविद्वेषण-मोहनवशीकरणादिकृतदोषान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि । ॐ ह्रीं **अस्मभ्यं** चक्र-विक्रमसत्त्वतेजोबलशौर्य-

वीर्यशान्तीः पूरय पूरय । सर्वजीवानन्दनं जनानन्दनं भव्यानन्दनं गोकुलानन्दनं च कुरु कुरु । सर्वराजानन्दनं कुरु कुरु । सर्वग्राम-नगर-खेट-कर्वट-मटम्ब-पत्तन-द्रोणमुख-संवाहानन्दनं कुरु कुरु । सर्वानन्दनं कुरु कुरु स्वाहा ।

अनुष्टुप्छन्दः

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु व्याधिव्यसनवर्जितम् ।
अभयं क्षेममारोग्यं स्वस्तिरस्तु विधीयते ॥

श्रीशान्तिरस्तु । शिवमस्तु । जयोऽस्तु । नित्यमारोग्य-मस्तु । **अस्माकं** तुष्टिरस्तु । पुष्टिरस्तु । समृद्धिरस्तु । कल्याणमस्तु । सुखमस्तु । अभिवृद्धिरस्तु । दीर्घायुरस्तु कुलगोत्रधनानि सदा सन्तु । सद्धर्मश्रीबलायुरारोग्यै-श्वर्याभिवृद्धिरस्तु ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

स्रग्धराछन्दः

आयुर्वल्लीविलासं सकलसुखफलैर्द्राघयित्वाश्वनल्पं,
धीरं वीरं [1]शरीरं [2]निरुपममुपनयत्वातनोत्वच्छकीर्तिम् ।
सिद्धिं वृद्धिं समृद्धिं प्रथयतु तरणिः स्फूर्यदुच्चैः प्रतापं,
कान्तिं शान्तिं समाधिं वितरतु [3]जगतामुत्तमा शान्तिधारा ॥
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं [4]भगवज्जिनेन्द्रः ॥

इति बृहच्छान्तिधारा

पाठान्तर १. गभीरं २.निरुपममुपयन्ती तनो.. ३.भवतामुत्तमा ४. भगवान् जिनेन्द्रः

विनय पाठ

इह विधि ठाड़ो होय के, प्रथम पढ़ै जो पाठ ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ ॥१॥

अनंत चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सिरताज ।
मुक्ति-वधू के कंत तुम, तीन भुवन के राज ॥२॥

तिहुँ जग की पीड़ा हरन, भवदधि-शोषणहार ।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार ॥३॥

हरता अघ अँधियार के, करता धर्म-प्रकाश ।
थिरता-पद दातार हो धरता निज गुण रास ॥४॥

[1]धर्मामृत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप ।
तुमरे चरण-सरोज को, नावत तिहुँजग भूप ॥५॥

मैं वन्दौं जिनदेव को, करि अति निरमल भाव ।
कर्म - बन्ध के छेदने, और न कछु उपाव ॥६॥

भविजन को भव - कूप तैं, तुम ही काढ़नहार ।
दीन-दयाल अनाथ-पति, आतम गुण भंडार ॥७॥

चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्म-रज मैल ।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिवगैल ॥८॥

तुम पद-पंकज पूजतैं, विघ्न-रोग टर जाय ।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय ॥९॥

चक्री खगधर इन्द्र पद, मिलैं आप तैं आप ।
अनुक्रम करि शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप ॥१०॥

पाठान्तर १. धर्मामृत जलधर लसौं, ज्ञान भान गुणरूप

तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन ।
जन्म-जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥११॥

पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव ।
अंजन से तारे कुधी, जय जय जय जिनदेव ॥१२॥

थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेव ।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव ॥१३॥

राग सहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव ।
वीतराग भेट्यो अबैं, मेटो राग कुटेव ॥१४॥

कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यञ्च अज्ञान ।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान ॥१५॥

तुमको पूजैं सुरपति, अहिपति नरपति देव ।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव ॥१६॥

अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार ।
मैं डूबत भव सिन्धु में, खेव लगाओ पार ॥१७॥

इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान ।
अपनो विरद निहारिकैं, कीजे आप समान ॥१८॥

तुमरी नेक सुदृष्टि तैं, जग उतरत है पार ।
हा हा डूब्यो जात हों, नेक निहार निकार ॥१९॥

जो मैं कह हूँ और सौं, तो न मिटैं उरभार ।
मेरी तो तोसों बनी, यातैं करौं पुकार ॥२०॥

वंदो पाँचों परमगुरु, सुरगुरु वंदत जास ।
विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश ॥२१॥

चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय ।
शिवमग साधक साधु नमि,रच्यो पाठ सुखदाय ॥२२॥
मंगल मूर्ति परम पद, पंच धरो नित ध्यान ।
हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान ॥२३॥
मंगल जिनवर पद नमों, मंगल अर्हंत देव ।
मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दों स्वयमेव ॥२४॥
मंगल आचारज मुनि, मंगल गुरु उवझाय ।
सर्व साधु मंगल करो, वन्दों मन-वच-काय ॥२५॥
मंगल सरस्वती मात का, मंगल जिनवर धर्म ।
मंगलमय मंगल करो, हरो असाता कर्म ॥२६॥
या विधि मंगल से सदा जग में मंगल होत ।
मंगल ''नाथूराम'' यह भव सागर दृढ़ पोत ॥२७॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

नित्य-पूजा-पीठिका

ॐ जय जय जय नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, नमोऽस्तु

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ॥

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः

[१]चत्तारि मंगलं अरिहंता मंगलं सिद्धा मंगलं साहू मंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा अरिहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि

१. संशोधित एवं प्रचलित पाठ ।

अरिहंते सरणं पव्वज्जामि सिद्धे सरणं पव्वज्जामि साहू सरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पञ्च-नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥

अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥२॥

अपराजितमंत्रोऽयं, सर्व-विघ्नविनाशनः ।
मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः ॥३॥

एसो पंच-णमोयारो, सव्वपावप्पणासणो ।
मङ्गलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥४॥

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥५॥

कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनीभूतपन्नगाः ।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥७॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

पंचकल्याणक का अर्घ

उदकचंदन[1]तण्डुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगान-रवाकुले, जिनगृहे कल्याणमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं भगवतो गर्भजन्मतपोज्ञाननिर्वाणकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति

१. प्रचलित पाठ 'तन्दुल'

पंचपरमेष्ठी का अर्घ

उदकचंदनतण्डुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गल-गानरवाकुले, जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनसहस्रनाम का अर्घ

उदकचंदनतण्डुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगान - रवाकुले, जिनगृहे जिननाम यजामहे ॥
ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिनाष्टोत्तरसहस्रनामभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनवाणी का अर्घ

उदकचंदनतण्डुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगान-रवाकुले, जिनगृहे जिनसूत्रमहं यजे ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्ग इत्यादि-
तत्त्वार्थसूत्रदशाध्याय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूजा-प्रतिज्ञा-पाठः

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्,
जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥१॥
स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय,
स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाशसहजोर्ज्जितदृङ्मयाय,
स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुत-वैभवाय ॥२॥
स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय ॥३॥

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं,
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः ।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्,
भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥४॥
अर्हन्! पुराणपुरुषोत्तम! पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव ।
अस्मिञ्ज्वलद्विमल - केवलबोधवह्नौ,
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥५॥

ॐ विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।

स्वस्तिमंगलपाठः

श्रीवृषभो नः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीअजितः	।
श्रीसंभवः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीअभिनन्दनः	।
श्रीसुमतिः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीपद्मप्रभः	।
श्रीसुपार्श्वः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीचन्द्रप्रभः	।
श्रीपुष्पदंतः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीशीतलः	।
श्रीश्रेयान्	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीवासुपूज्यः	।
श्रीविमलः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीअनन्तः	।
श्रीधर्मः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीशान्तिः	।
श्रीकुन्थुः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीअरनाथः	।
श्रीमल्लिः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीमुनिसुव्रतः	।
श्रीनमिः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीनेमिनाथः	।
श्रीपार्श्वः	स्वस्ति	स्वस्ति	श्रीवर्द्धमानः	।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

परमर्षि-स्वस्ति-मङ्गल-पाठः

नित्याप्रकंपाद्भुतकेवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः ।
दिव्यावधि-ज्ञानबलप्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।१।।

कोष्ठस्थ-धान्योपम-मेकबीजं, संभिन्न-संश्रोतृपदानुसारि ।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।२।।

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहंतः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।३।।

प्रज्ञा- प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येक-बुद्धाः दशसर्वपूर्वैः ।
प्रवादिनोऽष्टाङ्गनिमित्तविज्ञाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।४।।

जंघानलश्रेणि - फलांबु-तंतु - प्रसून - बीजाङ्कुर - चारणाह्वाः ।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।५।।

अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि,लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनो-वपु-र्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।६।।

सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं, प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।७।।

दीप्तं च तप्तं च [१]महत्तथोग्रं, घोरं तपो घोर-पराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापरं घोरगुणं चरंतः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।८।।

आमर्ष-सर्वौषधयस्तथाशीर्विषाविषा दृष्टिविषाविषाश्च ।
[२]सखेलविड्जल्लमलौषधीशाः,स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।९।।

क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंतो, मधुस्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः ।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।१०।।

इति परमर्षिस्वस्तिमङ्गलविधानं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

---

१. तथा महोग्रं २. सखिल्ल-

नित्य पूजाएँ

देव-शास्त्र-गुरु पूजा

पं. द्यानतराय

अडिल्ल

प्रथम देव अरहंत सुश्रुत सिद्धान्त जू,
गुरु निरग्रंथ महंत मुकतिपुर-पंथ जू ।
तीन रतन जगमाँहिं सु ये भवि ध्याइये,
तिनकी भक्ति प्रसाद परम पद पाइये ॥

दोहा

पूजों पद अरहंत के, पूजों गुरुपद सार ।
पूजों देवी सरस्वती, नित प्रति अष्ट प्रकार ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (गीता छन्द)

सुरपति उरग नरनाथ तिन-करि, वन्दनीक सुपदप्रभा,
अति शोभनीक सुवरण उज्ज्वल, देख छवि मोहित सभा ।
वर नीर क्षीर-समुद्र घट भरि, अग्र तसु बहु विधि नचूँ,
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥

दोहा

मलिन वस्तु हर लेत सब जलस्वभाव मल छीन ।
जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति

जे त्रिजग - उदर मँझार प्रानी, तपत अति दुद्धर खरे,
तिन अहित-हरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे ।

तसु भ्रमर-लोभित घ्राण पावन, सरस चन्दन घसि सचूँ,
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥
चंदन शीतलता करै तपत वस्तु परवीन ।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति

यह भव-समुद्र अपार तारण, के निमित सुविधि ठई ।
अति दृढ़परम-पावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥
उज्ज्वल अखंडित सालि तंदुल, पुंज धरि त्रयगुण जचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥
तंदुल सालि सुगंध अति, परम अखंडित बीन ।
जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

जे विनयवंत सुभव्य- उर- अंबुज प्रकाशन भान हैं ।
जे एक मुख चारित्र भाषत, त्रिजग माहिं प्रधान हैं ॥
लहि कुन्द-कमलादिक पहुप, भव-भव कुवेदन सों बचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥
विविधभाँति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।
जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति

अति सबल मद - कंदर्प जाको, क्षुधा - उरग अमान हैं ।
दुस्सह भयानक तासु नाशन को सुगरुड़ समान हैं ॥
उत्तम छहों रस युक्त नित, नैवेद्य करि घृत में पचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥

नानाविधि संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन ।
जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति

जे त्रिजग- उद्यम नाश कीने, मोह-तिमिर महाबली ।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप - प्रकाशजोति प्रभावली ॥
इह भाँति दीप प्रजाल कंचन, के सुभाजन में खचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥
स्वपरप्रकाशक ज्योति अति, दीपक तमकरि हीन ।
जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

जो कर्म-ईंधन दहन अग्नि-समूह सम उद्धत लसै ।
वर धूप तासु सुगंधिताकरि, सकल परिमलता हँसै ॥
इह भाँति धूप चढ़ाय नित भव-ज्वलन माँहिं नहीं पचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥
अग्निमाँहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन ।
जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

लोचन सुरसना घ्राण उर, उत्साह के करतार हैं ।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुणसार हैं ॥
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, परम अमृतरस सचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥
जे प्रधान फलफल विषैं, पंचकरण रस-लीन ।
जासों पूजों परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल परम उज्ज्वल गन्ध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूँ ।
वर धूप निर्मल फल विविध बहु जनम के पातक हरूँ ॥
इह भाँति अर्घ चढ़ाय नित भवि करत शिवपंकति मचूँ ।
अरहंत श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ॥

(आठों दुखदानी, आठनिशानी, तुम ढिग आनी वारन हो,
दीनन निस्तारन अधम उधारन 'द्यानत' तारन कारन हो ।
प्रभु अन्तरजामी, त्रिभुवननामी, सब के स्वामी दोष हरो,
यह अरज सुनीजै ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया करो ॥)

वसुविधि अर्घ संजोय कै, अति उछाह मन कीन ।
जासों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा—देव-शास्त्र-गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार ।
भिन्न भिन्न कहुँ आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥

पद्धरि

देव का स्वरूप

[1]चउकर्म तिरेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश दोषराशि ।
जे परम सुगुण हैं अनंतधीर, कहवत के छ्यालिस गुणगंभीर ॥१॥

शुभ समवसरण शोभा अपार, शत-इन्द्र नमत कर सीस धार ।
देवाधिदेव अरहन्त देव, वन्दों मन वच तन कर सु-सेव ॥२॥

---

१. जीवविपाकी - ज्ञानावरण ५ + दर्शनावरण ९ + मोहनीय २८ + अंतराय ५ + गति २ (नरकगति, तिर्यग्गति) + एकेन्द्रिय आदि ४ जातियाँ + सूक्ष्म, स्थावर । पुद्गलविपाकी - आतप, उद्योत, साधारण । क्षेत्रविपाकी - नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यग्गत्यानुपूर्वी । भवविपाकी - नरकायु, तिर्यञ्चायु और देवायु = ६३ । 'चउकर्म तिरेसठ' की जगह 'कर्मनकी त्रेसठ' ऐसा पाठ भी मिलता है ।

शास्त्र का स्वरूप

जिनकी धुनि ह्वै ओंकाररूप, निरअक्षरमय महिमा अनूप ।
दशअष्ट महाभाषा समेत, लघु भाषा सात शतक सुचेत ॥३॥
सो स्याद्वादमय सप्तभंग, गणधर गूँथे बारह सुअंग ।
रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमो बहु प्रीति ल्याय ॥४॥

गुरु का स्वरूप

गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रत्नत्रयनिधि अगाध ।
संसार देह वैराग्य धार, निरवांछि तपैं शिव-पद निहार ॥५॥
गुण छत्तिस पच्चिस आठबीस, भव तारनतरन जिहाज ईश ।
गुरु की महिमा वरनी न जाय, गुरुनाम जपो मन-वचन-काय ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा

कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै ।
'द्यानत' सरधावान, अजर-अमरपद भोगवै ॥७॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(मिथ्यात्व दलन सिद्धान्त साधक मुक्ति मारग जानिए ।
करनी अकरनी सुगति दुर्गति, पुण्य पाप वखानिए ॥
संसार सागर तरण तारण, गुरु जिहाज विशेखिए ।
जग मांहि गुरुसम कह 'बनारसि' और कोउ न पेखिए ॥)

दोहा

(श्रीजिनके परसाद तैं सुखी रहैं सब जीव ।
यातैं तन मन वचन तैं सेवो भव्य सदीव ॥)

बीस तीर्थंकर पूजा

पं. द्यानतराय

दोहा—दीप अढ़ाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस ।
तिन सबकी पूजा करूँ, मन वच तन धरि शीस ॥

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकराः ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकराः ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकराः ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

अष्टक (रोला)

इन्द्र फणीन्द्र नरेन्द्र वंद्य पद निर्मल धारी ।
शोभनीक संसार सार गुण हैं अविकारी ॥

दोहा

क्षीरोदधि सम नीर सौं पूजों तृषा निवार ।
सीमंधर जिन आदि दे बीस विदेह मँझार ॥
(श्री जिनराज हो भव तारण तरण जिहाज ॥)[१]

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं

तीन लोक के जीव पाप-आताप सताये ।
तिनको साता दाता शीतल वचन सुहाये ॥
बावन चन्दन सौं जजूँ भ्रमन तपन निरवार ॥ सीमं०॥

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं

यह संसार अपार महासागर जिन स्वामी ।
तातैं तारे बड़ी भक्ति नौका जग नामी ॥
तंदुल अमल सुगंध सौं पूजों तुम गुणसार ॥ सीमं०॥

ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्

---

१. यह भक्तिवश जोड़ा है ।

भविक सरोज विकाश निंद्यतमहर रवि से हो ।
जतिश्रावक आचार कथन को तुम ही बड़े हो ॥
फूल सुवास अनेक सौं पूजों मदनप्रहार ॥ सीमं०॥
ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि
काम नाग विषधाम नाश को गरुड़ कहे हो ।
क्षुधा महादव ज्वाल तास को मेघ लहे हो ॥
नेवज बहुघृत मिष्ट सौं पूजों भूखविडार ॥ सीमं०॥
ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं
उद्यम होन न देत सर्व जग मांहिं भर्यो है ।
मोह महातम घोर नाश परकाश कर्यो है ॥
पूजों दीप प्रकाश सौं ज्ञानज्योति करतार ॥ सीमं०॥
ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं
कर्म आठ सब काठ भार विस्तार निहारा ।
ध्यान अगनि कर प्रगट सरब कीनो निरवारा ॥
धूप अनूपम खेवतें दुःख जलै निरधार ॥ सीमं०॥
ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति
मिथ्यावादी दुष्ट [१]लोभहंकार भरे हैं ।
सबको छिन में जीत जैन के मेरु खड़े हैं ।
फल अति उत्तम सौं जजों वांछित फल दातार ॥ सीमं०॥
ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति
जल फल आठों दर्व अरघ कर प्रीति धरी है ।
गणधर इन्द्रनिहूं तैं थुति पूरी न करी है ॥
'द्यानत' सेवक जानके जग तैं लेहु निकार ॥ सीमं०॥
ॐ ह्रीं श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

१. लोभऽहंकार

जयमाला

सोरठा

ज्ञान सुधाकर चन्द, भविक-खेत हित मेघ हो ।
भ्रम-तम-भान अमन्द तीर्थंकर बीसों नमों ॥

चौपाई

सीमंधर सीमंधर स्वामी, जुगमन्धर जुगमन्धर नामी ।
बाहु बाहु जिन जगजन तारे, करम सुबाहु बाहुबल दारे ॥१॥

जात सुजातं केवलज्ञानं, स्वयंप्रभु प्रभु स्वयं प्रधानं ।
ऋषभानन ऋषिभानन दोषं, अनन्तवीरज वीरज कोषं ॥२॥

सौरीप्रभ सौरी गुणमालं, सुगुण विशाल विशाल दयालं ।
वज्रधार भवगिरि वज्जर हैं, चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥३॥

भद्रबाहु भद्रनि के करता, श्रीभुजंग भुजंगम हरता ।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं, नेमि प्रभु जस नेमि विराजैं ॥४॥

वीरसेन वीरं जग जानै, महाभद्र महाभद्र बखानै ।
नमों जसोधर जसधर कारी, नमों अजित वीरज बलधारी ॥५॥

धनुष पाँचसै काय विराजैं, आयु कोडि पूरव सब छाजैं ।
समवसरण शोभित जिनराजा, भवजल तारनतरन जिहाजा ॥६॥

सम्यक् रत्नत्रय निधि दानी, लोकालोक प्रकाशक ज्ञानी ।
शतइन्द्रनि कर वंदित सोहैं, सुर नर पशु सबके मन मोहैं ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीसीमन्धरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति

दोहा

तुमको पूजैं वंदना, करैं धन्य नर सोय ।
'द्यानत' सरधा मन धरै, सो भी धर्मी होय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

कृत्रिमाकृत्रिम जिनबिम्बार्घ

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान्,
वन्दे भावन-व्यन्तरान् द्युतिवरान् कल्पामरावासगान् ॥
सद्-गन्धाक्षत-पुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलै-
र्नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा, दुष्कर्मणां शान्तये ॥
(सात करोड़ बहत्तर लाख, सु-भवन जिन पाताल में ।
मध्यलोक में चारसौ अट्ठावन, जजों अघमल टाल के ॥
अब लख चौरासी सहस सत्याणव, अधिक तेईस रु कहे ।
बिन संख ज्योतिष व्यन्तरालय,सब जजों मन वच ठहे ॥)

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

लघु चैत्यभक्ति

इन्द्रवज्रा

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु, नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके, सर्वाणि वन्दे जिनपुङ्गवानाम् ॥

मालिनी

अवनितल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानाम् ।
इह मनुज-कृतानां देवराजार्चितानां
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥

शार्दूलविक्रीडितम्

जम्बूधातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्रत्रये ये भवा-
श्चन्द्राम्भोजशिखण्डिकण्ठकनक-प्रावृड्घनाभाजिनाः ।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा, [1]दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः,
भूतानागत-वर्तमानसमये, तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥

---

१. दग्धार्ध

स्रग्धरा

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ, रजतगिरिवरे, शाल्मलौ जम्बूवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे, रतिकर - रुचके, कुण्डले मानुषाङ्के ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ, दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले, यानि चैत्यालयानि ॥

शार्दूलविक्रीडित

द्वौ कुन्देन्दु-तुषारहार-धवलौ, द्वाविन्द्रनील-प्रभौ,
द्वौ बन्धूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ, द्वौ च प्रियङ्गुप्रभौ ।
शेषाः षोडश-जन्ममृत्युरहिताः संतप्तहेम-प्रभा-
स्ते सञ्ज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥

अंचलिका

इच्छामि भंते! चेइयभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासिय त्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति अहमवि इह संतो तत्थ संताइं णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

अथ पौर्वाह्णिक-(माध्याह्निक/आपराह्णिक)-देववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीपञ्चमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् । तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ॥

सिद्धपूजा (द्रव्याष्टक)

ऊर्ध्वाधो-रयुतं सबिन्दु-सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं,
वर्गापूरित-दिग्गताम्बुजदलं तत्सन्धि-तत्त्वान्वितम् ।
अन्तःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितं,
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अनुष्टुप्– निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्तमनुपद्रवम् ॥

सिद्धयन्त्रस्थापनम्

वसन्ततिलका

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं,
[1]हान्यादिभावरहितं भववीत-कायम् ।
रेवापगावरसरोयमुनोद्भवानां,
नीरैर्यजे कलशगैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं,
सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतम् ।
सौरभ्यवासित-भुवं हरि-चन्दनानां,
गन्धैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाठान्तर १. हीनादि-

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं,
सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् ।
सौगन्ध्यशालिवन-शालिवराक्षतानां,
पुञ्जैर्यजे शशि-निभैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

नित्यं स्वदेह-परिमाणमनादिसंज्ञं,
द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।
मन्दारकुन्द-कमलादि-वनस्पतीनां,
पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

ऊर्ध्वस्वभाव-गमनं सुमनोव्यपेतं,
ब्रह्मादि-बीज-सहितं गगनावभासम् ।
क्षीरान्न-[1]प्राज्य-वटकै रसपूर्णगर्भै-
र्नित्यं यजे चरुवरैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पश्यन्समस्त-भुवनं युगपन्नितान्तं,
त्रैकाल्य-वस्तु-विषये निविड-प्रदीपम् ।
कर्पूर-वर्ति-बहुभिः कनकावदातैर्दीपै-
र्यजे रुचिवरैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाठान्तर १. साज्य-

आतङ्क-शोक-भय-रोग-मद-प्रशान्तं,
निर्द्वन्द्व-भाव-धरणं महिमा-निवेशम् ।
सद्द्रव्य-गन्ध-घनसार-विमिश्रितानां,
धूपैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धासुराधिपति - यक्ष - नरेन्द्र - चक्रै-
र्ध्येयं शिवं सकल - भव्य - जनैः सुवन्द्यम् ।
नारिङ्ग - पूग - कदलीफल-नारिकेलैः,
सोऽहं यजे वरफलैर्वर - सिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षपदप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

गन्धाढ्यं सुपयो-मधुव्रत-गणैः सङ्गं वरं चन्दनं,
पुष्पौघं विमलं सदक्षत-चयं रम्यं चरुं दीपकम् ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये,
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं,
सूक्ष्म-स्वभाव-परमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मौघ-कक्ष-दहनं सुख-सस्य-बीजं,
वन्दे सदा निरुपमं वर-सिद्ध-चक्रम् ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शार्दूलविक्रीडितम्

त्रैलोक्येश्वर-वन्दनीय-चरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं,
यानाराध्य निरुद्ध-चण्ड-मनसः सन्तोऽपि तीर्थङ्कराः ।
सत्सम्यक्त्व - विबोध - वीर्य - विशदाव्याबाधताद्यैर्गुणै-
र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जयमाला

विराग सनातन शान्त निरंश, निरामय निर्भय निर्मल-हंस ।
सुधाम विबोध-निधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥१॥

विदूरित-संसृति-भाव निरंग, समामृत-पूरित देव विसंग ।
अबन्ध कषाय-विहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥२॥

निवारित-दुष्कृतकर्मविपाश, सदामल-केवल-केलिनिवास ।
भवोदधि-पारग शान्त विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥३॥

अनन्त-सुखामृतसागर धीर, कलंक-रजो-मल-भूरि-समीर ।
विखण्डित-काम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥४॥

विकारविवर्जित तर्जितशोक, विबोध सुनेत्र विलोकितलोक ।
विहार विराव विरङ्ग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥५॥

रजोमल-खेद-विमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ।
सुदर्शन-राजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥६॥

नरामर-वन्दित निर्मलभाव, अनन्त-मुनीश्वर-पूज्य विहाव ।
सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥७॥

विदम्भ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परात्पर शंकर सार वितन्द्र ।
विकोप विरूप विशंक विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥८॥

जरा-मरणोज्झित वीतविहार, विचिन्तित निर्मल निरहंकार ।
अचिन्त्य-चरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥९॥

विवर्ण विगन्ध विमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ ।
अनाकुल केवल सार्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥१०॥

ॐ ह्रीं क्षायिकसम्यक्त्व-अनन्तज्ञान-अनन्तदर्शन-अनन्तवीर्य-अगुरुलघुत्व-अवगाहनत्व-सूक्ष्मत्व-निराबाधत्वगुणसम्पन्न-श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मालिनी

असम-समयसारं चारु-चैतन्य-चिह्नं,
पर-परिणति-मुक्तं पद्मनन्दीन्द्र-वन्द्यम् ।
निखिल-गुण-निकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं,
स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥११॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

सिद्धपूजा (भावाष्टक)

निज-मनो-मणि-भाजनभारया शम-रसैक-सुधारसधारया ।
सकल-बोध-कला-रमणीयकं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सहज-कर्म-कलङ्क-विनाशनै-रमलभाव-सुवासित-चन्दनैः ।
अनुपमान-गुणावलि-नायकं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

सहज-भाव-सुनिर्मलतण्डुलैः सकलदोष-[1]विलासविशोधनैः ।
अनुपरोध-सुबोध-निधानकं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्

समयसार-सुपुष्प-सुमालया सहज-[2]कर्मक-रेणु-विशोधया ।
परम-योग-बलेन वशीकृतं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि

अकृतबोध-सुदिव्य-निवेद्यकैर्विहित-जातिजरामरणान्तकैः ।
निरवधि-प्रचुरात्म-गुणालयं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं॰

सहज-रत्नरुचि-प्रतिदीपकैः रुचि-विभूति-तमःप्रविनाशनैः ।
निरवधि-स्वविकास-विकासनं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं

निज-गुणाक्षय-रूप-सुधूपनैः स्वगुण[3]घातिमलप्रविनाशनैः ।
विशद-बोध-सुदीर्घ-सुखात्मकं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं

परम-भावफलावलि-सम्पदा सहजभाव-[4]कुभावविशोधया ।
निज-गुणस्फुरणात्म-निरंजनं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं

नेत्रोन्मीलि-विकास-भाव-निवहैरत्यन्त-बोधाय वै,
वार्गन्धाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः सद्दीप-धूपैः फलैः ।
यश्चिन्तामणि-शुद्ध-भाव-परम-ज्ञानात्मकैरर्चयेत्,
सिद्धं स्वादु-मगाध-बोधमचलं संचर्चयामो वयम् ॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घ्यं

पाठान्तर १. विशाल २. कर्मकरेण ३. घात ४. विभाव

सिद्ध पूजा (भाषा)

(पं. द्यानतराय)

दोहा

परमब्रह्म परमातमा, परमज्योति [1]परमेश ।
परम निरंजन परम शिव, नमो [2]परम सिद्धेश ।।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(सोरठा)

मोह तृषा दुख देइ, सो तुमने जीती प्रभो ।
जल-सौं पूजों नेह, मेरा रोग मिटाइयो ।।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम भव-आतप माहिं, तुम न्यारे संसार तैं ।
कीजे शीतल छाँहि, चन्दन सों पूजा करों ।।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति० ।

हम औगुन समुदाय, तुम अक्षय सब गुण भरे ।
पूजों अक्षत ल्याय, दोष नाश गुण कीजिए ।।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्

काम अग्नि है मोहि, निश्चय शील स्वभाव तुम ।
पुष्प चढ़ाऊँ तोहि, सेवक की पावक हरो ।।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं

पाठान्तर-१. परमीश २. सिद्ध जगदीश

हमें क्षुधा-दुःख भूर, ज्ञान-खड्ग सों तुम हती ।
मेरी बाधा चूर, नेवज सों पूजों तुम्हें ।।
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति॰

मोह-तिमिर हम पास, तुम पै चेतन ज्योति है ।
पूजों दीप-प्रकाश, मेरो तम निरवारियो ।।
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति॰

रुल्यो कर्म वन-जाल, मुक्ति माहिं तुम सुख करो ।
खेऊँ धूप रसाल, अष्ट कर्म-वन जारियो ।।
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपमेष्ठिने अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अन्तराय दुखकार, तुम अनन्त थिरता लिये ।
पूजों फल धर सार, विघन टार शिवफल करो ।।
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

हममें आठों दोष, जजों अरघ ले सिद्ध जी ।
वसु गुण दीजे [१]मोष, 'द्यानत' कर जोड़े खड़ो ।।
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आठ कर्म दृढ़ बन्ध-सों, नख-शिख बन्धो जहान ।
बन्ध रहित वसु गुण सहित, नमूँ सिद्ध भगवान ।।

---

१. मोष=मोक्ष

पद्धरि छन्द

सुख सम्यक्-दर्शन ज्ञानधरं, बलनन्त अगुरुलघु-बाधहरं ।
अवगाह अमूरत नायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

अबलं अचलं अतुलं अटलं, अतलं अवचं अकुलं अमलं ।
अजरं अमरं जगज्ञायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

निरभोग स्वभोग अरोग परं, निरयोग असोग वियोगहरं ।
अरमं स्वरमं दुखघायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

सब कर्म कलंक अटंक अजं, नरनाथ सुरेश समूह जजं ।
मुनि ध्यावत सज्जन-नायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

अविरुद्ध विशुद्ध प्रबुद्धमयं, सब जानत लोक अलोक चयं ।
परमं धरमं शिवलायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

निरभेद अखेद अछेद लहा, निरद्वन्द सुछन्द अछन्द महा ।
अक्षुधा अतृषा अकषायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

असमं अजमं अतमं लहियं, अगमं सुखमं सुखदं गहियं ।
यमराज की चोट बचायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

निरधाम सुधाम अकामयुतं, अविहार निहार-अहारच्युतं ।
भवनाशन तीक्षण सायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

निरवर्ण अकर्ण अशर्ण नतं, अगतिं अमितं अक्षतं अरतं ।
अस उत्तम भाव सुपायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

निररंग असंग अभंग सदा, अतयं अचयं अवयं सुखदा ।
अमदं अगदं गुण ज्ञायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

अविषाद अनादि अवाद परं, भगवन्त अनन्त महन्त तरं ।
तुम ध्येय महामुनि ध्यायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

निरनेह अदेह अगेह सुखी, निरमोह अकोह अलोह तुखी[1] ।
तिहुँ लोक के नायक पायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

पन्द्रह सौ भाग महा निवसैं, नव लाख के भाग जघन्य लसैं ।
तनुवात के अन्त सहायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-अनन्तदर्शन-वीर्य-सूक्ष्मत्व-अवगाहनत्व-अगुरुलघुत्व-अव्याबाधत्व-गुणविभूषित-सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा

बहुविधि नाम वखान, परमेश्वर सबही भजें ।
ज्यों का त्यों सरधान, 'द्यानत' सेवें ते बढ़े ।।

अडिल्ल छन्द

(अविनाशी अविकार परम रसधाम हो,
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो,
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ।।
ध्यान अगनि करि कर्म-कलंक सबै दहे,
नित्य निरंजन देव सरूपी हो रहे ।
ज्ञायक के आकार ममत्व निवारिके,
सो परमातम सिद्ध नमूँ सिर नायके ।।

दोहा

अविचल ज्ञान-प्रकाशतें, गुन अनन्त की खान ।
ध्यान धरै सो पाइये, परम सिद्ध भगवान ।।)

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

---

१. तुखी = सन्तुष्ट

सिद्धपूजा (भाषा)

(पं. हीराचन्द)

अडिल्ल छन्द

अष्ट करम करि नष्ट अष्ट गुण पायकैं,
अष्टम वसुधा माँहिं विराजे जायकैं ।
ऐसे सिद्ध अनंत महंत मनायकैं,
संवौषट् आह्वान करूँ हरषायकैं ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (छन्द त्रिभंगी)

हिमवनगत गंगा आदि अभंगा, तीर्थ उतंगा सरवंगा ।
आनिय सुरसंगा सलिल सुरंगा, करि मन चंगा भरि भृंगा ॥
त्रिभुवन के स्वामी, त्रिभुवननामी, अंतरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी, निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी शिरनामी ॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

हरिचंदन लायो कपूर मिलायो, बहु महकायो मन भायो ।
जल संग घसायो रंग सुहायो, चरन चढ़ायो हरषायो ॥ त्रिभु०

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

तंदुल उजियारे शशि-दुति टारे, कोमल प्यारे अनियारे ।
तुष खंड निकारे जल सु पखारे, पुंज तुम्हारे ढिग धारे ॥ त्रिभु०

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरतरु की बारी, प्रीतिविहारी, क्यारी प्यारी गुलजारी ।
भरि कंचन थारी माल सँवारी, तुम पद धारी अतिसारी ॥ त्रिभु०

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान निवाजे, स्वाद विराजे, अमृत लाजे क्षुत भाजे ।
बहु मोदक छाजे, घेवर खाजे, पूजन काजे करि ताजे ॥ त्रिभु०

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

आपापर भासै ज्ञान प्रकाशै, चित्त विकासै तम नासै ।
ऐसे विध खासे दीप उजासे, धरि तुम पासे उल्लासे ॥ त्रिभु०

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

चुंबत अलिमाला गंध विशाला, चन्दन काला गरुवाला ।
तस चूर्ण रसाला करि ततकाला, अगनी ज्वाला में डाला ॥ त्रिभु०

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल अतिभारा, पिस्ता प्यारा, दाख छुहारा सहकारा ।
रितु रितु का न्यारा सत्फल सारा, अपरंपारा लै धारा ॥ त्रिभु०

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल वसु वृंदा अरघ अमंदा, जजत अनंदा के कंदा ।
मेटो भवफंदा सब दुखदंदा, 'हीराचंदा' तुम बंदा ॥ त्रिभु०

ॐ ह्रीं श्रीअनाहत-पराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

ध्यान दहन विधिदारु दहि, पायो पद निरवान ।
पंचभाव-जुत थिर थये, नमौं सिद्ध भगवान ।।१।।

तोटक छन्द

सुख सम्यकदर्शन ज्ञान लहा, अगुरुलघु सूक्षम वीर्य महा ।
अवगाह अबाध अघायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।२।।

असुरेन्द्र सुरेन्द्र नरेन्द्र जजैं, भुवनेन्द्र खगेन्द्र गणेन्द्र भजैं ।
जर-जामन-मर्ण मिटायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।३।।

अमलं अचलं अकलं अकुलं, अछलं असलं अरलं अतुलं ।
अबलं सरलं शिवनायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।४।।

अजरं अमरं अघरं सुधरं, अडरं अहरं अमरं अधरं ।
अपरं असरं सब लायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो।।५।।

वृषवृन्द अमन्द न निन्द लहैं, निरदन्द अफन्द सुछन्द रहैं ।
नित आनन्दवृन्द बधायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।६।।

भगवन्त सुसन्त अनन्तगुणी, जयवन्त महन्त नमन्त मुनी ।
जगजन्तु तणों अघघायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।७।।

अकलंक अटंक शुभंकर हो, निरडंक निशंक शिवंकर हो ।
अभयंकर शंकर क्षायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।८।।

अतरंग अरंग असंग सदा, भवभंग अभंग उतंग सदा ।
सरवंग अनंग-नसायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।९।।

ब्रह्मण्ड जु मण्डलमण्डन हो, तिहुँ दण्ड प्रचण्ड विहण्डन हो ।
चिदपिण्ड अखण्ड अकायक हो,सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ।।१०।।

निरभोग सुभोग वियोग हरै, निरजोग अरोग अशोग धरै ।
भ्रमभंजन तीक्षन सायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥११॥

जय लक्ष्य अलक्ष्य सुलक्षक हो, जय दक्षक पक्षक रक्षक हो ।
पण अक्ष प्रतक्ष खपायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१२॥

अप्रमाद अनाद सुस्वाद-रता, उनमाद-विवाद-विषाद-हता ।
समता रमता अकषायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१३॥

निरभेद अखेद अछेद सही, निरवेद निवेदन वेद नहीं ।
सब लोकअलोकके ज्ञायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१४॥

अमलीन अदीन अरीन हने, निज लीन अधीन अछीन बने ।
जम कौ घन घात बचायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो॥१५॥

न अहार निहार विहार कबै, अविकार अपार उदार सबै ।
जग जीवन के मन भायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१६॥

असमन्ध अधन्द अरन्ध भये, निरबन्ध अखन्द अगन्ध ठये ।
अमनं अतनं निरवायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१७॥

निरवर्ण अकर्ण उधर्ण बली, दुखहर्ण अशर्ण सुशर्ण भली ।
बलि मोह की फौज भगायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१८॥

अविरुद्ध अक्रुद्ध अजुद्ध प्रभू, अतिशुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध विभू ।
परमातम पूरन पायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥१९॥

वि-रूप चिद्रूपस्वरूप द्युति, जसकूप अनूपम भूप भुती ।
कृतकृत्य जगत्त्रयनायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥२०॥

सब इष्ट अभीष्ट विशिष्ट हितू, उतकिष्ट वरिष्ट गरिष्ट मितू ।
शिव तिष्ठत सर्व सहायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥२१॥

जय श्रीधर श्रीघर श्रीवर हो, जय श्रीकर श्रीभर श्रीझर हो ।
जय ऋद्धि सुसिद्धि बढ़ायक हो, सब सिद्ध नमौं सुखदायक हो ॥२२॥

ॐ ह्रीं अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये अर्घ्यं निर्वपामीति॰

दोहा

सिद्ध सुगुण को कहि सकै, ज्यों विलस्त नभ मान ।
'हिराचन्द' तातैं जजै, करहु सकल कल्यान ॥

अडिल्ल

सिद्ध जजैं तिनको नहिं आवै आपदा,
पुत्र पौत्र धन धान्य लहैं सुख सम्पदा ।
इन्द्रचन्द्र धरणेन्द्र नरेन्द्र जु होयकैं,
जावैं मुकति मझार करम सब खोयकैं ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

देवशास्त्रगुरु पूजा

केवल रवि किरणों से जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर,
उस श्री जिनवाणी में होता, तत्त्वों का सुन्दरतम दर्शन ।
सद्दर्शन बोध चरण पथ पर, अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण,
उन देव परम आगम गुरु को, शत-शत वंदन शत-शत वंदन ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

इन्द्रिय के भोग मधुर विष सम, लावण्यमयी कंचन काया ।
यह सब कुछ जड़ की क्रीड़ा है, मैं अब तक जान नहीं पाया ॥

मैं भूल स्वयं निज वैभव को, पर ममता में अटकाया हूँ ।
अब निर्मल सम्यक् नीर लिये, मिथ्या मल धोने आया हूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति

जड़ चेतन की सब परिणति प्रभु ! अपने-अपने में होती है ।
अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें, यह झूठी मन की वृत्ति है ॥
प्रतिकूल संयोगों में क्रोधित, होकर संसार बढ़ाया है ।
संतप्त हृदय प्रभु ! चन्दन सम, शीतलता पाने आया है ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति

उज्ज्वल हूँ कुन्द धवल हूँ प्रभु ! पर से न लगा हूँ किंचित भी ।
फिर भी अनुकूल लगें उन पर, करता अभिमान निरन्तर ही ॥
जड़ पर झुक झुक जाता चेतन, की मार्दव की खण्डित काया ।
निज शाश्वत अक्षयनिधि पाने, अब दास चरणरज में आया ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा

यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन में माया कुछ शेष नहीं ।
निज अन्तर का प्रभु भेद कहूँ, उसमें ऋजुता का लेश नहीं ॥
चिंतन कुछ फिर संभाषण कुछ, वृत्ति कुछ की कुछ होती है ।
स्थिरता निज में प्रभु पाऊँ जो, अन्तर का कालुष धोती है ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति

अब तक अगणित जड़ द्रव्यों से, प्रभु ! भूख न मेरी शान्त हुई ।
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही ॥
युग युग से इच्छा सागर में, प्रभु ! गोते खाता आया हूँ ।
पंचेन्द्रिय मन के षट्रस तज, अनुपम रस पीने आया हूँ ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति

जग के जड़ दीपक को अब तक समझा था मैंने उजियारा ।
झंझा के एक झकोरे में जो बनता घोर तिमिर कारा ॥
अतएव प्रभो ! यह नश्वर दीप, समर्पण करने आया हूँ ।
तेरी अन्तर लौ से निज अन्तर दीप जलाने आया हूँ ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

जड़ कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी ।
मैं राग-द्वेष किया करता, जब परिणति होती जड़ केरी ॥
यों भाव-करम या भाव-मरण, सदियों से करता आया हूँ ।
निज अनुपम गंध अनल से प्रभु, पर गंध जलाने आया हूँ ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

जग में जिसको निज कहता मैं, वह छोड़ मुझे चल देता है ।
मैं आकुल व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है ॥
मैं शान्त निराकुल चेतन हूँ, है मुक्ति रमा सहचर मेरी ।
यह मोह तड़ककर टूट पड़े प्रभु ! सार्थक फल पूजा तेरी ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षणभर निज रस को पी चेतन, मिथ्या मल को धो देता है ।
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द अमृत पीता है ॥
अनुपम सुख तब विलसित होता, केवल रवि जगमग करता है ।
दर्शन बल पूर्ण प्रकट होता, यह ही अर्हंत अवस्था है ॥
यह अर्घ समर्पण करके प्रभु ! निज गुण का अर्घ बनाऊँगा ।
औ निश्चित तेरे सदृश प्रभु ! अर्हंत अवस्था पाऊँगा ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला (बारह भावना)

भव वन में जी भर घूम चुका, कण कण को जी भर भर देखा ।
मृग-सम मृग-तृष्णा के पीछे, मुझको न मिली सुख की रेखा ॥१॥

झूठे जग के सपने सारे, झूठी मन की सब आशायें ।
तन जीवन यौवन अस्थिर है, क्षण भंगुर पल में मुरझायें ॥२॥

सम्राट् महा-बल सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या ।
अशरण मृत काया में हर्षित, निज जीवन डाल सकेगा क्या ॥३॥

संसार महा दुख सागर के, प्रभु दुखमय सुख आभासों में ।
मुझको न मिला सुख क्षण भर भी, कंचन-कामिनि-प्रासादों में ॥४॥

मैं एकाकी एकत्व लिये, एकत्व लिये सब ही आते ।
तन धन को साथी समझा था, पर वे भी छोड़ चले जाते ॥५॥

मेरे न हुये ये, मैं इनसे, अति भिन्न अखण्ड निराला हूँ ।
निज में पर से अन्यत्व लिये, निज सम रस पीने वाला हूँ ॥६॥

जिसके शृङ्गारों में मेरा, यह मँहगा जीवन घुल जाता ।
अत्यन्त अशुचि जड़ काया से, इस चेतन का कैसा नाता ॥७॥

दिन रात शुभाशुभ भावों से, मेरा व्यापार चला करता ।
मानस वाणी और काया से, आस्रव का द्वार खुला रहता ॥८॥

शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तस्तल ।
शीतल समकित किरणें फूटें, संवर से जागे अन्तर्बल ॥९॥

फिर तप की शोधक वह्नि जगे, कर्मों की कड़ियाँ टूट पड़ें ।
सर्वाङ्ग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के निर्भर फूट पड़ें ॥१०॥

हम छोड़ चले यह लोक तभी, लोकांत विराजें क्षण में जा ।
निज लोक हमारा वासा हो, फिर भव बन्धन से हमको क्या ।।११।।

जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो ! दुर्नयतम सत्वर टल जावे ।
बस ज्ञाता-द्रष्टा रह जाऊँ, मद-मत्सर मोह विनश जावे ।।१२।।

चिर रक्षक धर्म हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी ।
जग में न हमारा कोई था, हम भी न रहें जग के साथी ।।१३।।

देव स्तवन

चरणों में आया हूँ प्रभुवर, शीतलता मुझको मिल जावे ।
मुरझाई ज्ञान लता मेरी, निज अन्तर्बल से खिल जावे ।।१४।।

सोचा करता हूँ भोगों से, बुझ जावेगी इच्छा ज्वाला ।
परिणाम निकलता है लेकिन, मानों पावक में घी डाला ।।१५।।

तेरे चरणों की पूजा से, इन्द्रिय सुख की ही अभिलाषा ।
अब तक न समझ ही पाया प्रभु ! सच्चे सुख की भी परिभाषा ।।१६।।

तुम तो अविकारी हो प्रभुवर ! जग में रहते जग से न्यारे ।
अतएव झुके तव चरणों में, जग के माणिक मोती सारे ।।१७।।

शास्त्रस्तवन

स्याद्वादमयी तेरी वाणी, शुभ नय के झरने झरते हैं ।
उस पावन नौका पर लाखों, प्राणी भव वारिधि तिरते हैं ।।१८।।

गुरुस्तवन

हे गुरुवर ! शाश्वत सुख दर्शक, यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है ।
जग की नश्वरता का सच्चा, दिग्दर्शन करने वाला है ।।१९।।

जब जग विषयों में रच पच कर, गाफिल निद्रा में सोता हो ।
अथवा वह शिव के निष्कंटक, पथ में विष-कंटक बोता हो ।।२०।।

हो अर्द्ध निशा का सन्नाटा, वन में वनचारी चरते हों ।
तब शान्त निराकुल मानस तुम, तत्त्वों का चिंतन करते हो ॥२१॥

करते तप शैल नदी तट पर, तरु तल वर्षा की झड़ियों में ।
समता रस पान किया करते, सुख दुख दोनों की घड़ियों में ॥२२॥

अन्तर ज्वाला हरती वाणी, मानों झड़ती हों फुलझड़ियाँ ।
भव बन्धन तड़ तड़ टूट पड़ें, खिल जावें अन्तर की कलियाँ ॥२३॥

तुम सा दानी क्या कोई हो, जग को दे दीं जग की निधियाँ ।
दिन रात लुटाया करते हो, सम-शम की अविनश्वर मणियाँ ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

हे निर्मल देव ! तुम्हें प्रणाम, हे ज्ञान दीप आगम ! प्रणाम ।
हे शान्ति त्याग के मूर्तिमान, शिव-पथ-पंथी गुरुवर ! प्रणाम ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

समुच्चय पूजा

देवशास्त्र गुरु नमन करि, बीस तीर्थंकर ध्याय ।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूँ चित्त हुलसाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (जोगीरासा छन्द)

अनादिकाल से जग में स्वामिन, जल से शुचिता को माना ।
शुद्ध निजातम सम्यक् रत्नत्रय, निधि को नहीं पहचाना ॥

अब निर्मल रत्नत्रय जल ले, श्री देवशास्त्रगुरु को ध्याऊँ ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

भव आताप मिटावन की, निज में ही क्षमता समता है ।
अनजाने अब तक मैंने, पर में की झूठी ममता है ॥
चन्दन सम शीतलता पाने, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षय पद बिन फिरा, जगत की लख चौरासी योनी में ।
अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिग लाया मैं ॥
अक्षय निधि निज की पाने अब, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है ।
मन्मथ बाणों से बिन्ध करके, चहुँगति दुख उपजाया है ॥
स्थिरता निज में पाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

षट्रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शान्त हुयी ।
आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुयी ॥
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ । विद्य०

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जड़ दीप विनश्वर को अब तक, समझा था मैंने उजियारा।
निज गुण दरशायक ज्ञान दीप से, मिटा मोहका अंधियारा॥
ये दीप समर्पण करके मैं, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ। विद्य०

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी।
निज में निज की शक्ति ज्वाला, जो राग द्वेष नशायेगी॥
उस शक्ति दहन प्रगटाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ। विद्य०

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बादाम श्रीफल लवंग, चरणन तुम ढिंग मैं ले आया।
आतम रस भीने निज गुण फल, मम मन अब उनमें ललचाया॥
अब मोक्ष महाफल पाने को, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ। विद्य०

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निज गुण प्रकट किये॥
ये अर्घ्य समर्पण करके मैं, श्री देव शास्त्र गुरु को ध्याऊँ। विद्य०

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– (देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु भगवान।
अब वरणूँ जयमालिका, करूँ स्तवन गुणगान॥)

भुजंगप्रयात

नसे घातिया कर्म अर्हंत देवा, करें सुर-असुर नर-मुनि नित्य सेवा।
दरशज्ञानसुखबल अनन्तके स्वामी, छियालीस गुणयुक्त महाईश नामी।

तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी, महा मोह विध्वंसिनी मोक्ष-दानी ।
अनेकान्तमय द्वादशांगी बखानी, नमो लोक माता श्री जैन वाणी ॥

विरागी अचारज उवज्झाय साधू, दरश-ज्ञान भण्डार समता अराधू ।
नगन वेशधारी सु एका विहारी, निजानन्द मंडित मुकति पथ प्रचारी ॥

विदेह क्षेत्र में तीर्थंकर बीस राजे, विहरमान वंदूँ सभी पाप भाजे ।
नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी ॥

देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध हृदय बिच धर ले रे ।
पूजन ध्यान गान गुण करके, भव सागर जिय तर ले रे ॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशतितीर्थंकरानन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालामहार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

भूत भविष्यत वर्तमान की तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ,
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम तीन लोक के मन लाऊँ।

ॐ ह्रीं त्रिकालसम्बन्धिविंशत्यधिकसप्तशतजिनेभ्यः त्रिलोकसम्बन्धिकृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयेभ्यश्च अर्घ्यं०

चैत्य भक्ति आलोचन चाहूं, कायोत्सर्ग अघ नाशन हेत ।
कृत्रिमा-कृत्रिम तीन लोक के राजत हैं जिन बिम्ब अनेक ॥
चतुर निकाय के देव जजें ले अष्ट द्रव्य निज भक्ति समेत ।
निज शक्ति अनुसार जजूं मैं, कर समाधि पाऊँ शिवखेत ॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्व० ।

पूर्व मध्य अपराह्ण की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार ।
देव वन्दना करूं भाव से सकल कर्म की नाशन हार ॥
पंच महागुरु सुमरन करके, कायोत्सर्ग करूं सुखकार ।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना जाऊँगा अब मैं भव पार ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

नवदेवता पूजा

(हरिगीतिका छंद)

अरिहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु त्रिभुवन वंद्य हैं ।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वरमूर्ति जिनगृह वंद्य हैं॥
नव देवता ये मान्य जग में, हम सदा अर्चा करें ।
आह्वान कर थापे यहाँ मन में अतुल श्रद्धा धरें॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयानि! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयानि! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयानि! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट्

अष्टक

गंगा नदी का नीर निर्मल, बाह्य मल धोवे सदा ।
अंतर मलों के क्षालने को नीर से पूजूँ मुदा॥
नव देवताओं की सदा जो भक्ति से अर्चा करें ।
सब सिद्धि नवनिधि ऋद्धि मंगल पाय शिवकांता वरें॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूर मिश्रित गंध चंदन देह, ताप निवारता ।
तुम पाद पंकज पूजते, मन ताप तुरतहिं वारता ॥ नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षीरोदधी के फेन सम सित तंदुलों को लायके ।
उत्तमअखंडित सौख्यहेतु, पुंज नव सु चढ़ायके ॥ नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो-ऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

चंपा चमेली केवड़ा, नाना सुगंधित ले लिये ।
भव के विजेता आपको, पूजत सुमन अर्पण किये ।। नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यः कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

पायस मधुर पकवान मोदक, आदि को भर थाल में।
निजआत्म अमृत सौख्य हेतु पूजहूँ नतभाल मैं ।। नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यः क्षुधा-रोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्पूर ज्योति जगमगे दीपक लिया निज हाथ में ।
तुअ आरती तम वारती, पाऊँ सुज्ञान प्रकाश मैं ।। नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दश गंध धूप अनूप सुरभित, अग्नि में खेऊँ सदा ।
निज आत्मगुण सौरभ उठे, हों कर्म सब मुझसे विदा ।। नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो-ऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंगूर अमरख आम्र अमृत, फल भराऊँ थाल में ।
उत्तम अनूपम मोक्ष फल के, हेतु पूजूँ आज मैं ।। नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक सुधूप फलार्घ्य ले ।
वर रत्नत्रयनिधि लाभ यह बस अर्घ्य से पूजत मिले ।। नव०

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो-ऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

जलधार से नित्य मैं, जग की शांति हेत ।
नवदेवों को पूजहूँ, श्रद्धा भक्ति समेत ॥

(शांतये शांतिधारा)

नाना विध के सुमन ले, मन में बहु हरषाय ।
मैं पूजूँ नवदेवता, पुष्पाञ्जलि चढ़ाय ॥

(दिव्यपुष्पाञ्जलिः)

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः ।

(९, २७ या १०८ बार जाप दें)

जयमाला

सोरठा

चिच्चिंतामणि रत्न, तीन लोक में श्रेष्ठ हो ।
गाऊँ गुण मणिमाल, जयवंते वर्तो सदा ॥१॥

हे दीनबन्धु.....

जय जय श्री अरिहंत देव देव हमारे,
जय घातिया को घात सकल जंतु उबारे ।
जय जय प्रसिद्ध सिद्ध की मैं वंदना करूँ,
जय अष्ट कर्ममुक्त की मैं अर्चना करूँ ॥२॥

आचार्य देव गुण छत्तीस धार रहे हैं,
दीक्षादि दे असंख्य भव्य तार रहे हैं ।
जैवंत उपाध्याय गुरु ज्ञान के धनी,
सन्मार्ग के उपदेश की वर्षा करें घनी ॥३॥

जय साधु अठाईस गुणों को धरें सदा,
निज आतमा की साधना से च्युत न हों कदा ।

ये पंच परम देव सदा वंद्य हमारे,
संसार विषम सिंधु से हमको भी उबारें ।।४।।

जिनधर्म चक्र सर्वदा चलता ही रहेगा,
जो इसकी शरण ले वो सुलझता ही रहेगा ।
जिनकी ध्वनि पीयूष का जो पान करेंगे,
भव रोग दूर कर वे मुक्तिकांत बनेंगे ।।५।।

जिन चैत्य की जो वंदना त्रिकाल करे हैं,
वे चित्स्वरूप नित्य आत्म लाभ करे हैं ।
कृत्रिम व अकृत्रिम जिनालयों को जो भजें,
वे कर्मशत्रु जीत शिवालय में जा बसें ।।६।।

नव देवताओं की जो नित आराधना करें,
वे मृत्युराज की भी तो विराधना करें ।
मैं कर्मशत्रु जीतने के हेतु ही जजूँ,
संपूर्ण 'ज्ञानमती' सिद्धि हेतु ही भजूँ ।।७।।

(दोहा)

नव देवों को भक्तिवश, कोटि कोटि प्रणाम ।
भक्ति का फल मैं चहूँ, निज पद में विश्राम ।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जो भव्य श्रद्धा भक्ति से नव देवता पूजा करें ।
वे सब अमंगल दोष हर, सुख शांति में झूला करें ।।
नवनिधि अतुल भंडार ले, फिर मोक्ष सुख भी पावते ।
सुखसिंधु में हो मग्न फिर, यहाँ पर कभी न आवते ।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

******

णमोकार महामन्त्र पूजा

गीता छन्द

अनुपम अनादि अनंत हैं, यह मन्त्रराज महान है ।
सब मंगलों में प्रथम मंगल, करत अघ की हान है ।।
अर्हंत सिद्धाचार्य पाठक, साधुओं की वन्दना ।
इस शब्दमय परब्रह्म को थापूँ करूँ नित अर्चना ।।

ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (भुजंगप्रयात)

महातीर्थ गंगा नदी नीर लाऊँ, महामन्त्र की नित्य पूजा रचाऊँ ।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुख से बचूँ मैं ।।
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०

कपूरादि चंदन महागंध लाके, परं शब्द ब्रह्मा की पूजा रचाके ।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुख से बचूँ मैं ।।
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं०

पयः सिन्धु के फेन सम अक्षतों को, लिया थाल में पुंज से पूजने को ।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुख से बचूँ मैं ।।
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्०

जुही कुंद अरविन्द मंदार माला, चढ़ाऊँ तुहें काम को मार डाला ।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुख से बचूँ मैं ।।
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं०

कलाकन्द लड्डू इमरती बनाऊँ, तु हें पूजते भूख व्याधि नशाऊँ ।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुख से बचूँ मैं ॥
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०

शिखादीप की ज्योति विस्तारती है, महामोह अंधेर संहारती है ।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुख से बचूँ मैं ॥
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं०

सुगन्धी बढ़े धूप खेते अगनि में, सभी कर्म की भस्म हो एक क्षण में ।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुख से बचूँ मैं ॥
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं..

अनन्नास अंगूर अमरूद लाया, महामोक्ष स पत्ति हेतु चढ़ाया ।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुख से बचूँ मैं ॥
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपा..

उदक गंध आदि मिला अर्घ्य लाया , महामन्त्र नवकार को मैं चढ़ाया ।
णमोकार मंत्राक्षरों को जजूँ मैं, महाघोर संसार दुख से बचूँ मैं ॥
ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व..

दोहा

शान्तिधारा मैं करूँ, तिहुं जग शान्ति हेत ।
भव-भव आतप शांत हों, पूजूँ भक्ति समेत ॥

शान्तये शान्तिधारा ।

बकुल मल्लिका पुष्प ले, पूजूँ मन्त्र महान ।
पुष्पांजलि से पूजते, सकल सौख्य वरदान ॥

(दिव्यपुष्पाञ्जलिः)

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं। ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं। ॐ ह्रूं णमो आयरियाणं।
ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं। ॐ ह्रः णमो लोए सव्व साहूणं।
(१०८ लवंग अथवा सुगन्धित पीले तंदुलों से जाप्य करना)

जयमाला

सोरठा

पंच परम गुरुदेव, नमूँ नमूँ नत शीश में ।
करो अमंगल क्षेव, गाऊं तुम गुण मालिका ।।

(चालः हे दीन बन्धु... !)

जैवंत महामंत्र मूर्तिमंत्र धरा में ।
जैवंत परमब्रह्म शब्दब्रह्म धरा में ।।
जैवंत सर्वमंगलों में मंगलीक हो ।
जैवंत सर्वलोक में तुम सर्वश्रेष्ठ हो ।।१।।

त्रैलोक्य में हो एक तुम ही शरण हमारे ।
माँ शारदा भी नित्य ही तुम कीर्ति उचारे ।।
विघ्नों का नाश होता है तुम नाम जाप से ।
स पूर्ण उपद्रव नशे हैं तुम प्रताप से ।।२।।

छ्यालीस सुगुण को धरें अरिहन्त जिनेशा ।
सब दोष अठारह से रहित त्रिजग महेशा ।।
ये घातिया को घात के परमात्मा हुए ।
सर्वज्ञ वीतराग और निर्दोष गुरु हुए ।।३।।

जो अष्ट कर्म नाश के ही सिद्ध हुए हैं ।
वे अष्ट गुणों से सदा विशिष्ट हुए हैं ।।
लोकाग्र में हैं राजते वे सिद्ध अनंता ।
सर्वार्थ-सिद्धि देते हैं वे सिद्ध महंता ।।४।।

छत्तीस गुण को धारते आचार्य हमारे ।
चउ संघ के नायक हमें भव-सिन्धु से तारें ।।

पच्चीस गुणों युक्त उपाध्याय कहाते ।
भव्यों को मोक्षमार्ग का उपदेश पढ़ाते ।।५।।
जो साधु अट्ठाईस मूलगुण को धारतें ।
वे आत्म साधना से साधु नाम धारतें ।।
ये पंच परम देव भूतकाल में हुए ।
होते हैं वर्तमान में भी पंच गुरु ये ।।६।।
होंगे भविष्य काल में भी सुगुरु अनंते ।
ये तीन लोक तीन काल के हैं अनंते ।।
इन सब अनंतानंत की मैं वंदना करूँ ।
शिवपथ के विघ्न पर्वतों की खण्डना करूँ ।।७।।
इक ओर तराजू पै अखिल गुण को चढ़ाऊँ ।
इक ओर महामन्त्र अक्षरों को धराऊँ ।।
इस मन्त्र के पलड़े को उठा ना सके कोई ।
महिमा अनंत यह धरे ना इस सदृश कोई ।।८।।
इस मन्त्र के प्रभाव श्वान देव हो गया ।
इस मन्त्र से अनंत का उद्धार हो गया ।।
इस मन्त्र की महिमा को कोई गा नहीं सके ।
इसमें अनंत शक्ति पार पा नहीं सके ।।९।।
पांचों पदों से युक्त मन्त्र सारभूत हैं ।
पैंतीस अक्षरों से मन्त्र परमपूत है ।।
पैंतीस अक्षरों के जो पैंतीस व्रत करै ।
उपवास या एकाशना से सौख्य को भरै ।।१०।।
तिथि सप्तमी के सात पंचमी के पांच हैं ।
चौदस के चौदह नवमीं के भी नव विख्यात हैं ।।

इस विधि से महामन्त्र की आराधना करें ।
वे मुक्ति-बल्लभा प्रति निज कामना करें ॥११॥

दोहा

यह विष को अमृत करे, भव-भव पाप विदूर ।
पूर्ण 'ज्ञानमति' हेतु मैं, जजूँ भरो सुख पूर ॥१२॥

ॐ ह्रीं अनादिनिधनपञ्चनमस्कारमन्त्राय जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

सोरठा

मन्त्रराज सुखकार, आतम अनुभव देत है ।
जो पूजें रुचि धार, स्वर्ग मोक्ष के सुख लहैं ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पञ्चपरमेष्ठी पूजा

अर्हन्त सिद्ध आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन ।
जय पंच परम परमेष्ठी जय, भव सागर तारण हार नमन ॥

मन वच काया पूर्वक करता, हूँ शुद्ध हृदय से आह्वानन ।
मम हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन ॥

निज आत्म तत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन ।
तव चरणों के पूजन से प्रभु निज सिद्ध रूप का हो दर्शन ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिनः ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिनः ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिनः ! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् ।

अष्टक (जोगीरासा छन्द)

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ ।
तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्ज्वल जल भरकर लाया हूँ ॥

मैं जन्म जरा मृतु नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्यो
जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

संसार ताप में जल जल कर, मैंने अगणित दुख पाये हैं ।
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाये हैं ॥
शीतल चंदन है भेंट तुम्हें, संसार ताप नाशो स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्यो
भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

दुखमय अथाह भव सागर में, मेरी यह नौका भटक रही ।
शुभ अशुभ भाव की भँवरों में, चैतन्य शक्ति निज अटक रही ॥
तंदुल है धवल तुम्हें अर्पित, अक्षयपद प्राप्त करूँ स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये
अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

मैं काम व्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किंचित् छाया ।
चरणों में पुष्प चढ़ाता हूँ, तुमको पाकर मन हर्षाया ॥
मैं काम भाव विध्वंस करूँ, ऐसा दो शील हृदय स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्यः
कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

मैं क्षुधा रोग से व्याकुल हूँ चारों गति में भरमाया हूँ ।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी तृप्त नहीं हो पाया हूँ ॥

नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा रोग मेटो स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मोहान्ध महाअज्ञानी मैं, निज को पर का कर्त्ता माना ।
मिथ्यातम के कारण मैंने, निज आत्म स्वरूप न पहचाना ॥
मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्मों की ज्वाला धधक रही, संसार बढ़ रहा है प्रतिपल ।
संवर से आस्रव को रोकूं, निर्जरा सुरभि महके पल पल ॥
मैं धूप चढ़ा कर अब आठों, कर्मों का हनन करूँ स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

निज आत्मतत्त्व का मनन करूँ, चिंतवन करूँ निज चेतन का ।
दो श्रद्धा ज्ञान चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का ॥
उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ, निर्वाण महाफल हो स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल चंदन अक्षत पुष्प दीप नैवेद्य धूप फल लाया हूँ ।
अब तक के संचित कर्मों का मैं पुंज जलाने आया हूँ ॥

यह अर्घ समर्पित करता हूँ अविचल अनर्घपद दो स्वामी ।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुख मेटो अन्तर्यामी ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार ।
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अर्हन्त देव को नमस्कार ॥

अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरंजन निराकार ।
जय अजर अमर हे मुक्तिकंत, भगवंत सिद्ध को नमस्कार ॥

छत्तीस सुगुण से तुम मंडित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार ।
हे मुक्ति वधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार ॥

एकादश अंग पूर्व चौदह के पाठी गुण पच्चीस धार ।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान् श्री उपाध्याय को नमस्कार ॥

व्रत समिति गुप्ति चारित्र प्रबल वैराग्य भावना हृदय धार ।
हे द्रव्य भाव संयममय मुनिवर सर्व साधु को नमस्कार ॥

बहु पुण्य संयोग मिला नरतन जिनश्रुत जिनदेव चरण दर्शन ।
हो सम्यक् दर्शन प्राप्त मुझे तो सफल बने मानव जीवन ॥

निज पर का भेद जानकर मैं निज को ही निज में लीन करूँ ।
अब भेद ज्ञान के द्वारा मैं निज आत्म स्वयं स्वाधीन करूँ ॥

निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहचानूँ ।
पर परिणति से हो विमुख सदा, निजज्ञान तत्त्व को ही जानूँ ॥

जब ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प तज, शुक्ल ध्यान मैं ध्याऊँगा ।
तब चार घातिया क्षय करके अर्हंत महापद पाऊँगा ॥

है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु कब इसको पाऊँगा ।
सम्यक् पूजा फल पाने को अब निज स्वभाव में आऊँगा ॥

अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु हे प्रभु मैंने की है पूजन ।
तब तक चरणों में ध्यान रहे जब तक न प्राप्त हो मुक्ति सदन ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं०

हे मंगल रूप अमंगल हर, मंगलमय मंगल गान करूँ ।
मंगल में प्रथम श्रेष्ठ मंगल, नवकार मंत्र का ध्यान करूँ ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

बाहुबली पूजा

दोहा

कर्म अरिगण जीतिके, दरशायो शिव पंथ ।
प्रथम सिद्ध पद जिन लयो, भोग भूमि के अंत ॥
समर दृष्टि जल जीत लहि, मल्ल युद्ध जय पाय ।
वीर अग्रणी बाहुबलि, वंदौ मन वच काय ॥

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (जोगीरासा छन्द)

जन्म जरा मरनादि तृषा कर जगत जीव दुःख पावै ।
तिहि दुख दूर करन जिनपद को पूजन जल ले आवै ॥
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबली बल धारी ।
तिनके चरण कमलकौ नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह संसार मरुस्थल अटवी तृष्णा दाह भरी है ।
तिहि दुख वारन चन्दन लेके जिन पद पूज करी है ॥ परम०
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्व..

स्वच्छ शालि शुचि नीरज रजसम गन्ध अखण्ड प्रचारी ।
अक्षय पद के पावन कारन पूजै भवि जगतारी ॥ परम०
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपा..

हरिहर चक्रपति सुर-दानव मानव पशु वश याके ।
तिहि मकरध्वज नाशक जिनकों पूजों पुष्प चढ़ाके ॥ परम०
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय कामबाणविनाशनाय पुष्पाणि निर्व.

दुखद त्रिजग जीवन को अति ही दोष क्षुधा अनिवारी ।
तिहि दुख दूर करन को चरुवर ले जिन पूज प्रचारी ॥ परम०
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपा..

मोह महातम में जग जीवन शिव मग नाहि लखावै ।
तिहि निरवारण दीपक कर ले जिनपद पूजन आवै ॥ परम०
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...

उत्तम धूप सुगन्ध बनाकर दश दिश में महकावै ।
दश विधि बंध निवारण कारण जिनवर पूज रचावै ॥ परम०
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति

सरस सुवरण सुगन्ध अनूपम स्वच्छ महाशुचि लावै ।
शिव फल कारण जिनवर पद की फलसों पूज रचावै ॥ परम०
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति..

वसु विधि के वश वसुधा सब ही परवश अति दुख पावै ।
तिहि दुख दूर करनको भविजन अर्घ्य जिनाग्र चढ़ावै ॥ परम०
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिपरमयोगीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

जयमाला

दोहा

आठ कर्म हनि आठगुण, प्रगट करे जिन रूप।
सो जयवंतो भुजबली, प्रथम भये शिव भूप ॥

कुसुमलता छन्द

जै जै जै जगतार शिरोमणि क्षत्रिय वंश अशंस महान ।
जै जै जै जग जन हितकारी दीनौ जिन उपदेश प्रमाण ॥१॥

जै जै चक्रपति सुत जिनके शत सुत जेष्ठ भरत पहिचान ।
जै जै जै श्रीऋषभदेव जिनसौं जयवंत सदा जग जान ॥२॥

जिनके द्वितीय महादेवी शुचि नाम सुनंदा गुण की खान ।
रूप शील सम्पन्न मनोहर तिनके सुत भुजबली महान ॥३॥

सवा-पंच शत धनु उन्नत तनु हरितवरण शोभा असमान ।
वैडूरजमणि पर्वत मानों नील कुलाचल सम थिर जान ॥४॥

तेजवंत परमाणु जगतमें तिन करि रचो शरीर प्रमाण ।
शत वीरत्व गुणाकर जाको निरखत हरि हरषै उर आन ॥५॥

धीरज अतुल वज्र सम नीरज सम वीराग्रणि अति बलवान ।
जिन छवि लखि मनु शशि छवि लाजै कुसुमायुध लीनों सुपुमान ॥६॥

बाल समै जिन बाल चन्द्रमा शशि से अधिक धरे दुतिसार ।
जो गुरुदेव पढ़ाई विद्या शस्त्र शास्त्र सब पढ़ी अपार॥७॥

ऋषभदेव ने पोदनपुर के नृप कीने भुजबली कुमार ।
दई अयोध्या भरतेश्वर को आप बने प्रभु जी अनगार ॥८॥

राजकाज षटखण्ड महीपति सब दल लै चढ़ि आये आप ।
बाहुबलि भी सन्मुख आये मन्त्रिन तीन युद्ध दिये थाप ॥९॥

दृष्टि नीर अरु मल्ल युद्ध में दोनों नृप कीनों बल धाप ।
वृथा हानि की जाय सैन्य की यातें लड़िये आपों आप ॥१०॥

भरत भुजबली भूपति भाई उतरे समर भूमि में जाय ।
दृष्टि नीर रण थके चक्रपति मल्लयुद्ध तब करो अघाय ॥११॥

पगतल चलत-चलत अचला कंपत अचल शिखर ठहराय ।
निषध नील अचलाधर मानौं भये चलाचल क्रोध बसाय ॥१२॥

भुज विक्रमबल बाहुबली ने लिये चक्रपति अधर उठाय ।
चक्र चलायौ चक्रपति तब सो भी विफल भयो तिहि ठाह ॥१३॥

अति प्रचण्ड भुजदण्ड सुण्ड सम नृप शार्दूल बाहुबली राय ।
सिंहासन मंगवाय जासपै अग्रज को दीनौं पधराय ॥१४॥

राजरमा रामा सुरधनु में जीवन दमक दामिनी जान ।
भोग भुजंग जंग सम जग को जान त्याग कीनों तिहि थान ॥१५॥

अष्टापद पर जाय वीरनृप वीर व्रती धर कीनों ध्यान ।
अचल अंग निरभंग संग तज संवतसर लों एक स्थान ॥१६॥

विषधर बंबी करी चरनतल ऊपर बेलि चढ़ी अनिवार ।
युग जंघा कटि बाहु बेढ़ि कर पहुँची वक्षस्थल परसार ॥१७॥

सिरके केश बढ़े जिस माँहिं नभचर पक्षी बसे अपार ।
धन्य धन्य इस अचल ध्यान की महिमा सुर गावैं उर धार ॥१८॥

कर्म नाशि शिव जाय बसे प्रभु ऋषभेश्वर से पहले जान ।
अष्ट गुणांकित सिद्ध शिरोमणि जगदीश्वर पद लाय पुमान ॥१९॥

वीर व्रती वीराग्रगन्य प्रभु बाहुबली जग धनय महान ।
वीरवृत्ति के काज जिनेश्वर नमैं सदा जिन बिम्ब प्रमान ॥२०॥

दोहा

श्रवणबेलगुल विन्ध्यगिरि, जिनवर बिंब प्रधान ।
छप्पन फुट उत्तंगतनों, खडगासन अमलान ॥

अतिशयवन्त अनन्त बल, धारक बिम्ब अनूप ।
अर्घ्य चढ़ाय नमों सदा, जै जै जिनवर भूप ॥

ॐ ह्रीं कर्मारिविजयिवीराधिवीर-वीराग्रणी-
श्रीबाहुबलिस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

अर्घ्यावली

बीस तीर्थंकर

जल फल आठों दर्व अरघ कर प्रीति धरी है,
गणधर इन्द्रनिहू-तैं थुति पूरी न करी है।
द्यानत सेवक जानके (हो) जगतें लेहु निकार,
सीमन्धर जिन आदि दे बीस विदेह मँझार।
(श्री जिनराज हो भव तारण तरण जहाज ॥)

ॐ ह्रीं श्रीसीमन्धरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये०

कृत्रिमाकृत्रिम जिनबिम्ब

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान्,
वन्दे भावन-व्यन्तरान् द्युतिवरान् कल्पामरावासगान् ॥
सद्-गन्धाक्षत-पुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलै-
र्नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा, दुष्कर्मणां शान्तये ॥

(सात करोड़ बहत्तर लाख, सु-भवन जिन पाताल में ।
मध्यलोक में चारसौ अट्ठावन, जजों अघमल टाल के ॥

अब लखचौरासी सहस सत्याणव, अधिक तेईस रु कहे ।
बिन संख ज्योतिष व्यन्तरालय, सब जजों मन वच ठहे ।।)

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्ध भगवान्

गन्धाढ्‌यं सुपयोमधुव्रत-गणैः, सङ्गं वरं चन्दनं,
पुष्पौघं विमलं सदक्षत - चयं, रम्यं चरुं दीपकम् ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं, श्रेष्ठं फलं लब्धये,
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं, सेनोत्तरं वाञ्छितम् ।।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

समुच्चय चौबीसी भगवान्

जल फल आठों शुचिसार ताको अर्घ करों,
तुमको अरपो भवतार, भवतरि मोक्ष वरों ।
चौबीसों श्रीजिनचंद, आनँदकंद सही,
पद जजत हरत भव फंद, पावत मोक्ष मही ।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

तीस चौबीसी

द्रव्य आठों, जु लीना है, अर्घ कर में नवीना है,
पूजतां पाप छीना है, 'भानुमल' जोड़ कीना है।
दीप अढ़ाई सरस राजैं, क्षेत्र दस ताँ विषैं छाजैं,
सातशत बीस जिनराजैं, पूजतां पाप सब भाजै ।।

ॐ ह्रीं पञ्चभरतपञ्चैरावतयोः भूतभविष्यद्वर्तमानसम्बन्धिविंशत्यधिक-सप्तशतजिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री आदिनाथ भगवान्

शुचि निर्मल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय,
दीप धूप फल अर्घ सुलेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय ।
श्रीआदिनाथ के चरण कमल पर बलि बलि जाऊँ मन वच काय,
हे करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पाय ॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

श्री चन्द्रप्रभ भगवान्

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों ।
पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमों ॥
श्री चन्द्रनाथ दुति चन्द, चरनन चंद लगै ।
मन-वच-तन जजत अमंद, आतमजोति जगै ॥

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री शीतलनाथ भगवान्

जल गन्ध अक्षत फूल चरु दीपक सुधूप कही महा ।
फल ल्याय सुन्दर अरघ कीन्हो दोष सो वर्जित कहा ॥
तुम नाथ शीतल करो शीतल मोहि भव की ताप सौं ।
मैं जजौं युग पद जोरि करि मो काज सरसी आप सौं ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

श्री वासुपूज्य भगवान्

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई,
शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरों यह लाई ।
वासुपूज्य वसुपूज-तनुज पद, वासव सेवत आई,
बालब्रह्मचारी लखि जिन को, शिवतिय सनमुख धाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

श्री शान्तिनाथ भगवान्

वसु द्रव्य सँवारी,तुम ढिग धारी,आनन्दकारी दृग प्यारी ।
तुम हो भवतारी, करुणाधारी, यातै थारी शरनारी ॥
श्री शान्ति-जिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं, चक्रेशं ।
हनि अरि चक्रेशं हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं ॥
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

श्री नेमिनाथ भगवान्

दाता मोच्छ के, श्रीनेमिनाथ जिनराय, दाता॰
जल फल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय ।
अष्टम छिति के राज करन को, जजों अंग वसु नाय ॥
दाता मोच्छ के, श्रीनेमिनाथ जिनराय, दाता॰
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री पार्श्वनाथ भगवान्

नीर गन्ध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिये ।
दीप - धूप - श्रीफलादि अर्घ तें जजीजिये ॥
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष, भूलिये नहीं कदा ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

श्री महावीर भगवान्

जल फल वसु सजि हिम थार, तन मन मोद धरों ।
गुण गाऊँ भवदधि तार, पूजत पाप हरों ॥
श्री वीर महा अतिवीर सन्मति नायक हो ।
जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मतिदायक हो ॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री बाहुबली स्वामी

हूँ शुद्ध निराकुल सिद्धों सम, भवलोक हमारा वासा ना ।
रिपु राग रु द्वेष लगे पीछे, यातें शिवपद को पाया ना ॥
निज के गुण निज में पाने को, प्रभु अर्घ संजोकर लाया हूँ ।
हे बाहुबली तुम चरणों में, सुख सन्मति पाने आया हूँ ॥
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंच-बालयति

सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ अरघ बनावत हैं ।
वसुकर्म अनादि संयोग, ताहि नशावत हैं ॥
श्री वासुपूज्य मल्लि नेम, पारस वीर अती ।
नमूँ मन-वच-तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति ॥
ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

सोलहकारण

जलफल आठों दरब चढ़ाय 'द्यानत' वरत करों मन लाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पददाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

पंचमेरु

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिअशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

नन्दीश्वरद्वीप

यह अरघ कियो निजहेत, तुमको अरपतु हों ।
'द्यानत' कीज्यो शिवखेत, भूमि समरपतु हों ॥
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पूज करों ।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरों ॥
(नन्दीश्वर द्वीप महान चारों दिशि सोहें ।
बावन जिन मन्दिर जान सुर-नर-मन मोहें ॥)

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तर-दक्षिणदिक्षु द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नत्रय

आठ दरब निरधार, उत्तम सो उत्तम लिये ।
जनम रोग निरवार सम्यक् रत्नत्रय भजूँ ॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दशलक्षण

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सों ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजों सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मांगाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

सप्तर्षि

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना ।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥
मन्वादि चारणऋद्धि धारक, मुनिन की पूजा करूँ ।
ता करें पातक हरें सारे, सकल आनंद विस्तरूँ ॥

ॐ ह्रूं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

निर्वाणक्षेत्र

जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं ।
'द्यानत' करो निरभय जगत सों,जोर कर विनती करौं ।
सम्मेदगढ़ गिरनार चंपा पावापुर कैलाश कों ।
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास कों ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सरस्वती

जल चन्दन अक्षत फूल चरू, चत दीप धूप अति फल लावै ।
पूजा को ठानत जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत' सुख पावै ।
तीर्थंकर की ध्वनि गणधर ने सुनी अंग रचे चुनि ज्ञानमई ।
सो जिनवर वानी शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी पूज्य भई ।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपा..

श्री ऋषिमण्डल

जल फलादिक द्रव्य लेकर अर्घ सुन्दर कर लिया ।
संसार रोग निवार भगवन् वारि तुम पद में दिया ।।
जहाँ सुभग ऋषिमंडल विराजैं पूजि मन वच तन सदा ।
तिस मनोवांछित मिलत सब सुख स्वप्न में दुख नहिं कदा ।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव-विनाशन-समर्थाय ऋषिमण्डलाय अर्घ्यं निर्वपामीति

सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र

नीर चन्दन अखंड अक्षत पुष्प चरु अति सार ही ।
वर धूप निरमल फल विविध, बहु अर्घ सन्त उतार ही ।।
सो मेट दुर्गति होय सुरगति, सुख लहै शुद्ध भाव सों ।
सम्मेदगढ़ पर बीस जिनवर, पूजि भवि उच्छाह सों ।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

आचार्य श्री ज्ञानसागर जी

अष्ट द्रव्य के अर्घ्य बनाय, आत्मशांति हित चरण चढ़ाय ।
परम सुख होय, गुरु पद पूज परम सुख होय ॥
जय जय गुरुवर ज्ञान महान, ज्ञान रतन का करते दान ।
परम सुख होय, गुरु पद पूज परम सुख होय ॥
ॐ हूं आचार्यश्रीज्ञानसागरमुनीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपा..

आचार्य श्री विद्यासागर जी

श्री विद्यासागर के चरणों में झुका रहा अपना माथा ।
जिनके जीवन की हर चर्या बन पड़ी स्वयं ही नवगाथा ॥
जैनागम का वह सुधा कलश जो बिखराते हैं गलीगली ।
जिनके दर्शन को पाकर के खिलती मुरझाई हृदय कली ॥

भावों की निर्मल सरिता में, अवगाहन करने आया हूँ ।
मेरा सारा दुख दर्द हरो, यह अर्घ भेटने लाया हूँ ॥
हे तपो मूर्ति ! हे आराधक ! हे योगीश्वर ! हे महासन्त ! ।
है 'अरुण' कामना देख सके, युग-युग तक आगामी बसन्त ॥
ॐ हूं आचार्यश्रीविद्यासागरमुनीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

महार्घ

मैं देव श्री अरहंत पूजूँ, सिद्ध पूजूँ चाव सों ।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ, साधु पूजूँ भाव सों ॥

अर्हन्त भाषित बैन पूजूँ, द्वादशांग रची गनी ।
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरण, शिवहेत सब आशा हनी ॥

सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि, दयामय पूजूँ सदा ।
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहि कदा ॥

त्रैलोक्य के कृत्रिम, अकृत्रिम, चैत्य चैत्यालय जजूँ ।
पनमेरु-नन्दीश्वर जिनालय, खचर सुरपूजित भजूँ ॥

कैलाशश्री सम्मेदश्री, गिरनारगिरि पूजूँ सदा ।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि, और तीरथ सर्वदा ॥

चौबीस श्री जिनराज पूजूँ, बीस क्षेत्र विदेह के ।
नामावली इक सहसवसु जय होय पति शिवगेह के ॥

दोहा

जल गंधाक्षत पुष्प चरु,दीप धूप फल लाय ।
सर्व पूज्य पद पूज हूँ, बहु विधि भक्ति बढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं भावपूजा भाववंदना त्रिकालपूजा त्रिकाल-वंदना करै करावै भावना भावै श्री अरिहन्तजी सिद्धजी आचार्यजी उपाध्यायजी सर्वसाधुजी पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नमः प्रथमानुयोग-करणानुयोगचरणानुयोगद्रव्यानुयोगेभ्यो नमः । दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो नमः । जल के विषै, थल के विषै, आकाश के विषै, गुफा के विषै, पहाड़ के विषै, नगरनगरी विषै, ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक, पाताललोक विषै विराजमान कृत्रिम अकृत्रिम जिनचैत्यालयजिनबिम्बेभ्यो नमः । विदेहक्षेत्रे विद्यमान-बीसतीर्थङ्करेभ्यो नमः । पाँच भरत, पाँच ऐरावत दशक्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः । नन्दीश्वरद्वीप-सम्बन्धी बावन जिनचैत्यालयेभ्यो नमः । पञ्चमेरु-सम्बन्धी अस्सी जिनचैत्यालयेभ्यो नमः । सम्मेदशिखर, कैलाश, चम्पापुर, पावापुर, गिरनार, सोनागिरि, राजगृही, शत्रुञ्जय, तारङ्गा, मथुरा आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः । जैनबिद्री, मूडबिद्री, हस्तिनापुर, चन्देरी,पपोरा, अयोध्या, चमत्कारजी, महावीरजी,

पदमपुरीजी, तिजारा आदि अतिशयक्षेत्रेभ्यो नमः श्रीचारण-ऋद्धिधारि-सप्तपरमर्षिभ्यो नमः ।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपा-लसन्तं श्रीवृषभादि-महावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करपरमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे ......नाम्नि नगरे....... मासानामुत्तमे.......मासे शुभपक्षे ....तिथौ ....वासरे ....मुन्यार्यिकाणां श्रावकश्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं अनर्घ्यपदप्राप्तये सम्पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शांतिपाठ

(शांतिपाठ बोलते समय पुष्प क्षेपण करते रहना चाहिये)

चौपाई

शान्तिनाथ मुख शशि उनहारी, शील गुणव्रत संयमधारी ।
लखन एक सौ आठ विराजैं, निरखत नयन कमलदल लाजैं ।।

पञ्चम चक्रवर्ति पदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी ।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शांतिहित शांति विधायक ।।

दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा ।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ।।

शान्ति जिनेश शांति सुखदाई, जगत्पूज्य पूजौं शिर नाई ।
परम शांति दीजै हम सबको, पढ़ैं तिन्हें पुनि चार सङ्घ को ।।

वसन्ततिलका

पूजैं जिन्हें मुकुटहार किरीट लाके,
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ।।
सो शांतिनाथ वर वंश जगत्प्रदीप,
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप ।।

(निम्न श्लोक को पढ़कर जल छोड़ना चाहिए)

उपजाति

संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीनकों को यतिनायकों को ।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन ! शान्ति को दे ॥

स्रग्धरा

होवै सारी प्रजा को, सुख बलयुत हो, धर्म-धारी नरेशा ।
होवै वर्षा समै पै, तिलभर न रहे, व्याधियों का अन्देशा ॥
होवै चोरी न जारी, सुसमय वरतै, हो न दुष्काल मारी ।
सारे ही देश धारैं, जिनवर वृष को, जो सदा सौख्यकारी ॥

दोहा

घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज ।
शान्ति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज ॥

मन्दाक्रान्ता

शास्त्रों का हो, पठन सुखदा, लाभ सत्संगती का,
सद्वृत्तों का, सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का ।
बोलूँ प्यारे, वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ,
तौ लों सेऊँ, चरण जिनके, मोक्ष जो लों न पाऊँ ॥

आर्या

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में ।
तब लौं लीन रहौं प्रभु, जब लौं पाया न मुक्ति पद मैंने ॥
अक्षर पद मात्रा से, दूषित जो कुछ कहा गया मुझसे ।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भव दुख से ॥
हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊँ तव चरण-शरण बलिहारी ।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी ॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

(यहाँ पर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ना चाहिए)

विसर्जन

दोहा

बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय ।
तुम प्रसाद तैं परमगुरु, सो सब पूरन होय ॥

पूजनविधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आह्वान ।
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करहु भगवान ॥

मन्त्रहीन धनहीन हूँ, क्रियाहीन जिनदेव ।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव ॥

आये जो जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमान ।
ते अब जावहू कृपाकर, अपने-अपने थान ॥

(निम्न श्लोक पढ़कर विसर्जन करना चाहिये)

श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय ।
भव-भव के पातक कटें, दुःख दूर हो जाय ॥

(यहाँ पर नौ बार णमोकार मंत्र जपना चाहिये ।)

स्तुति पाठ

तुम तरणतारण भवनिवारण भविक मन आनन्दनो ।
श्रीनाभिनन्दन जगतवंदन आदिनाथ निरंजनो ॥१॥

तुम आदिनाथ अनादि सेऊँ सेय पदपूजा करूँ ।
कैलाशगिर पर रिषभ जिनवर पदकमल हिरदै धरूँ ॥२॥

तुम अजितनाथ अजीत जीते अष्टकर्म महाबली ।
यह विरद सुनकर सरन आयो कृपा कीज्यो नाथजी ॥३॥

तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलच्छण चन्द्रपुरी परमेश्वरो ।
महासेननन्दन जगतवंदन चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥४॥

तुम शान्ति पाँच कल्याण पूजूं सुद्ध मन वच काय जू ।
दुर्भिक्ष चौरी पापनाशन विघन जाय पलाय जू ॥५॥

तुम बालब्रह्म विवेकसागर भव्यकमल विकाशनो ।
श्री नेमनाथ पवित्र दिनकर पापतिमिर विनाशनो ॥६॥

जिन तजी राजुल राजकन्या कामसेन्या वश करी ।
चारित्ररथ चढ़ भये दूलह जाय शिवरमणी वरी ॥७॥

कंदर्प दर्प सु सर्पलच्छन कमठ शठ निर्मद कियो ।
अश्वसेननन्दन जगतवंदन सकल संघ मंगल कियो ॥८॥

जिन धरी बालकपणे दीक्षा कमठ मान विदारकैं ।
श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र के पद मैं नमूं शिर धारकैं ॥९॥

तुम कर्मघाता मोखदाता दीन जान दया करो ।
सिद्धार्थनन्दन जगतवंदन महावीर जिनेश्वरो ॥१०॥

छत्र तीन सोहै सुरनर मोहै वीनती अवधारिये ।
कर जोडि सेवक वीनवै प्रभु आवागमन निवारिये ॥११॥

अब होउ भव भव स्वामी मेरे मैं सदा सेवक रहों ।
कर जोड़ यो वरदान मांगूं मोक्षफल जावत लहों ॥१२॥

जो एक माँहीं एक राजत एक माँहीं अनेकनो ।
इक अनेक की नाहिं संख्या नमूं सिद्ध निरंजनो ॥१३॥

चौपाई

मैं तुम चरण कमल गुण गाय, बहुविधि भक्ति करी मन लाय ।
जनम जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ॥१४॥

कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय ।
बार बार मैं विनती करूँ, तुम सेवा भवसागर तरूँ ॥१५॥

नाम लेत सब दुख मिट जाय, तुम दर्शन देख्या प्रभु आय ।
तुम हो प्रभु देवन के देव, मैं तो करूँ चरण तव सेव ॥१६॥

(जिन पूजातें सब सुख होय, जिन पूजा सम अवरन कोय ।
जिन पूजातें स्वर्ग विमान, अनुक्रमतें पावें निर्वान ॥)

मैं आयो पूजन के काज, मेरो जन्म सफल भयो आज ।
पूजा करके नवाऊँ शीस, मुझ अपराध क्षमहु जगदीस ॥१७॥

दोहा

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान ।
मो गरीब की वीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥१८॥

पूजन करते देव का, आद्य मध्य अवसान ।
स्वर्गन के सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥१९॥

जैसी महिमा तुम विषै, और धरै नहिं कोय ।
जो सूरज में ज्योति है, तारा गण नहिं सोय ॥२०॥

नाथ तिहारे नाम तैं, अघ छिन माँहिं पलाय ।
ज्यों दिनकर परकाश तैं, अंधकार विनशाय ॥२१॥

बहुत प्रशंसा क्या करूँ, मैं प्रभु बहुत अज्ञान ।
पूजाविधि जानूँ नहीं, सरन राखि भगवान ॥२२॥

इति भाषास्तुतिपाठ समाप्त

पर्वपूजाएँ

सोलहकारण पूजा

कविवर द्यानतराय

अडिल्ल

सोलह कारण भाय तीर्थंकर जे भये ।
हरषे इन्द्र अपार मेरु पै ले गये ॥
पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चाव सौं ।
हमहू षोडश कारन भावैं भाव सौं ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् । ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् ।

अष्टक चौपई (१५ मात्रा) आंचलीबद्ध

कंचन-झारी निरमल नीर, पूजों जिनवर गुन-गंभीर ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दरशविशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पद [1]दाय ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवर के पाय ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं०

तंदुल धवल सुगंध अनूप, पूजौं जिनवर तिहुँ जगभूप ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व.

पाठान्तर १. पाय

फूल सुगंध मधुप-गुंजार, पूजौं जिनवर जग-आधार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि

सद नेवज बहुविधि पकवान, पूजौं श्रीजिनवर गुणखान।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं

दीपकज्योति तिमिर छयकार, पूजूँ श्रीजिन केवलधार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं

अगर कपूर गंध शुभ खेय श्रीजिनवर आगे महकेय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति

श्रीफल आदि बहुत फलसार, पूजौं जिन वांछित-दातार।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षपदप्राप्तये फलं निर्वपा...

जल फल आठों दरब चढ़ाय, 'द्यानत' वरत करों मन लाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश०
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपा..

जयमाला

दोहा—षोडश कारण गुण करै, हरै चतुरगति-वास।
पाप [1]पुण्य सब नाश के, ज्ञान-भानु परकाश ॥

चौपाई

दरश-विशुद्धि धरे जो कोई, ताकौ आवागमन न होई।
विनय-महा धारै जो प्राणी, शिववनिता की सखी बखानी ॥

पाठान्तर १. पुंज

शील सदा दिढ़ जो नर पालै, सो औरन की आपद टालै ।
ज्ञानाभ्यास करै मन माँहीं, ताके मोह-महातम नाहीं ॥

जो संवेग-भाव विसतारै, सुरग-मुकति-पद आप निहारै ।
दान देय मन हरष विशेखै, इह भव जस, परभव सुख देखै ॥

जो तप तपै खपै अभिलाषा, चूरे करम-शिखर गुरु भाषा ।
साधु-समाधि सदा मन लावै, तिहुँ जग भोग भोगि शिव जावै ॥

निश-दिन वैयावृत्य करैया, सो निहचै भव-नीर तिरैया ।
जो अरहंत-भगति मन आनै, सो जन विषय-कषाय न जाने ॥

जो आचारज-भगति करै हैं, सो निर्मल आचार धरै हैं ।
बहुश्रुतवंत-भगति जो करई, सो नर संपूरन श्रुत धरई ॥

प्रवचन-भगति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानंद-दाता ।
षट-आवश्यक [1]काल जो साधै, सो ही रत्नत्रय आराधै ॥

धर्म-प्रभाव करैं जे ज्ञानी, तिन शिव-मारग रीति पिछानी ।
वत्सल अंग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थंकर पदवी पावै ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि-विनयसंपन्नता-शीलव्रतेष्वनतिचाराभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग-संवेग-शक्तितस्त्यागतपस्साधुसमाधि-वैयावृत्यकरणार्हद्‌भक्ति-बहुश्रुतभक्ति-प्रवचनभक्ति-आवश्यकापरिहाणि-मार्गप्रभावना-प्रवचनवात्सल्येति तीर्थंकरत्व-कारणेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय ।
देव-इन्द्र-नर-वन्द्य-पद, 'द्यानत' शिव-पद होय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पाठान्तर १. नित

पंचमेरु पूजा

कविवर द्यानतराय

गीता छन्द

तीर्थंकरों के न्हवन जल तैं भये तीरथ शर्मदा,
तातैं प्रदच्छन देत सुर-गन पंच मेरुन की सदा।
दो जलधि ढाई-द्वीप में सब गनत-मूल विराजहीं,
पूजौं असी जिनधाम-प्रतिमा होहि सुख, दुख भाजहीं ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक चौपई (१५ मात्रा) आंचलीबद्ध

सीतल-मिष्टसुवास मिलाय, जल सौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय देखे नाथ परम सुख होय ॥
पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करों प्रनाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति

जल केसर करपूर मिलाय, गंधसौं पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसौं पूजौं जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाँचों०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा

बरन अनेक रहे महकाय, फूलन सौं पूजौं जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पाँचों०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः
कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

मन-वांछित बहु तुरत बनाय, चरु सौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पाँचों०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः
क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तम-हर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीप सौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पाँचों०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो
मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

खेऊँ अगर अमल अधिकाय, धूप सौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पाँचों०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽष्टकर्मदहनाय
धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरस सुवर्ण सुगन्ध सुभाय, फल सौं पूजौं श्री जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पाँचों०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो मोक्षपदप्राप्तये
फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पाँचों०

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

सोरठा

प्रथम सुदर्शन स्वामि, विजय अचल मन्दर कहा ।
विद्युन्माली नाम, पंच मेरु जग में प्रगट ॥

बेसरी छन्द

प्रथम सुदर्शन [1]मेरु विराजै, भद्रशाल वन भूपर छाजै ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥

ऊपर पंच-शतक पर सोहै, नन्दन-वन देखत मन मोहै ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥

साढ़े बासठ सहस उँचाई, वन [2]सुमनस शोभै अधिकाई ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥

ऊँचा जोजन सहस-छत्तीसं, पाण्डुक-वन सोहै गिरि-सीसं ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥

चारों मेरु समान बखाने, भूपर भद्रसाल चहुँ जाने ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥

ऊँचे पाँच शतक पर भाखे, चारों नन्दनवन अभिलाखे ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥

साढ़े पचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥

उच्च अठाइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥

सुर नर चारन वन्दन आवैं, सो शोभा हम किह मुख गावैं ।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मन वच तन वन्दना हमारी ॥

पाठान्तर १. मध्य २. सौमनस

ॐ ह्रीं सुदर्शन-विजय-अचल-मन्दर-विद्युन्मालि-पञ्चमेरुसम्बन्धिजिन-चैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

पंच मेरु की आरती, पढ़ै सुनै जो कोय ।
'द्यानत' फल जानै प्रभू, तुरत महासुख होय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

नन्दीश्वरद्वीप पूजा

कविवर द्यानतराय

अडिल्ल छन्द

सरब परब में बड़ो अठाई परब है,
नन्दीश्वर सुर जाँहि लेय वसु दरब है ।
हमैं सकति सो नाहि इहाँ करि थापना,
पूजैं जिनगृह-प्रतिमा है हित आपना ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिन-प्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाश-ज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (अवतार छंद)

कंचन-मणि-मय भृंगार, तीरथ-नीर भरा ।
तिहुँ धार दयी निरवार, जामन मरन जरा ॥
नन्दीश्वर-श्रीजिन-धाम, बावन पूज करों ।
वसुदिन [1]प्रतिमा अभिराम, आनँद-भाव धरों ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाठान्तर १. प्रति मैं

भव-तप-हर शीतल वाच, सो चन्दन नाहीं ।
प्रभु यह गुन कीजै साँच, आयो तुम ठाहीं ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहै ।
सब जीते अक्ष-समाज, तुम सम अरु को है ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

तुम काम विनाशक देव, ध्याऊँ फूलन सौं ।
लहुँ शील-लच्छमी एव, छूटों सूलन सौं ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज इन्द्रिय बलकार, सो तुमने चूरा ।
चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक की ज्योति-प्रकाश, तुम तन माँहिं लसै ।
टूटै करमन की राश, ज्ञान-कणी दरसै ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृष्णागर-धूप-सुवास, दश-दिशि नारि वरै ।
अति हरष-भाव परकाश, मानो नृत्य करै ॥ नन्दी०

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बहुविधि फल ले तिहुँ काल, आनँद राचत हैं।
तुम शिव-फल देहु दयाल, तुहि हम जाचत हैं॥ नन्दी०
ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हों॥ नन्दी०
ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

कार्तिक फाल्गुन साढ के अन्त आठ दिन माँहि।
नन्दीश्वर सुर जात हैं, हम पूजैं इह ठाहि॥

स्रग्विणी छंद

एक सौ त्रेसठ कोड़ि जोजन महा।
लाख [1]चौरासिया एक दिशि में लहा॥
आठमों दीप नन्दीश्वरं भास्वरं।
भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं॥१॥

चार दिशि चार अंजनगिरी राजहीं।
सहस चौरासिया एक दिशि छाजहीं॥
ढोल सम गोल ऊपर तले सुन्दरं॥ भौन०२

एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी।
एक इक लाख जोजन अमल-जल भरी॥
चहुँ दिशा चार वन लाख जोजन वरं॥ भौन०३

पाठान्तर १. चौरासि एक

सोल वापीन मधि सोल गिरि दधिमुखं ।
सहस दश महाजोजन लखत ही सुखं ॥
बावरी कोन दो माँहिं दो रतिकरं ॥ भौन॰४

शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे ।
चार सोलै मिलैं सर्व बावन लहे ॥
एक इक सीस पर एक जिनमन्दिरं ॥ भौन॰५

बिम्ब अठ एक सौ रतनमयी सोहही ।
देव देवी सरब नयन मन मोहही ॥
पाँच सै धनुष तन पद्म-आसन परं ॥ भौन॰६

लाल नख-मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं ।
स्याम-रंग भौंह सिर-केश छवि देत हैं ॥
वचन बोलत मनों हँसत कालुष हरं ॥ भौन॰७

कोटि-शशि-भान-दुति-तेज छिप जात है ।
महा-वैराग-परिणाम ठहरात है ॥
वयन नहि कहैं लखि होत सम्यग्धरं ॥ भौन॰८

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिक्षु द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा ।

सोरठा

नन्दीश्वर-जिन-धाम, प्रतिमा-महिमा को कहै ।
'द्यानत' लीनो नाम, यही भगति शिव-सुख करै ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

दशलक्षणधर्म पूजा

कविवर द्यानतराय

अडिल्ल

उत्तम छिमा मारदव आरजव भाव हैं,
सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव हैं ।
आकिंचन ब्रह्मचरज धरम दस सार हैं,
चहुँगति-दुख तैं काढ़ि मुकति करतार हैं ।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

(सोरठा)

हेमाचल की धार, मुनि-चित सम शीतल सुरभि ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ।।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ।।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अमल अखण्डित सार, तन्दुल चन्द्र समान शुभ ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ।।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरध-लोकलों ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ।।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज विविध निहार, उत्तम षट्-रस-संजुगत ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

बाति कपूर सुधार, दीपक-ज्योति सुहावनी ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगन्धता ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल की जाति अपार, घ्रान-नयन-मन-मोहने ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सौं ।
भव-आताप निवार, दस-लच्छन पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अंगपूजा

सोरठा

पीड़ैं दुष्ट अनेक, बाँध मार बहुविधि करैं ।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा ॥

चौपाई

उत्तम छिमा गहो रे भाई, इह भव जस, पर-भव सुखदाई ।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुन को औगुन कहै अयानो ॥

गीता छन्द

कहि है अयानो वस्तु छीनै, बाँध मार बहुविधि करै ।
घर तैं निकारै तन विदारै, बैर जो न तहाँ धरै ॥

तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहि जीयरा ।
अति क्रोध-अगनि बुझाय प्रानी, साम्यजल ले सीयरा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मान महाविष रूप, करहि नीच-गति जगत में ।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा ॥
उत्तम मार्दव-गुन मन माना, मान करन कौ कौन ठिकाना ।
वस्यो निगोद माँहिं तैं आया, दमरी रूकन भाग बिकाया ॥
रूकन बिकाया भागवश तैं, देव इकइन्द्री भया ।
उत्तम मुआ चाण्डाल हूवा, भूप कीड़ों में गया ॥
जीतव्य जोवन धन गुमान, कहा करै जल-बुद्‌बुदा ।
करि विनय बहु-गुन बड़े जन की, ज्ञान का पावै उदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कपट न कीजे कोय, चोरन के पुर ना बसै ।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु सम्पदा ॥
उत्तम-आर्जव रीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी ।
मन में हो सो वचन उचरिये, वचन होय सो तन सौं करिये ॥
करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निरमल आरसी ।
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट-प्रीति अंगार-सी ॥
नहिं लहै लछमी अधिक छल करि, करम-बन्ध-विशेषता ।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ॥
ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कठिन वचन मति बोल, पर-निन्दा अरु झूठ तज ।
साँच जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी ॥
उत्तम सत्य वरत पालीजै, पर विश्वासघात नहि कीजै ।
साँचे-झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो ॥

पेखो तिहायत पुरुष साँचे को दरब सब दीजिये ।
मुनिराज-श्रावक की प्रतिष्ठा साँच गुण लख लीजिये ॥
ऊँचे सिंहासन बैठि वसु नृप, धरम का भूपति भया ।
वच झूठ सेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया ॥
ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देह सौं ।
शौच सदा निरदोष, धरम बड़ो संसार में ॥
उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पाप को बाप बखाना ।
आशा-पास महा दुखदानी, सुख पावै सन्तोषी प्रानी ॥
प्रानी सदा शुचि शील जप-तप, ज्ञान-ध्यान प्रभाव तैं ।
नित गंग जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि-दोष सुभाव तैं ॥
ऊपर अमल मल भर्यो भीतर, कौन विधि घट शुचि कहै ।
बहु देह मैली सुगुन-थैली, शौच-गुन साधु लहै ॥
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो ।
संजम-रतन सँभाल, विषय-चोर बहु फिरत हैं ॥
उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भव के भाजैं अघ तेरे ।
सुरग-नरक-पशुगति में नाहीं, आलसहरन करन सुख ठाही ॥
ठाहीं पृथी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो ।
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो ॥
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग-कीच में ।
इक घरी मत विसरो करो नित, आव जम-मुख बीच में ॥
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तप चाहे सुरराय, करम-सिखर को वज्र है ।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम ॥

उत्तम तप सब माँहि बखाना, करम-शैल को वज्र समाना ।
वस्यो अनादि निगोद-मँझारा, भू-विकलत्रय-पशुतन धारा ॥
धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता ।
श्री जैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता ॥
अति महा-दुरलभ त्याग विषय-कषाय जो तप आदरैं ।
नर-भव अनूपम कनक-घर पर, मणिमयी कलसा धरैं ॥
ॐ ह्रीं उत्तमतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दान चार परकार, चार-संघ को दीजिए ।
धन बिजुली उनहार, नर-भव-लाहो लीजिए ॥
उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषध शास्त्र अभय आहारा ।
निहचै राग-द्वेष निरवारै, ज्ञाता दोनों दान सँभारै ॥
दोनों सँभारे कूप-जलसम, दरब घर में परिनया ।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया ॥
धनि साध शास्त्र अभय-दिवैया, त्याग राग विरोध को ।
बिन दान श्रावक साधु दोनों लहैं नाहीं बोध को ॥
ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करैं मुनिराज जी ।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइए ॥
उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह-चिंता दुख ही मानो ।
फाँस तनक-सी तन में सालै, चाह लँगोटी की दुख भालै ॥
भालै न समता सुख कभी नर, बिना मुनि मुद्रा धरैं ।
धनि नगन पर तन-नगन ठाड़े, सुर असुर पायनि परैं ॥
घरमाँहिं तिसना जो घटावै, रुचि नहीं संसार सौं ।
बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर-उपगार सौं ॥
ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शील-बाड [1]नौ राख, ब्रह्म-भाव अन्तर लखो ।
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नरभव सदा ॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता-बहिन-सुता पहिचानौ ।
सहैं बान-वरषा बहु सूरे, टिकै न नैन-बान लखि कूरे ॥

कूरे तिया के अशुचि तन में, काम-रोगी रति करैं ।
बहु मृतक सड़हि मसान माँहीं, काग ज्यों चोंचैं भरैं ॥
संसार में विष-बेल नारी, तजि गये जोगीश्वरा ।
'द्यानत' धरम दश पैंडि चढ़िकै, शिव-महल में पग धरा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्चय जयमाला

दोहा

दश लच्छन वन्दौं सदा, मन-वांछित फल दाय ।
कहों आरती भारती, हम पर होहु सहाय ॥

बेसरी छन्द

उत्तम छिमा जहाँ मन होई, अन्तर-बाहिर शत्रु न कोई ।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासै, नाना भेद ज्ञान सब भासै ॥

उत्तम आर्जव कपट मिटावै, दुरगति त्यागि सुगति उपजावै ।
उत्तम सत्य-वचन मुख बोलै, सो प्रानी संसार न डोलै ॥

उत्तम शौच लोभ परिहारी, सन्तोषी गुण-रतन-भंडारी ।
उत्तम संयम पालै ज्ञाता, नर-भव सफल करै ले साता ॥

---

१. (१) कामोत्तेजक आहार त्याग, (२) सात्त्विक वेषभूषा, (३) कुसंगति से बचना, (४) स्त्रीभुक्त आसन से बचना, (५) स्त्रियों के अंगोपांग निरीक्षण त्याग, (६) पूर्व भोगानुस्मरण त्याग, (७) स्त्रीकथा त्याग, (८) अतिमात्रा आहार त्याग, (९) एकांत में स्त्री से वार्त्तालाप त्याग ।

उत्तम तप निरवांछित पालै, सो नर करम-शत्रु को टालै ।
उत्तम त्याग करै जो कोई, भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥
उत्तम आकिंचन व्रत धारै, परम-समाधि-दशा विसतारै ।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावै, नर-सुर सहित मुकति-फल पावै ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-मार्दवार्जव-सत्य-शौच-संयम-तपस्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्य-दशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

करै करम की निरजरा, भव-पींजरा विनाश ।
अजर-अमर पद को लहै, 'द्यानत' सुख की राश ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

रत्नत्रय पूजा

पं. द्यानतराय

दोहा

चहुँ-गति-फनि-विष-हरन-मणि, दुख-पावक-जलधार ।
शिव-सुख-सुधा-सरोवरी, सम्यक्-त्रयी निहार ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

(सोरठा)

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन-केसर-गारि, परिमल-महा-सुरंग-मय ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा

तन्दुल अमल चितार, वासमती-सुखदास के ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

महकैं फूल अपार अलि-गुंजैं ज्यों थुति करैं ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धयुत ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप रतनमय सार, जोत प्रकाशै जगत में ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा

धूप सुवास विथार, चन्दन अगर कपूर की ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल शोभा अधिकार, लोंग छुहारे जायफल ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठ दरब निरधार, उत्तम सौं उत्तम लिये ।
जनम-रोग निरवार, सम्यक्-रत्नत्रय भजूँ ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यक् दरशन ज्ञान, व्रत शिव-मग तीनों मयी।
पार उतारन [1]यान, 'द्यानत' पूजों व्रतसहित ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दर्शन पूजा

दोहा

सिद्ध - अष्ट - गुनमय प्रगट, मुक्त जीव सोपान।
ज्ञान चरित जिहँ बिन अफल, सम्यकदर्श प्रधान॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट्।

अष्टक (सोरठा)

नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

पाठान्तर १. जान

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप-जोति तम-हार, घट-पट परकाशै महा ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप घ्रान-सुखकार, रोग-विघन जड़ता हरै ।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिवफल-करै ।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप निहचै लखै, तत्त्व-प्रीति व्योहार ।
रहितदोष पच्चीस हैं, सहित अष्ट गुन सार ॥

चौपाई

सम्यग् दरशन-रतन गहीजै, जिन-वच में संदेह न कीजै ।
इह-भव विभव चाह दुखदानी, पर-भव-भोग चहै मत प्रानी ॥

गीता

प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरम-गुरु-प्रभु परखिए ।
पर-दोष ढकिए धरम डिगते को सुथिर कर हरखिए ॥

चहुँ संघ को वात्सल्य कीजै, धरम की परभावना।
गुन आठ सौं गुन आठ लहिकै, इहाँ फेर न आवना॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसहितपञ्चविंशतिदोषरहितसम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

सम्यग्ज्ञानपूजा

दोहा

पंच-भेद जाके प्रगट, ज्ञेय-प्रकाशन-भान ।
मोह-तपन-हर-चंद्रमा, सोई सम्यग्ज्ञान॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट्।

अष्टक

(सोरठा)

नीर सुगंध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप-जोति तम-हार, घट-पट परकाशै महा ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप घ्रान-सुखकार, रोग-विघन जड़ता हरै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर-शिव-फल करै ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यग्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप जानै नियत, ग्रन्थ पठन व्योहार ।
संशय विभ्रम मोह विन, अष्ट अंग गुनकार ॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द

सम्यग्ज्ञान-रतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया ।
अच्छर शुद्ध अर्थ पहिचानो, अच्छर अरथ उभय संग जानो ॥

जानो सुकाल-पठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइए ।
तप रीति गहि बहुमान देकै, विनय गुन चित लाइए ॥

ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञान-दर्पन देखना ।
इस ज्ञान ही सौं भरत सीझा, और सब पट-पेखना ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यक्चारित्रपूजा

दोहा

विषयरोग औषध महा, दव-कषाय-जल-धार ।
तीर्थंकर जाको धरै, सम्यक्चारित सार ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

अष्टक (सोरठा)

नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल-छय करै ।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै ।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्वपामीति
पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा
नेवज विविध प्रकार, छुधा हरै थिरता करै ।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप जोति तमहार, घट पट परकाशै महा ।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप घ्रान सुखकार, रोग विघन जड़ता हरे ।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर शिव फल करै ।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौं सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

आप आप थिर नियत नय, तप संजम व्योहार ।
स्व-पर-दया दोनों लिये, तेरह-विध दुखहार ॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द

सम्यक्चारित रतन सँभालौ, पाँच पाप तजिकै व्रत पालौ ।
पंच समिति त्रय गुपति गहीजै, नर-भव सफल करहु तन छीजै ॥
छीजै सदा तन को जतन यह एक संजम पालिए ।
बहु रुल्यो नरक-निगोद माँहीं, [1]विष-कषायनि टालिए ॥
शुभ करम-जोग सुघाट आयो, पार हो दिन जात है ।
'द्यानत' धरम की नाव बैठो, शिव-पुरी कुशलात है ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाठान्तर १. विषयकषायनि / कषायविषयनि

समुच्चय जयमाला

दोहा

सम्यग्दरशन-ज्ञान-व्रत, इन बिन मुकति न होय ।
अन्ध पंगु अरु आलसी, जुदे जलैं दव-लोय ॥

चौपाई १६ मात्रा

जापै ध्यान सुथिर बन आवै, ताके करम-बन्ध कट जावै ।
तासौं शिव-तिय प्रीति बढ़ावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥

ताको चहुँगति के दुःख नाहीं, सो न परै भव-सागर माँहीं ।
जनम-जरा-मृत दोष मिटावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥

सोई दशलच्छन को साधै, सो सोलह कारण आराधै ।
सो परमातम पद उपजावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥

सोई शक्रचक्रिपद लेई, तीन लोक के सुख विलसेई ।
सो रागादिक भाव बहावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥

सोई लोकालोक निहारै, परमानन्द दशा विसतारै ।
आप तिरै औरन तिरवावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै ॥

दोहा

एक स्वरूप प्रकाश निज, वचन कह्यो नहि जाय ।
तीन भेद व्योहार सब 'द्यानत' को सुखदाय ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्रेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

क्षमावणी-पूजा

कवि मल्ल

छप्पय

अंग क्षमा जिन-धर्म तनो दृढ़-मूल बखानो ।
सम्यक् रतन सँभाल हृदय में निश्चय जानो ॥
तज मिथ्या विष-मूल और चित्त निर्मल ठानो ।
जिनधर्मी सौं प्रीत करो सब पातक भानो ॥
रत्नत्रय गह भविक-जन, जिन-आज्ञा सम चालिये ।
निश्चय कर आराधना, करम-रास को जालिये ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

अष्टक

नीर सुगन्ध सुहावनो, पदम-द्रह को लाय ।
जन्म-रोग निरवारिये, सम्यक् रतन लहाय ॥
क्षमा गहो उर जीवड़ा, जिनवर-वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टाङ्गसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविध-सम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय अनर्घपदप्राप्तये जन्मजरामृत्युविनाशनाय

केसर चन्दन लीजिये, संग कपूर घसाय ।
अलि पंकति आवत घनी, वास सुगन्ध सुहाय ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं

शालि अखण्डित लीजिये, कंचन-थाल भराय ।
जिनपद पूजों भाव सौं, अक्षत पद को पाय ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्

पारिजात अरु केतकी, पहुप सुगन्ध गुलाब ।
श्रीजिन-चरण-सरोज कूँ, पूज हर्ष चित-चाव ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि

शक्कर घृत सुरभी तना, व्यंजन षड्रस स्वाद ।
जिनके निकट चढ़ाय कर, हिरदे धरि आह्लाद ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं

हाटकमय दीपक रचो, बाति कपूर सुधार ।
शोधित घृत कर पूजिये, मोह-तिमिर निरवार ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं

कृष्णागर करपूर हो, अथवा दशविधि जान ।
जिन-चरणन ढिग खेइये, अष्ट-कर्म की हान ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं

केला अम्ब अनार फल, नारिकेल ले दाख ।
अग्र धरो जिनपद तने, मोक्ष होय जिन भाख ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय मोक्षपदप्राप्तये फलं

जल फल आदि मिलाय के, अरघ करो हरषाय ।
दु:ख-जलांजलि दीजिये, श्रीजिन होय सहाय ॥ क्षमा०

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टाङ्गसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

जयमाला

दोहा

उनतिस अंग की आरती, सुनो भविक चित लाय।
मन वच तन सरधा करो, उत्तम नर-भव पाय ॥

चौपाई

जैनधर्म में शंक न आनै, सो निःशंकित गुण चित ठानै ।
जप तप कर फल वांछै नाहीं, निःकांक्षित गुण हो जिस माँहीं ॥१॥

पर को देख गिलानि न आनै, सो तीजा सम्यक् गुण ठानै ।
आन देव को रंच न मानै, सो निर्मूढ़ता गुण पहिचानै ॥२॥

पर को औगुण देख जु ढाकै, सो उपगूहन श्रीजिन भाखै ।
जैनधर्म तैं डिगता देखै, थापै बहुरि स्थिति कर लेखै ॥३॥

जिन-धरमी सौं प्रीति निवहिये, गउ-बच्छवत वच्छल कहिये ।
ज्यों त्यों करि उद्योत बढ़ावै, सो प्रभावना अंग कहावै ॥४॥

अष्ट अंग यह पाले जोई, सम्यग्दृष्टी कहिये सोई ।
अब गुण आठ ज्ञान के कहिये, भाखे श्रीजिन मन में गहिये ॥५॥

व्यंजन अक्षर सहित पढ़ीजै, व्यंजन-व्यंजित अंग कहीजै ।
अर्थ सहित शुध शब्द उचारै, दूजा अर्थ समग्रह धारै ॥६॥

तदुभय तीजा अंग लखीजै, अक्षर-अर्थ सहित जु पढ़ीजै ।
चौथा कालाध्ययन विचारै, काल समय लखि सुमरण धारै ॥७॥

पंचम अंग उपधान बतावै, पाठ सहित तब बहु फल पावै ।
षष्ठम विनय सुलब्धि सुनीजै, वाणी बहुत विनय सु पढ़ीजै ॥८॥

जापै पढ़ै न लोपै जाई, अंग सप्तम गुरुवाद कहाई ।
गुर की बहुत विनय जु करीजै, सो अष्टम अंग धर सुख लीजै ॥९॥

यह आठों अंग-ज्ञान बढ़ावै, ज्ञाता मन वच तन कर ध्यावै ।
अब आगे चारित्र सुनीजै, तेरह-विध धर शिव-सुख लीजै ।।१०।।

छहों काय की रक्षा कर है, सोई अहिंसा व्रत चित धर है ।
हित मित सत्य वचन मुख कहिये, सो सतवादी केवल लहिये ।।११।।

मन वच काय न चोरी करिये, सोई अचौर्य-व्रत चित धरिये ।
मनमथ-भय मन रंच न आनै, सो मुनि ब्रह्मचर्य व्रत ठानै ।।१२।।

परिग्रह देख न मूर्छित होई, पंच महाव्रत-धारक सोई ।
महाव्रत ये पाँचों सु खरे हैं, सब तीर्थंकर इनको करे हैं ।।१३।।

मन में विकल्प रंच न होई, मनोगुप्ति मुनि कहिये सोई ।
वचन अलीक रंच नहिं भाखैं, वचन गुप्ति सो मुनिवर राखैं ।।१४।।

कायोत्सर्ग परीषह सहि हैं, ता मुनि काय-गुप्ति जिन कहि हैं ।
पंच समिति अब सुनिये भाई, अर्थ सहित भाखों जिनराई ।।१५।।

हाथ चार जब भूमि निहारैं, तब मुनि ईर्यापथ पद धारैं ।
मिष्ट वचन मुख बोलें सोई, भाषा-समिति तास मुनि होई ।।१६।।

भोजन छियालिस दूषण टारैं, सो मुनि एषण शुद्धि विचारैं ।
देखिके पोथी ले अरु धर हैं, सो आदान-निक्षेपण वर हैं ।।१७।।

मल-मूत्र एकान्त जु डारें, परतिष्ठापन समिति सँभारें ।
यह सब अंग उनतीस कहे हैं, जिन भाखे गणधर ने गहे हैं ।।१८।।

आठ-आठ-तेरहविधि जानो, दर्शन-ज्ञान-चरित्र सु ठानो ।
तातैं शिवपुर पहुँचो जाई, रत्नत्रय की यह विधि भाई ।।१९।।

रत्नत्रय पूरण जब होई, क्षमा क्षमा करियो सब कोई ।
चैत माघ भादों त्रय बारा, क्षमा क्षमा हम उर में धारा ।।२०।।

दोहा

यह क्षमावणी आरती, पढ़ै सुनै जो कोय ।
कहे 'मल्ल' सरधा करो, मुक्ति-श्री-फल होय ॥

ॐ ह्रीं निःशङ्किताङ्गाय निःकाङ्क्षिताङ्गाय निर्विचिकित्सिताङ्गाय निर्मूढताङ्गाय उपगूहनाङ्गाय सुस्थितीकरणाङ्गाय वात्सल्याङ्गाय प्रभावनाङ्गाय सम्यग्दर्शनाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं व्यञ्जनव्यञ्जिताय अर्थसमग्राय तदुभयसमग्राय कालाध्ययनाय उपधानोपहिताय विनयलब्धिप्रभावनाय गुर्वनिह्नवाय बहुमानोन्मानाय अष्टाङ्गसम्यग्ज्ञानाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ॐ ह्रीं अहिंसामहाव्रताय सत्यमहाव्रताय अचौर्यमहाव्रताय ब्रह्मचर्यमहाव्रताय अपरिग्रहमहाव्रताय मनोगुप्तये वचनगुप्तये कायगुप्तये ईर्यासमितये भाषासमितये एषणासमितये आदाननिक्षेपणसमितये प्रतिष्ठापनसमितये त्रयोदशविध-सम्यक्चारित्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा

दोष न गहियो कोय, गुण गह पढ़िये भाव सौं ।
भूल चूक जो होय, अर्थ विचारि जु शोधिये ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

सरस्वती पूजा

पं. द्यानतराय

दोहा

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जड़ रीति ।
भव सागर सौं ले तिरै, पूजैं जिन वच प्रीति ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेवि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेवि ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेवि ! अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट् ।

अष्टक

(त्रिभंगी)

छीरोदधि गंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखसंगा ।
भरि कंचन झारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चंगा ॥
तीर्थंकर की धुनि, गनधर ने सुनि,अंग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
सो जिनवर वानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्‌भवसरस्वतीदेव्यै जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं...

करपूर मंगाया, चन्दन आया, केशर लाया, रंग भरी ।
शारदपद वंदौं, मन अभिनंदौं, पापनिकंदौं, दाह हरी ।।तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्‌भवसरस्वतीदेव्यै भवातापविनाशनाय चन्दनं...

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अति अनुमोदं, चंदसमं ।
बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं ।।तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्‌भवसरस्वतीदेव्यै अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...

बहुफूल सुवासं, विमलप्रकाशं, आनन्दरासं, लाय धरैं ।
मम काम मिटायो, शील बढ़ायो, सुख उपजायो, दोष हरैं ।।तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्‌भवसरस्वतीदेव्यै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि...

पकवान बनाया, बहुघृत लाया,सब विधि भाया, मिष्ट महा ।
पूजूँ थुति गाऊँ, प्रीति बढ़ाऊँ, क्षुधा नशाऊँ, हर्ष लहा ।।तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्‌भवसरस्वतीदेव्यै क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...

करि दीपक ज्योतं, तम छय होतं, जोति उद्योतं, तुमहिं चढ़ै ।
तुम हो परकाशक, भरमविनाशक, हम घटभासक, ज्ञान बढ़ै ।।तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्‌भवसरस्वतीदेव्यै मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...

शुभगंध दशों कर, पावक में धर, धूप मनोहर, खेवत हैं ।
सब पाप जलावैं, पुण्य कमावैं, दास कहावैं, सेवत हैं ।।तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्‌भवसरस्वतीदेव्यै अष्टकर्मदहनाय धूपं ...

बादाम छुहारी, लोंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं ।
मन वांछित दाता, मेंट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं ।।तीर्थं०
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति

नयनन सुखकारी, मृदु गुनधारी, उज्ज्वल भारी, मोलधरै ।
शुभ गंध सम्हारा, वसन निहारा, तुम [1]तन धारा ज्ञान [2]करै ।।तीर्थं०
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं समर्पयामि स्वाहा ।

जल चंदन अच्छत, फूल चरूचत, दीप धूप अति, फल लावै ।
पूजा को ठानत, जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत', सुख पावै ।।तीर्थं०
ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं...

जयमाला

सोरठा—ओंकार धुनि सार, द्वादशांग वाणी विमल ।
नमौं भक्ति उर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै ।।१।।

बेसरी

पहला आचारांग बखानो, पद अष्टादश सहस प्रमानो ।
दूजो सूत्रकृतं अभिलाषं, पद छत्तीस सहस गुरु भाषं ।।२।।

तीजो ठाना अंग सुजानं, सहस बियालिस पद सरधानं ।
चौथो समवायांग निहारं, चौसठ सहस लाख इकधारं ।।३।।

पंचम व्याख्या [3]प्रगपति दरशं, दोय लाख अट्ठाइस सहसं ।
छट्ठो ज्ञातृकथा विसतारं, पांच लाख छप्पन हज्जारं ।।४।।

सप्तम उपासकाध्ययनंगं, सत्तर सहस ग्यारलख भंगं ।
अष्टम अंतकृतं दस ईसं, सहस अठाइस लाख तेईसं ।।५।।

नवम अनुत्तर दश सुविशालं, लाख बानवै सहस चवालं ।
दशम प्रश्नव्याकरण विचारं, लाख तिरानव सोल हजारं ।।६।।

पाठान्तर १. तर २. धरै ३. प्रज्ञप्ति

ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं, एक कोड़ि चौरासी लाखं ।
चार कोड़ि अरु पन्द्रह लाखं, दो हजार सब पद [1]गुरुभाखं ॥७॥

द्वादश दृष्टिवाद पन भेदं, इकसौ आठ कोड़ि [2]पद वेदं ।
अड़सठ लाख सहस छप्पन हैं, सहित पंचपद मिथ्या हन हैं ॥८॥

इक सौ बारह कोड़ि बखानो, लाख तिरासी ऊपर जानो ।
ठावन सहस पंच अधिकाने, द्वादश अंग सर्व पद माने ॥९॥

कोड़ि इकावन आठ ही लाखं, सहस चौरासी छह सौ भाखं ।
साढ़े इकीस सिलोक बताये, एक एक पद के ये गाये ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

जा वानी के ज्ञान में, सूझै लोक अलोक ।
'द्यानत' जग जयवंत हो, सदा देत हूँ धोक ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

सलूना पूजा

श्रीअकम्पनाचार्यादि सप्तशत मुनि पूजा

चाल जोगीरासा

पूज्य अकम्पन साधु-शिरोमणि सात-शतक मुनि ज्ञानी ।
आ हस्तिनापुर के कानन में हुये अचल दृढ़ ध्यानी ॥

दुखद सहा उपसर्ग भयानक सुन मानव घबराये ।
आत्म-साधना के साधक वे, तनिक नहीं अकुलाये ॥

योगिराज श्री विष्णु त्याग तप, वत्सलता-वश आये ।
किया दूर उपसर्ग, जगत-जन मुग्ध हुए हर्षाये ॥

पाठान्तर १. गुरुसाखं २.पन

सावन शुक्ला पन्द्रस पावन शुभ दिन था सुख दाता ।
पर्व सलूना हुआ पुन्यप्रद यह गौरवमय गाथा॥

शान्ति दया समता का जिनसे नव आदर्श मिला है ।
जिनका नाम लिये से होती जागृत पुण्य-कला है॥

करूँ वन्दना उन गुरुपद की वे गुण मैं भी पाऊँ ।
आह्वानन संस्थापन सन्निधिकरण करूँ हर्षाऊँ॥

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (गीता छन्द)

मैं उर-सरोवर से विमल जल भाव का लेकर अहो ।
नत पाद-पद्मों में चढ़ाऊँ मृत्यु जनम जरा न हो॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करूँ पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्यो
जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सन्तोष मलयागिरिय चन्दन निराकुलता सरस ले ।
नत पादपद्मों में चढ़ाऊँ विश्वताप नहीं जले॥ श्रीगुरु०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

तंदुल अखंडित शुद्ध आशा के नवीन सुहावने ।
नत पादपद्मों में चढ़ाऊँ दीनता क्षयता हने॥ श्रीगुरु०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये
अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

ले विविध विमल विचार सुन्दर सरस सुमन मनोहरे ।
नत पादपद्मों में चढ़ाऊँ काम की बाधा हरे ॥ श्रीगुरु०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्यः कामबाणविनाशनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ भक्ति घृत में विनय के पकवान पावन मैं बना ।
नत पादपद्मों में चढ़ा मेटूँ क्षुधा की यातना ॥ श्रीगुरु०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्यः क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्तम कपूर विवेक का ले आत्म-दीपक में जला ।
कर आरती गुरु की हटाऊँ मोह-तम की यह बला ॥ श्रीगुरु०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ले त्याग-तप की यह सुगन्धित धूप मैं खेऊँ अहो ।
गुरुचरण-करुणा से करम का कष्ट यह मुझको न हो ॥ श्रीगुरु०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं..

शुचि-साधना के मधुरतम प्रिय सरस फल लेकर यहाँ ।
नत पादपद्मों में चढ़ाऊँ मुक्ति मैं पाऊँ यहाँ ॥ श्रीगुरु०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह आठ द्रव्य अनूप श्रद्धा स्नेह से पुलकित हृदय ।
नत पादपद्मों में चढ़ाऊँ भव-पार मैं होऊं अभय ॥ श्रीगुरु०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

जयमाला

सोरठा

पूज्य अकम्पन आदि सात शतक साधक सुधी ।
यह उनकी जयमाल वे मुझको निज भक्ति दें ॥

पद्धरि छन्द

वे जीव दया पालें महान, वे पूर्ण अहिंसक ज्ञानवान ।
उनके न रोष उनके न राग, वे करें साधना मोह त्याग ॥

अप्रिय असत्य बोलें न बैन, मन वचन काय में भेद है न ।
वे महासत्य धारक ललाम, हैं उनके चरणों में प्रणाम ॥

वे लें न कभी तृणजल अदत्त, उनके न धनादिक में ममत्त ।
वे व्रत अचौर्य दृढ़ धरें सार, है उनको सादर नमस्कार ॥

वे करें विषय की नहीं चाह, उनके न हृदय में काम दाह ।
वे शील सदा पालें महान, सब मग्न रहें निज आत्मध्यान ॥

सब छोड़ वसन भूषण निवास, माया ममता स्नेह आस ।
वे धरें दिगम्बर वेष शान्त, होते न कभी विचलित न भ्रान्त ॥

नित रहें साधना में सुलीन, वे सहैं परीषह नित नवीन ।
वे करें तत्त्व पर नित विचार, है उनको सादर नमस्कार ॥

पंचेन्द्रिय दमन करें महान, वे सतत बढ़ावें आत्म ज्ञान ।
संसार देह सब भोग त्याग, वे शिव-पथ साधें सतत जाग ॥

'कुमरेश' साधु वे हैं महान, उनसे पाये जग नित्य त्राण ।
मैं करूँ वन्दना बार बार, वे करें भवार्णव मुझे पार ॥

घत्ता

मुनिवर गुणधारक पर-उपकारक, भव दुखहारक सुख-कारी ।
वे करम नशायें सुगुण दिलायें, मुक्ति मिलायें भय-हारी ॥

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीअकम्पनाचार्यादि-सप्तशतमुनिभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

सोरठा

श्रद्धा भक्ति समेत जो जन यह पूजा करे ।
वह पाये निज ज्ञान, उसे न व्यापे जगत दुख ॥
इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री विष्णुकुमार महामुनि पूजा

लावनी छन्द

श्री योगी विष्णुकुमार बाल वैरागी,
पाई वह पावन ऋद्धि विक्रिया जागी ।
सुन मुनियों पर उपसर्ग स्वयं अकुलाये,
हस्तिनापुर वे वात्सल्य-भरे हिय आये ॥

कर दिया दूर सब कष्ट साधनाबलसे,
पा गये शान्ति सब साधु अग्निके झुलसे ।
जन जन ने जय-जयकार किया मन भाया,
मुनियों को दे आहार स्वयं भी पाया ॥

हैं वे मेरे आदर्श सर्वदा स्वामी,
मैं उनकी पूजा करूँ बनूं अनुगामी ।
वे दें मुझमें यह शक्ति भक्ति प्रभु पाऊँ,
मैं कर आतम कल्याण मुक्त हो जाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुने ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (चाल जोगीरासा)

श्रद्धा की वापी से निर्मल, भावभक्ति जल लाऊँ ।
जनम मरण मिट जायें मेरे इससे विनत चढ़ाऊँ ॥

विष्णुकुमार मुनीश्वर वन्दूं यति-रक्षा हित आये ।
यह वात्सल्य हृदय में मेरे अभिनव ज्योति जगाये ॥
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति

मलयागिरि धीरज से सुरभित समता चन्दन लाऊँ ।
भव-भव का आताप न हो यह इससे विनत चढ़ाऊँ ॥ विष्णु०
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति

चन्द्रकिरण सम आशाओं के अक्षत सरस नवीने ।
अक्षय पद मिल जाये मुझको गुरु सन्मुख धर दीने ॥ विष्णु०
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा

उर उपवन से चाह सुमन चुन विविध मनोहर लाऊँ ।
व्यथित करे नहिं काम वासना इससे विनत चढ़ाऊँ ॥ विष्णु०
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये कामबाणविध्वंसाय पुष्पाणि निर्वपामीति

नव नव व्रत के मधुर रसीले मैं पकवान बनाऊँ ।
क्षुधा न बाधा यह दे पाये इससे विनत चढ़ाऊँ ॥ विष्णु०
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति

मैं मन का मणिमय दीपक ले ज्ञान-वातिका जारूँ ।
मोह-तिमिर मिट जाये मेरा गुरु सन्मुख उजियारूं ॥ विष्णु०
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

ले विराग की धूप सुगन्धित त्याग धूपायन खेऊँ ।
कर्म आठ का ठाठ जलाऊँ गुरु के पद नित सेऊँ ॥ विष्णु०
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूजा सेवा दान और स्वाध्याय विमल फल लाऊँ ।
मोक्ष विमल फल मिले इसी से विनत गुरू पद ध्याऊँ ॥ विष्णु०
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह उत्तम वसु द्रव्य संजोये हर्षित भक्ति बढ़ाऊँ ।
मैं अनर्घपद को पाऊँ गुरुपद पर बलि बलि जाऊँ ॥ विष्णु०
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

श्रावण-शुक्ला पूर्णिमा यति रक्षा दिन जान ।
रक्षक विष्णु मुनीश की यह गुणमाल महान ॥

पद्धरि छन्द

जय योगिराज श्रीविष्णु धीर, आकर तुम हर दी साधु-पीर ।
हतिनापुर वे आये तुरन्त, कर दिया विपत का शीघ्र अन्त ॥

वे ऋद्धि सिद्धि-साधक महान, वे दयावान वे ज्ञानवान ।
धर लिया स्वयं वामन सरूप, चल दिये विप्र बनकर अनूप ॥

पहुंचे बलि नृप के राजद्वार, वे तेज-पुंज धर्मावतार ।
आशीष दिया आनन्दरूप, हो गया मुदित सुन शब्द भूप ॥

बोला वर मांगो विप्रराज, दूंगा मनवांछित द्रव्य आज ।
पग तीन भूमि याची दयाल, बस इतना ही तुम दो नृपाल ॥

नृप हँसा समझ उनको अजान, बोला यह क्या, लो और दान ।
इससे कुछ इच्छा नहीं शेष, बोले वे ये ही दो नरेश ॥

संकल्प किया दे भूमि दान, ली वह मन में अति मोद मान ।
प्रगटाई अपनी ऋद्धि सिद्धि, हो गई देह की विपुल वृद्धि ॥

दो पग में नापा जग समस्त, हो गया भूप बलि अस्त-व्यस्त ।
इक पग को दो अब भूमिदान, बोले बलि से करुणा-निधान ॥

नत मस्तक बलि ने कहा अन्य, है भूमि न मुझ पर हे अनन्य ।
रख लें पग मुझ पर एक नाथ, मेरी हो जाये पूर्ण बात ॥

कहकर तथास्तु पग दिया आप, सह सका न बलि वह भार-ताप ।
बोला तुरन्त ही कर विलाप, कर दें अब मुझको क्षमा आप ॥
मैं हूँ दोषी मैं हूँ अजान, मैंने अपराध किया महा ।
ये दुखित किये सब साधु-सन्त, अब करो क्षमा हे दयावन्त ॥
तब की मुनिवर ने दया-दृष्टि, हो उठी गगन से महावृष्टि ।
पा गये दग्ध वे साधु त्राण, जन-जन के पुलकित हुये प्राण ॥
घर घर में छाया मोद-हास, उत्सव ने पाया नव प्रकाश ।
पीड़ित मुनियों का पूर्णमान, रख मधुर दिया आहार दान ॥
युग युग तक इसको रहे याद, करसूत्र बंधाया साह्लाद ।
बन गया पर्व पावन महान, रक्षाबन्धन सुन्दर निधान ॥
वे विष्णु मुनीश्वर परम सन्त, उनकी गुण-गरिमा का न अन्त ।
वे करें शक्ति मुझको प्रदान, 'कुमरेश' प्राप्त हो आत्मज्ञान ॥

घत्ता

श्री मुनि विज्ञानी आतम-ध्यानी, मुक्ति-निशानी सुखदानी ।
भव-ताप विनाशे सुगुण प्रकाशे, उनकी करुणा कल्यानी ॥

ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमारमुनये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

विष्णुकुमार मुनीश को, जो पूजे धर प्रीत ।
वह पावे 'कुमरेश' शिव, और जगत में जीत ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

तीर्थंकर पूजाएँ

श्री आदिनाथ जिनपूजा

नाभिराय मरुदेवि के नन्दन, आदिनाथ स्वामी महाराज,
सर्वार्थसिद्धि तैं आप पधारे, मध्य लोक माँहि जिनराज ।
इन्द्रदेव सब मिलकर आये, जन्म महोत्सव करने काज,
आह्वानन सब विधि मिल करके, अपने कर पूजें प्रभु पाँय ॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

क्षीरोदधि को उज्ज्वल जल ले, श्री जिनवर पद पूजन जाय ।
जन्म जरा दुख मेटन कारन, ल्याय चढ़ाऊँ प्रभु के पाँय ॥
श्री आदिनाथ के चरणकमल पर, बलि-बलि जाऊँ मन वच काय ।
हे करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पाँय ॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ...

मलयागिरि चन्दन दाहनिकन्दन, कंचन झारी में भर ल्याय ।
श्रीजी के चरण चढ़ावो भविजन, भव आताप तुरत मिट जाय ॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति

शुभशालि अखंडित सौरभ मंडित, प्रासुक जल सौं धोकर ल्याय ।
श्रीजी के चरण चढ़ावो भविजन, अक्षयपद को तुरत उपाय ॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति...

कमल केतकी बेल चमेली, श्री गुलाब के पुष्प मँगाय ।
श्रीजी के चरण चढ़ावो भविजन, कामबाण तुरत हि नसि जाय ॥श्री०

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि...

नेवज लीना षट्-रस भीना, श्री जिनवर आगे धरवाय ।
थाल भराऊँ क्षुधा नसाऊँ, जिन गुण गावत मन हरषाय ।।श्री०
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति..

जगमग जगमग होत दशों दिश, ज्योति रही मन्दिर में छाय ।
श्री जी के सन्मुख करत आरती, मोहतिमिर नासै दुखदाय ।।श्री०
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

अगर कपूर सुगन्ध मनोहर चन्दन कूट सुगन्ध मिलाय ।
श्री जी के सन्मुख खेय धूपायन, कर्म जरे चहुँगति मिटि जाय ।।श्री०
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय ।
महामोक्षफल पावन कारन, ल्याय चढ़ाऊँ प्रभु के पाँय ।।श्री०
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुचि निर्मल नीरं गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय ।
दीप धूप फल अर्घ सुलेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय ।।श्री०
ॐ ह्रीं आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पञ्चकल्याणकार्घ

सर्वारथसिधि तैं चये, मरुदेवी उर आय ।
दोज असित आषाढ़ की, जजूँ तिहारे पाँय ।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चैतवदी नौमी दिना, जन्म्यां श्री भगवान ।
सुरपति उत्सव अति करा, मैं पूजौं धरि ध्यान ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तृणवत् ऋद्धि सब छाँड़ि केतप धार्यो वन जाय ।
नौमी चैत्र असेत की, जजूँ तिहारे पाँय ॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

फाल्गुन वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान ।
इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजों इह थान ॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

माघ चतुर्दशि कृष्ण की, मोक्ष गये भगवान ।
भवि जीवों को बोधि के, पहुँचे शिवपुर थान ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

आदीश्वर महाराज मैं विनती तुमसे करूँ ।
चारों गति के माँहिं मैं दुःख पायो सो सुनो ॥
अष्ट कर्म मैं एकलो, यह दुष्ट महादुख देत हो ।
कबहूँ इतर निगोद में मोकूँ, पटकत करत अचेत हो ॥
म्हारी दीनतणी सुन वीनती ॥ टेक ॥

प्रभु कबहुँक पटक्यो नरक में, जठै जीव महादुख पाय हो ।
निष्ठुर निरदई नारकी, जठै करत परस्पर घात हो ॥म्हारी०

प्रभु नरक तणां दुख अब कहूँ, जठै करत परस्पर घात हो ।
कोइयक बाँध्यो खंभस्यो, पापी दे मुदगर की मार हो ॥म्हारी०

कोइयक काटें करोत सों, पापी अंगतणी दोयफाड़ हो ।
प्रभु यह विधि दुख भुगत्या घणां, फिर गति पाई तिरयंच हो ॥म्हारी०

हिरणा बकरा बाछला, पशु दीन गरीब अनाथ हो ।
[1](पकड़ कसाई जाल में, पापी काट काट तन खाय हो ।)
प्रभु मैं ऊंट बलद भैंसा भयो, जापैं लादियो भार अपार हो ।।म्हारी०

नहिं चाल्यौ जब गिर पर्‌यो, पापी दे सोटन की मार हो ।
प्रभु कोइयक पुण्य संजोग सूँ, मैं तो पायो स्वर्ग निवास हो ।।म्हारी०

देवांगना संग रमि रह्यो जठै भोगनि को परताप हो ।
प्रभु संग अप्सरा रमि रह्यो, कर कर अति अनुराग हो ।।म्हारी०

कबहुँक नंदनवन विषैं प्रभु, कबहुँक वनगृह माँहिं हो ।
प्रभु यह विधिकाल गमाय कैं, फिर माला गई मुरझाय हो ।।म्हारी०

देव थिती सब घट गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो ।
सोच करत तन खिर पड्‌यो, फिर उपज्यो गरभ में जाय हो ।।म्हारी०

प्रभु गर्भतणा दुख अब कहूँ, जठै सकुड़ाई की ठौर हो ।
हलन चलन नहिं कर सक्यो, जठै सघन कीच घनघोर हो ।।म्हारी०

माता खावै चरपरो, फिर लागै तन संताप हो ।
प्रभु जो जननी तातो भखै, फिर उपजै तन संताप हो ।।म्हारी०

औंधे मुख झूल्यो रह्यो, फेर निकसन कौन उपाय हो ।
कठिन-कठिन कर नीसर्यो, जैसे निसरै जंत्री में तार हो ।।म्हारी०

प्रभु फिर निकसत ही धरत्यां पड्‌यो, फिर लागी भूख अपार हो ।
रोय-रोय बिलख्यो घणों, दुख वेदन को नहि पार हो ।।म्हारी०

प्रभु दुख मेटन समरथ धनी यातैं लागूँ तिहारे पाँय हो ।
सेवक अरज करै प्रभु मोकूँ, भवदधि पार उतार हो ।।म्हारी०
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति...

१. यह पंक्ति प्रचलित नहीं है ।

दोहा

श्रीजी की महिमा अगम है, कोई न पावै पार ।
मैं मति अल्प अज्ञान हूँ, कौन करै विस्तार ॥

विनती ऋषभ जिनेश की, जो पढ़सी मन ल्याय ।
सुरगों में संशय नहीं, निहचै शिवपुर जाय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री चन्द्रप्रभजिन पूजा

कविवर वृन्दावनदास

छप्पय

चारु चरन आचरन, चरन चितहरन चिह्नचर,
चन्द चन्दतन चरित, चंद-थल चहत चतुर नर ।
चतुक चण्ड चकचूरि, चारि चिद्चक्र गुनाकर,
चंचल चलित सुरेश, चूलनुत चक्र धनुरधर ॥

चर-अचर-हितू तारन-तरन, सुनत चहकि चिरनंद शुचि ।
जिनचंदचरन चरच्यो चहत, चित-चकोर नचि रच्चि रुचि ॥

दोहा

धनुष डेढ सौ तुंग तन, महासेन नृपनन्द ।
मातु लछमना उर जये, थापों चन्द-जिनन्द ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (अवतार छंद)

गंगा ह्रद निरमल नीर, हाटक भृंगभरा,
तुम चरन जजों वर वीर, मेटो जनम जरा ।

श्री चंदनाथ दुति चंद, चरनन चंद लगै,
मन वच तन जजत अमंद, आतम जोति जगै ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति

श्रीखण्ड कपूर सुचंग, केसर रंगभरी ।
घसि प्रासुक जल के संग, भव आताप हरी ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति..

तन्दुल सित सोम समान सम लय अनियारे ।
दिय पुंज मनोहर आन तुम पदतर प्यारे ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति..

सुरद्रुम के सुमन सुरंग, गंधित अलि आवै ।
तासों पद पूजत चंग, काम विथा जावै ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति

नेवज नाना परकार, इन्द्रिय बलकारी ।
सो लै पद पूजों सार, आकुलताहारी ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति

तम भंजन दीप सँवार, तुम ढिग धारतु हों ।
मम तिमिर मोह निरवार, यह गुन धारतु हों ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं निर्वपामीति

दश गंध हुताशन माँहि, हे प्रभु खेवतु हों ।
मम करम दुष्ट जरि जाहिं, यातैं सेवतु हो ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अति उत्तम फल सु मंगाय, तुम गुन गावतु हों ।
पूजों तन मन हरषाय, विघन नशावतु हों ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों ।
पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमों ।।श्री०

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक

तोटक

कलि पंचम चैत सुहात अली, गरभागम मंगल मोद भली ।
हरि हर्षित पूजत मातु पिता, हम ध्यावत पावत शर्म सिता ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपञ्चम्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं०

कलि पौष इकादशि जन्म लयो, तब लोकविषै सुख थोक भयो ।
सुरईश जजें गिरशीश तबै, हम पूजत हैं नुत शीश अबै ।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं०

तप दुद्धर श्रीधर आप धरा, कलि पौष इग्यारसि पर्व वरा ।
निज ध्यान विषैं लवलीन भये, धनि सो दिन पूजत विघ्न गये ।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं०

वर केवलभानु उद्योत कियो, तिहुँ लोक तणों भ्रम मेट दियो ।
कलि फाल्गुन सप्तमी इन्द्र जजे, हम पूजहिं सर्व कलंक भजे ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं०

सित फाल्गुन सप्तमि मुक्त गये, गुणवन्त अनन्त अबाध भये ।
हरि आय जजें तित मोद धरे, हम पूजत ही सब पाप हरे ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं०

जयमाला

दोहा

हे मृगांक-अंकित-चरण, तुम गुण अगम अपार ।
गणधर से नहि पार लहि, तौ को वरनत सार ।।

पै तुम भगति हिये मम, प्रेरै अति उमगाय ।
तातैं गाऊँ सुगुण तुम, तुम ही होउ सहाय ॥

पद्धरि छन्द

जय चन्द्र जिनेन्द्र दया-निधान, भवकानन हानन दवप्रमान ।
जय गरभ जनम मंगल दिनन्द, भवि जीव विकासन शर्म कन्द ॥

दश लक्ष पूर्व की आयु पाय, मनवांछित सुख भोगे जिनाय ।
लखि कारण ह्वै जग तैं उदास, चिन्त्यो अनुप्रेक्षा सुख निवास ॥

तित लौकांतिक बोध्यो नियोग, हरि शिविका सजि धरियो अभोग ।
तापै तुम चढ़ि जिनचन्दराय, ता छिन की शोभा को कहाय ॥

जिन अंग सेत सित चमर ढार, सित छत्र शीस गल-गुलक हार ।
सित रतनजड़ित भूषण विचित्र, सित चन्द्र-चरण चरचैं पवित्र ॥

सित तन-द्युति नाकाधीश आप, सित शिविका कांधें धरि सुचाप ।
सित सुजस सुरेश नरेश सर्व, सित चित में चिन्तत जात पर्व ॥

सित चन्द-नगरतैं निकसि नाथ, सित वन में पहुँचे सकल साथ ।
सित सिला शिरोमणि स्वच्छ छांह, सित तप तित धारौ तुम जिनांह ॥

सित पय को पारण परम सार, सित चन्द्रदत्त दीनों उदार ।
सित कर में सो पयधार देत, मानो बाँधत भवसिन्धु सेत ॥

मानो सुपुण्यधारा प्रतच्छ, तित अचरज पन सुर किय ततच्छ ।
फिर जाय गहन सित तप करंत, सित केवलज्योति जग्यो अनन्त ॥

लहि समवसरण रचना महान, जाके देखत सब पापहान ।
जहं तरु अशोक शौभै उत्तंग, सब शोकतनो चूरै प्रसंग ॥

सुर सुमनवृष्टि नभतैं सुहात, मनु मन्मथ तज हथियार जात ।
बानी जिन मुखसौं खिरत सार, मनु तत्त्व प्रकाशन मुकुरधार ॥

जहँ चौसठ चमर अमर ढुरंत, मनु सुजसमेघ झरि लगिय तन्त ।
सिंहासन है जहँ कमल जुक्त, मनु शिवसरवर को कमलशुक्त ॥

दुंदुभि जित बाजत मधुर सार, मनु करम जीत को है नगार ।
सिर छत्र फिरै त्रय श्वेतवर्ण, मनु रतन तीन त्रय ताप हर्ण ॥

तन प्रभातनों मण्डल सुहात, भवि देखत निज भव सात सात ।
मनु दर्पण द्युति यह जगमगाय, भविजन भव मुख देखत सुआय ॥

इत्यादि विभूति अनेक जान, बाहिज दीसत महिमा महान ।
ताको वरणत नहि लहत पार, तौ अन्तरंग को कहै सार ॥

अनअन्त गुणनि-जुत करि विहार, धरमोपदेश दे भव्य तार ।
फिर जोगनिरोधि अघाति हान, सम्मेद थकी लिय मुकतिथान ॥

'वृन्दावन' वन्दत शीश नाय, तुम जानत हो मम उर जु भाय ।
तातैं का कहों सु बार-बार, मनवांछित कारज सार-सार ॥

घत्तानन्द

जय चन्द-जिनंदा आनंदकंदा, भव-भय-भंजन राजै हैं ।
रागादिक-द्वन्दा हरि सब फन्दा, मुकति माँहि थिति साजै हैं ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चौबोला

आठों दरब मिलाय गाय गुण, जो भविजन जिनचन्द जजैं ।
ताके भव-भव के अघ भाजैं, मुक्त सारसुख ताहि सजैं ॥
जम के त्रास मिटैं सब ताके, सकल अमंगल दूर भजैं ।
'वृन्दावन' ऐसो लखि पूजत, जातैं शिवपुरि राज रजैं ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री चन्द्रप्रभ पूजा (देहरा)

शुभ पुण्य उदय से ही प्रभुवर, दर्शन तेरा कर पाते हैं,
केवल दर्शन से ही प्रभु, सारे पाप मेरे कट जाते हैं ।
देहरे के चन्द्रप्रभु स्वामी, आह्वानन करने आया हूँ,
मम हृदय कमल में आ तिष्ठो तेरे चरणों में आया हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

भोगों में फँसकर हे प्रभुवर, जीवन को वृथा गँवाया है ।
इस जन्म मरण से मुझे नहीं, छुटकारा मिलने पाया है ॥
मन में कुछ भाव उठे मेरे, जल झारी में भर लाया हूँ ।
मन के मिथ्या मल धोने को, चरणों में तेरे आया हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति

निज अन्तर शीतल करने को, चन्दन घिसकर ले आया हूँ ।
मन शान्त हुआ ना इससे भी, तेरे चरणों में आया हूँ ॥
क्रोधादि कषायों के कारण, संतप्त हृदय प्रभु मेरा है ।
शीतलता मुझको मिल जाये, हे नाथ सहारा तेरा है ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति..

पूजा में ध्यान लगाने को, अक्षत धोकर ले आया हूँ ।
चरणों में पुंज चढ़ा करके, अक्षय पद पाने आया हूँ ॥
निर्मल आत्मा होवे मेरी, सार्थक पूजा तब तेरी है ।
निज शाश्वत अक्षयपद पाऊँ, ऐसी प्रभु विनती मेरी है ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति..

पर गंध मिटाने को प्रभुवर, वह पुष्प सुगंधी लाया हूँ।
तेरे चरणों में अर्पित कर, तुम-सा ही होने आया हूँ॥
श्री चन्द्र प्रभु यह अरज मेरी, भवसागर पार लगा देना।
यह काम अग्नि का रोग बढ़ा, छुटकारा नाथ दिला देना॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति..

दुख देती है तृष्णा मुझको, कैसे छुटकारा पाऊँ मैं।
हे नाथ बता दो आज मुझे, चरणों में शीश झुकाऊँ मैं॥
यह क्षुधा मिटाने को प्रभुवर, नैवेद्य बनाकर लाया हूँ।
हे नाथ मिटा दो क्षुधा मेरी, भव-भव में फिरता आया हूँ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं निर्वपामीति...

यह दीपक की ज्योती प्यारी, अंधियारा दूर भगाती है।
पर यह भी नश्वर है प्रभुवर, झंझा इसको धमकाती है॥
हे चन्द्रप्रभु दे दो ऐसा दीपक अज्ञान मिटा डाले।
मोहान्धकार हो नष्ट मेरा, यह ज्योति नई मन है बाले॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं निर्वपामीति..

शुभ धूप दशांग बना करके, पावक में खेऊँ हे प्रभुवर।
क्षय कर्मों का प्रभु हो जावे, जग का झंझट सारा नश्वर॥
हे चन्द्रप्रभु अन्तर्यामी, कैसे छुटकारा अब पाऊँ।
हे नाथ बता दो मार्ग मुझे, चरणों पर बलिहारी जाऊँ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बादाम लवंगादिक, भर थाली प्रभु मैं लाया हूँ।
चरणों में नाथ चढ़ा करके, अमृत रस पीने आया हूँ॥
करुणा के सागर दया करो, मुक्ति का मारग अब पाऊँ।
दे दो वरदान प्रभु ऐसा शिवपुर को हे प्रभुवर जाऊँ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत पुष्प चरू, दीपक घृत से भर लाया हूँ ।
दश गंध धूप फल मिला अर्घ ले, स्वामी अति हरषाया हूँ॥
हे नाथ अनर्घ पद पाने को, तेरे चरणों में आया हूँ ।
भव-भव के बंध कटें प्रभुवर, यह अरज सुनाने आया हूँ॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पंचकल्याणक

जब गर्भ में प्रभु जी आये थे, इन्द्रों ने नगर सजाया था ।
छः मास प्रथम ही आकर के, रत्नों का मेह बरसाया था॥
तिथि चैत्र वदी पंचम प्यारी, जब गर्भ में प्रभु जी आये थे ।
लक्ष्मणा माता को पहले ही, सोलह सपने दिखलाये थे॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय चैत्रकृष्णपञ्चम्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय अर्घं..
शुभ बेला में प्रभु जन्म हुआ, वदि पौष एकादशि थी प्यारी ।
श्री महासेन नृप के घर में हुई, जय जयकार बड़ी भारी॥
पांडुकशिल पर अभिषेक किया, सब देव मिले थे चतुरनिकाय ।
सो जिनचन्द्र जयो जग माहीं, विघ्नहरण और मंगलदाय॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घं ।
जग के झंझट से मन ऊबा तप की ली श्री जिन ने ठहराय ।
पौष वदी ग्यारस को इन्द्र ने, तप कल्याण कियो हरषाय॥
सर्वर्तुकवन में जाय विराजे, केशलोंच जिन कियो हरषाय ।
देहरे के श्री चन्द्रप्रभु को अर्घ चढ़ाऊँ नित्य बनाय॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पौषकृष्णैकादश्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय अर्घं ।
फाल्गुन वदी सप्तमी के दिन, चार घातिया घात महान ।
समवसरण रचना हरि कीनी, ता दिन पायो केवल ज्ञान॥
साढे आठ योजन परिमित था, समवसरण श्री जिन भगवान ।
ऐसे श्री जिन चन्द्र प्रभु को, अर्घ चढ़ाय करूँ नित ध्यान॥
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घं ।

शुक्ला फाल्गुन सप्तमि के दिन, ललित कूट शुभ उत्तम थान ।
श्री जिन चन्द्र प्रभु जगनामी, पायो आतम शिव कल्यान ॥
वसु कर्म जिनचन्द्र ने जीते पहुँचे स्वामी मोक्ष मँझार ।
निर्वाण महोत्सव कियो इन्द्र ने देव करें सब जय जयकार ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घं०

श्रावण सुदी दसमी को प्रभु जी प्रकट भये देहरे में आन ।
संवत तेरह दो सहस्त्र ऊपर शुभ बृहस्पतिवार ता दिन जान ॥
जय जयकार हुई देहरे में प्रकट हुए जब श्री भगवान ।
चरणों में आ अर्घ चढ़ाऊँ प्रभु के दर्शन सुख की खान ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय श्रावणशुक्लदशम्यां देहरास्थाने प्रकटरूपाय अर्घं० ।

जयमाला

हे चन्द्रप्रभु ! तुम जगतपिता जगदीश्वर तुम परमात्मा हो ।
तुम ही हो नाथ अनाथों के जग को निज आनन्द दाता हो ॥१॥

इन्द्रियों को जीत लिया तुमने जितेन्द्रनाथ कहाये हो ।
तुम ही हो परम हितैषी प्रभु गुरु तुम ही नाथ कहाये हो ॥२॥

इस नगर तिजारा में स्वामी देहरा स्थान निराला है ।
दुख दुखियों का हरने वाला श्रीचन्द्र नाम अति प्यारा है ॥३॥

जो भाव सहित पूजा करते मनवांछित फल पा जाते हैं ।
दर्शन से रोग नसें सारे गुन गान तेरा सब गाते हैं ॥४॥

मैं भी हूँ नाथ शरण आया कर्मों ने मुझको रोंदा है ।
यह कर्म बहुत दुख देते हैं, प्रभु एक सहारा तेरा है ॥५॥

कभी जन्म हुआ कभी मरण हुआ हे नाथ बहुत दुख पाया है ।
कभी नरक गया कभी स्वर्ग गया भ्रमता भ्रमता ही आया है ॥६॥

तिर्यंच गति के दु:ख सहे ये जीव बहुत अकुलाया है ।
पशुगति में मार सही भारी, बोझा रख खूब भगाया है ॥७॥
अंजन से चोर अधम तारे, भवसिन्धु से पार लगाया है ।
सोमा की सुनकर टेर प्रभु नाग को हार बनाया है ॥८॥
मुनि समन्तभद्र को हे स्वामी आ चमत्कार दिखलाया है ।
कर चमत्कार को नमस्कार चरणों में शीश झुकाया है ॥९॥
इस पंचमकाल में हे स्वामी क्या अद्‌भुत महिमा दिखलाई ।
दुख दुखियों का हरने वाली देहरे में प्रतिमा प्रकटाई ॥१०॥
शुभ पुण्य उदय से हे स्वामी दर्शन तेरा करने आया हूँ ।
इस मोह जाल से हे स्वामी छुटकारा पाने आया हूँ ॥११॥
श्री चन्द्रप्रभु मोरी अर्ज सुनो चरणों में तेरे आया हूँ ।
भवसागर पार करो स्वामी, यह अर्ज सुनाने आया हूँ ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा— देहरे के श्रीचन्द्र को, भाव सहित जो ध्याय ।
'मुंशी' पावे सम्पदा, मनवांछित फल पाय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री शीतलनाथजिन पूजा

कविवर मनरंगलाल

गीता छन्द

है नगर भद्दिल भूप दृढ़रथ सुष्ठु नन्दा ता त्रिया,
तजि अचुत-दिवि अभिराम शीतलनाथ सुत ताके प्रिया ।
इक्ष्वाकुवंशी अंक श्री तरु हेम-वरण शरीर है,
धनु नवे उन्नत पूर्व लख इक आयु सुभग परी रहे ॥

सोरठा–सो शीतल सुख-कन्द, तजि परिग्रह शिव-लोक गै ।
छूट गयो जग-धन्ध, करियत तौ आह्वान अब ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (गीता छंद)

नित तृषा-पीड़ा करत अधिकी दाव अब के पाइयो,
शुभ कुम्भ कंचन-जड़ित गंगा-नीर भरि ले आइयो ।
तुम नाथ शीतल करो शीतल मोहि भव की ताप सौं,
मैं जजौं युग पद जोरि करि मो काज सरसी आप सौं ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपा...

जाकी महक सौं नीम आदिक होत चन्दन जानिये ।
सो सूक्ष्म घिसके मिला केसर भरि कटोरा आनिये ॥ तुम०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति

मैं जीव संसारी भयो अरु मर्यो ताको पार ना ।
प्रभु पास अक्षत ल्याय धारे अखय-पद के कारना ॥ तुम०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति

इन मदन मोरी सकति थोरी रह्यो सब जग छायके ।
ता नाश कारन सुमन ल्यायो महाशुद्ध चुनायके ॥ तुम०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपा...

क्षुध-रोग मेरे पिण्ड लागो देत माँगे ना धरी ।
ताके नसावन काज स्वामी चरु लै आगे धरी ॥ तुम०

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति..

अज्ञान तिमिर महान अन्धकार करि राखो सबै ।
निज-पर सुभेद पिछान कारण दीप ल्यायो हूँ अबै ॥ तुम०
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपा...

जे अष्ट कर्म महान अतिबल घेरि मो चेरा कियो ।
तिन केर नाश विचारि के ले धूप प्रभु ढिग क्षेपियो ॥ तुम०
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा

शुभ मोक्ष मिलन अभिलाष मेरे रहत कब की नाथ जू ।
फल मिष्ट नाना भाँति सुथरे ल्याइयौ निज हाथ जू ॥ तुम०
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा

जल गन्ध अक्षत फूल चरु दीपक सुधूप कही महा ।
फल ल्याय सुन्दर अरघ कीन्हो दोष सो वर्जित कहा ॥ तुम०
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

पञ्चकल्याणक

चैत वदी दिन आठ, गर्भावतार लेत भये स्वामी ।
सुर नर असुरन जानी, जजहूँ शीतल प्रभू नामी ॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाष्टम्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

माघ वदी द्वादशि को, जन्मे भगवान सकल सुखकारी ।
मति श्रुति अवधि विराजे, पूजों जिन-चरण हितकारी ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

द्वादशि माघ वदी में, परिग्रह तजि वन बसे जाई ।
पूजत तहाँ सुरासुर, हम यहाँ पूजत गुण गाई ॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

चौदशि पूस वदी में, जग-गुरु केवल पाय भये ज्ञानी ।
सो मूरति मनमानी, मैं पूजों जिन-चरण सुख-खानी ॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

आश्विन सुदी अष्टमि दिन, मुक्ति पधारे समेदगिरि सेती ।
पूजा करत तिहारी, नसत उपाधि जगत की जेती ॥
ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाष्टम्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

जयमाला

जय शीतल जिनवर, परम धरमधर, छवि के मन्दिर, शिव-भरता ।
जय पुत्र सुनन्दा के गुण-वृन्दा, सुख के कन्दा, दुख-हरता ॥
जय नासादृष्टी, हो परमेष्ठी, तुम पदनेष्टी, अलख भये ।
जय तपो चरन मां, रहत चरन मां, सुआचरण मां, कलुष गये ॥

स्त्रग्विणी छंद

जय सुनन्दा के नन्दा तिहारी कथा,
भाषि को पार पावे कहावे यथा ।
नाथ! तेरे कभी होत भव-रोग ना,
इष्ट-वियोग अनिष्ट-संयोग ना ॥

अग्नि के कुण्ड में वल्लभा राम की,
नाम तेरे बची सो सती काम की । नाथ०
द्रोपदी चीर बाढ़ो तिहारी सही,
देव जानी सबों में सुलज्जा रही । नाथ०
कुष्ठ राखो न श्रीपाल को जो महा,
अब्धि से काढ़ लीनो सिताबी तहाँ । नाथ०
अंजना कोटि फाँसी गिरो जो हतो,
औ सहाई तहाँ तो बिना को हतो । नाथ०
शैल फूटो, गिरै अंजनीपूत के,
चोट जाके लगी ना तिहारै तके । नाथ०
कूदियो शीघ्र ही नाम तो गायके,
कृष्ण काली नथो कुण्ड में जायके । नाथ०

पाण्डवा जे घिरे थे लखागार में,
राह दीन्ही तिन्हें तू महाप्यार में। नाथ०
सेठ को शूलिका पै धरो देखके,
कीन्ह सिंहासन आपनो लेखके। नाथ०
जो गिनाये इन्हें आदि देके सबै,
पाद परसाद तैं वे सुखारी सबै। नाथ०
वार मेरी प्रभू देर कीन्हीं कहा,
कीजिये दृष्टि दया की मो पै अहा। नाथ०
धन्य तू धन्य तू धन्य तू मैनहा,
जो महा पंचमो ज्ञान नीके लहा। नाथ०
कोटि तीरथ हैं तेरे पदों के तले,
रोज ध्यावें मुनी सो बतावें भले। नाथ०
जानिके यों भली भाँति ध्याऊँ तुझे,
भक्ति पाऊँ यही देव दीजे मुझे। नाथ०

गाथा

आपद सब दीजे भार झोंकि यह पढ़त सुनत जयमाल,
हो पुनीत करण अरु जिह्वा वरते आनन्द जाल ।
पहुँचे जहँ कबहूँ पहुँच नहीं नहिं पाई सो पावे हाल,
नहीं भयो कभी सो होय सबेरा भाषत मनरंगलाल ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा

भो शीतल भगवान, तो पद पक्षी जगत में ।
हैं जेते परवान, पक्ष रहे तिन पर बनी ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(१२) श्री वासुपूज्य पूजन

(छन्द रूप कवित्त)

श्रीमत वासुपूज्य जिनवर पद, पूजन हेत हिये उमगाय।
थापों मनवचतन शुचि करिकै, जिनकी पाटलदेव्या माय ॥
महिष चिह्न पद लसै मनोहर, लाल वरन तन समतादाय।
सो करुनानिधि कृपादृष्टि करि, तिष्ठहु सुपरितिष्ठ यहँ आय ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

(छन्द जोगीरासा, आंचलीबद्ध 'जिनपद पूजों लव लाई')

गंगाजल भरि कनककुम्भ में, प्रासुक गन्ध मिलाई।
करम कलंक विनाशन कारन, धार देत हरषाई ॥
जिनपद पूजों मन लाई।
वासुपूज्य वसुपूज - तनुज - पद, वासव सेवत आई।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई ॥
जिनपद पूजों मन लाई।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० स्वाहा।

कृष्णागरु मलयागिर चंदन, केसर संग घसाई।
भवआताप निवारनकारन, पूजों पद चित लाई ॥
जिनपद पूजों मन लाई। वासुपूज्य०

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि० स्वाहा।

देवजीर सुखदास शुद्ध वर, सुवरन थार भराई।
पुंज धरत तुम चरनन आगैं, तुरत अखय पद पाई ॥
जिनपद पूजों मन लाई। वासुपूज्य०

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० स्वाहा।

पारिजात संतान-कल्पतरु-जनित सुमन बहुलाई ।
[1]मीनकेतु - मदभंजन-कारन, तुम पदपद्म चढ़ाई ।।
जिनपद पूजों मन लाई । वासुपूज्य॰
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि॰ स्वाहा ।
[2]नव्य [3]गव्य आदिक रसपूरित, नेवज तुरत उपाई ।
क्षुधारोग निरवारन कारन, तुम्हें जजों शिर नाई ।।
जिनपद पूजों मन लाई । वासुपूज्य॰
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि॰ स्वाहा ।
दीपकजोत उदोत होत वर, दशदिश में छबि छाई ।
तिमिर-मोह-नाशक तुमको लखि, जजों चरन हरषाई ।।
जिनपद पूजों मन लाई । वासुपूज्य॰
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि॰ स्वाहा ।
दशविध गन्ध मनोहर लेकर, [4]वातहोत्र में ढाई ।
अष्टकरम ये दुष्ट जरतु हैं, धूम सु धूम उड़ाई ।।
जिनपद पूजों मन लाई । वासुपूज्य॰
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि॰ स्वाहा ।
सुरस सुपक्व सुपावन फल लै, कंचन थार भराई ।
मोक्ष महाफलदायक लखि प्रभु, भेंट धरों गुन गाई ।।
जिनपद पूजों मन लाई । वासुपूज्य॰
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि॰ स्वाहा ।
जल फल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई ।
शिवपदराज हेत हे श्रीपति ! निकट धरों यह लाई ।।
जिनपद पूजों मन लाई । वासुपूज्य॰
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि॰ स्वाहा ।

---

१. कामदेव २. नवीन ३ .गोघृत ४. अग्नि

पंचकल्याणक (छन्द पाईता, मात्रा १४)

कलि छट्ठ असाढ़ सुहायो, गरभागम मंगल पायो।
दशमें [1]दिवितें इत आये, शत इन्द्र जजें सिर नायें।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णषष्ठ्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं

कलि चौदश फागुन जानों, जनमें जगदीश महानों।
हरि मेरु जजैं तब जाई, हम पूजत हैं चित लाई।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं०

तिथि चौदस फागुन श्यामा, धरियो तप श्रीअभिरामा।
नृप सुन्दर के पय पायो, हम पूजत अतिसुख [2]पायो।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं०

वदि भादव दोइज सोहै, लहि केवल आतम जो है।
अनअन्त गुनाकर स्वामी, नित वन्दों त्रिभुवन नामी।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णद्वितीयायां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं०

सित भादव चौदस लीनों, निरवान सुथान प्रवीनों।
पुर चम्पा थानक सेती, हम पूजत निजहित हेती।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं०

जयमाला

दोहा

चम्पापुर में पंच वर, कल्याणक तुम पाय।
सत्तर धनु तन शोभनों, जय जय जय जिनराय।।

(छन्द मोतियदाम वर्ण १२)

महासुखसागर आगर ज्ञान, अनन्त सुखामृत भुक्त महान।
महाबलमंडित खंडित काम, रमा शिव संग सदा विसराम।।

१. स्वर्गसे २ पाठान्तर - थायो

सुरिन्द फनिन्द खगिन्द नरिन्द, मुनिन्द जजैं नित [1]पादरविंद।
प्रभू तुव अन्तरभाव विराग, सुबालहि-तैं, व्रतशील-सों राग॥
कियो नहि राज उदास सरूप, सुभावन भावत आतमरूप।
अनित्य शरीर प्रपंच समस्त, चिदातम नित्य सुखाश्रित वस्त॥
अशर्न नहीं कोऊ शर्नसहाय, जहाँ जिय भोगत कर्मविपाय।
निजातम कै परमेसुर शर्न, नहीं इनके बिन आपद हर्न॥
जगत्त जथा जलबुद्बुद येव, सदा जिय एक लहे फलभेव।
अनेक प्रकार धरी यह देह, भ्रमें भवकानन आन न नेह॥
अपावन सात कुधात भरीय, चिदातम शुद्धसुभाव धरीय।
धरैं इनसों जब नेह तदेव, सु आवत, कर्म तबे वसुभेव॥
जबैं तन-भोग-जगत्त उदास, धरैं तब संवर निर्जर आस।
करैं जब कर्मकलंक विनाश, लहै तब मोक्ष महासुखराश॥
तथा यह लोक नराकृत नित्त, विलोकिय ते षट्द्रव्यविचित्त।
सु आतमजानन-बोधविहीन, धरैं किन तत्त्व प्रतीत प्रवीन॥
जिनागम ज्ञान रु संजमभाव, सबै निज ज्ञान बिना विरसाव।
सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्र सुकाल, सुभाव सबै जिहतें शिव हाल॥
लयो सब जोग सुपुन्य वशाय, कहो किमि दीजिय ताहि गंवाय।
विचारत यो लौकान्तिक आय, नमें पदपंकज पुष्प चढ़ाय॥
कह्यो प्रभु धन्य कियो सुविचार, प्रबोधि सु येम कियो जु विहार।
तबै सौधर्म तनों हरि आय, रच्यौ शिविका चढ़ि आप जिनाय॥
धरे तप पाय सुकेवलबोध, दियो उपदेश सुभव्य सम्बोध।
लियो फिर मोच्छ महासुख रास, नमैं नित भक्त सोई सुखआश॥

१. चरणकमल

(छन्द घत्तानन्द)

नित [1]वासववन्दित, पापनिकन्दित, वासुपूज्य व्रत ब्रह्मपती ।
भवसंकलखंडित, आनन्दमण्डित, जै जै जै जैवन्त जती ।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(सोरठा)

वासुपूज्य पद सार, जजों दरबविधि भावसों ।
सो पावै सुखसार, भुक्ति मुक्ति को जो परम ।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री शान्तिनाथजिन पूजा

कविवर वृन्दावनदास

मत्तगयन्द, यमकालंकार

या भवकानन में चतुरानन, पाप पनानन घेरि हमेरी ।
आतम जानन मानन ठानन, वानन होन दई शठ मेरी ।।

ता मद भानन आपहि हो, यह छानन आन न आनन टेरी ।
आन गही शरनागत को अब, श्रीपतजी पत राखहु मेरी ।।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

अष्टक (त्रिभंगी)

हिमगिरि-गतगंगा, धार अभंगा प्रासुक संगा भरि भृंगा,
जरजनम-मृतंगा, नाशि अघंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ।
श्रीशान्ति-जिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं, चक्रेशं,
हनि अरि-चक्रेशं, हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं ।।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं...

---

१. इंद्र से वन्दित

वर बावन-चंदन, कदली-नंदन, घनआनंदन सहित घसों ।
भवताप निकंदन, ऐरानन्दन, वंदि अमंदन, चरन वसों ॥ श्री०
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति..

हिमकर करि लज्जत, मलय सुसज्जत, अच्छत जज्जत भरि थारी ।
दुखदारिद गज्जत, सदपदसज्जत, भवभयभज्जत अति भारी । श्री०
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति..

मन्दार सरोजं, कदली जोजं, पुंज भरोजं मलयभरं ।
भरि कंचनथारी, तुम ढिग धारी, मदनविदारी, धीरधरं ॥ श्री०
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि...

पकवान नवीने पावन कीने, षटरस भीने सुखदाई ।
मन मोदन हारे, छुधा विदारे, आगै धारे गुन गाई ॥ श्री०
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति..

तुम ज्ञान प्रकाशे, भ्रमतम नाशे, ज्ञेय विकाशे, सुखरासे ।
दीपक उजियारा, यातैं धारा, मोह निवारा, निज भासे ॥ श्री०
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

चन्दन करपूरं करि वर चूरं, पावक भूरं, माँहि जुरं ।
तसु धूम उड़ावै, नाचत आवै, अलि गुंजावै, मधुरस्वरं ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बादाम खजूरं दाडिम पूरं, निंबुक भूरं लै आयो ।
तासों पदजज्जौं, शिवफल सज्जौं, निजरस रज्जौं, उमगायो ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं

वसु द्रव्य सँवारी तुम ढिग धारी, आनन्दकारी दृगप्यारी ।
तुम हो भवतारी, करुनाधारी, यातैं थारी, शरनारी ॥श्री०
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति..

पंचकल्याणक अर्घ

सुन्दरी तथा द्रुतविलम्बित

असित सातय भादव जानिये, गरभमंगल ता दिन मानिये ।
सचि कियो जननी-पद-चर्चनं, हम करैं इत ये पद अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भकल्याणकमण्डिताय
श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

जनम जेठ चतुर्दशी श्याम है, सकल इन्द्र सु आगत धाम है ।
गजपुरै गजसाजि सबै तबै,गिरि जजैं इत मैं जजि हों अबै ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्मकल्याणकमण्डिताय
श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

भव शरीर सुभोग असार हैं, इमि विचार तबै तप धार हैं ।
भ्रमर चौदस जेठ सुहावनी, धरमहेत जजों गुन पावनी ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपःकल्याणकमण्डिताय
श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

शुकल पौष दशैं सुखरास है, परम केवलज्ञान प्रकाश है ।
भवसमुद्र-उधारन देव की, हम करैं नित मंगल सेवकी ॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकमण्डिताय
श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

असित चौदशि जेठ हने अरी, गिरि समेद थकी शिवतिय वरी ।
सकल इन्द्र जजैं तित आइकैं, हम जजैं इत मस्तक नाइकैं ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकमण्डिताय
श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

जयमाला

रथोद्धता छन्द चन्द्रवर्त्म तथा चन्द्रवत्स (११ वर्ण लाटानुप्रास)

शान्ति शान्तिगुन मंडिते सदा, जाहि ध्यावत सुपंडिते सदा ।
मैं तिन्हें भगतिमंडिते सदा, पूजिहों कलुष-हंडिते सदा ॥

मोक्षहेत तुम ही दयाल हो, हे जिनेश गुन रत्नमाल हो ।
मैं अबै सुगुनदाम ही धरों, ध्यावतें तुरित मुक्तितिय वरों ॥

पद्धरि (१६ मात्रा)

जय शान्तिनाथ चिद्रूपराज, भवसागर में अद्‌भुत जहाज ।
तुम तजि सरवारथसिद्धि थान, सरवारथजुत गजपुर महान ॥१

तित जनम लियो आनंद धार, हरि ततछिन आयो राजद्वार ।
इन्द्रानी जाय प्रसूत-थान, तुमको कर में लै हरष मान ॥२

हरि गोद देय सो मोद धार, सिर चमर अमर ढारत अपार ।
गिरिराज जाय तित शिला पाण्ड, तापै थाप्यो अभिषेक माण्ड ॥३

तित पंचम उदधि तनों सुवार, सुरवर कर करि ल्याये उदार ।
तब इन्द्र सहसकर करि अनन्द, तुम सिर धारा ढार्यो सुनन्द ॥४

अघ घघ घघ घघ धुनि होत घोर, भभ भभ भभ धध धध कलशशोर ।
दृम दृम दृम दृम बाजत मृदंग, झन नन नन नन नन नूपुरंग ॥५

तन नन नन नन नन तनन तान, घन नन नन घंटा करत ध्वान ।
ता थेई थेई थेई थेई थेई सुचाल, जुत नाचत नावत तुमहि भाल ॥६

चट चट चट अटपट नटत नाट, झट झट झट हट नट शट विराट ।
इमि नाचत राचत भगत रंग, सुर लेत जहाँ आनंद संग ॥७

इत्यादि अतुल मंगल सुठाट, तित बन्यो जहाँ सुरगिरि विराट ।
पुनि करि नियोग पितुसदन आय, हरि सौंप्यौ तुम तित वृद्ध थाय ।८

पुनि राजमाँहिं लहि चक्ररत्न, भोग्यौ छखंड करि धरम जत्न ।
पुनि तप धरि केवलऋद्धि पाय, भविजीवन को शिवमग बताय ।९

शिवपुर पहुँचे तुम हे जिनेश, गुनमण्डित अतुल अनंत भेष ।
मैं ध्यावतु हों नित शीश नाय, हमरी भवबाधा हरि जिनाय ।१०

सेवक अपनो निज जान जान, करुना करि भौभय भान भान ।
यह विघनमूल तरु खण्ड खण्ड, चितचिन्तित आनन्द मण्ड मण्ड ।११

घत्ता

श्रीशान्ति महंता शिवतियकंता, सुगुन अनन्ता भगवन्ता ।
भव भ्रमन हनंता, सौख्य अनन्ता, दातारं तारनवन्ता ।१२

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रूपकसवैया

शान्तिनाथ जिनके पद पंकज, जो भवि पूजै मनवचकाय,
जनम जनम के पातक ताके, ततछिन तजिकै जाय पलाय ।
मनवाँछित सुख पावै सौ नर, वाँचैं, भगतिभाव अति लाय,
तातैं 'वृन्दावन' नित वन्दै जातैं शिवपुर-राज कराय ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(२०) श्री मुनिसुव्रत पूजन

(मत्तगयन्द छन्द)

प्रानत स्वर्ग विहाय लियो जिन, जन्म सु राजगृही महँ आई ।
श्री सुहमित्त पिता जिनके, गुनवान महापदमा जसु माई ॥
बीस धनू तनु श्याम छबी कछु, अंक हरी वरवंश बताई ।
सो मुनिसुव्रतनाथ प्रभु कह, थापतु हौं इत प्रीति लगाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (हरिगीतिका)

उज्ज्वल सुजल जिमि जस तिहारौ, कनक झारी में भरों ।
जर मरन जामन हरन कारन, धार तुम पदतर करों ॥

शिव साथ करत सनाथ सुव्रतनाथ, मुनि गुन माल हैं ।
तसु चरन आनन्द भरन तारन, तरन विरद विशाल हैं ॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति

भवतापघायक शांतिदायक, मलय हरि घसि ढिग धरों ।
गुन गाय शीस नमाय पूजत, विघनताप सबैं हरों ॥ शिव०
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति..

तन्दुल अखण्डित दमक शशिसम, गमक जुत थारी भरों ।
पद अखयदायक मुकतिनायक, जानि पद पूजा करों ॥ शिव०
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति..

बेला चमेली रायबेली, केतकी करना सरों ।
जगजीत मन्मथहरन लखि प्रभु, तुम निकट ढेरी करों ॥ शिव०
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति..

पकवान विविध मनोज्ञ पावन, सरस मृदुगुन विस्तरों ।
सो लेय तुम पदतर धरत ही, क्षुधा डाइन को हरों ॥शिव०
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति

दीपक अमोलक रतन मनिमय, तथा पावनघृत भरों ।
सो तिमिर मोह विनाश आतमभास कारन ज्वै धरों ॥ शिव०
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

करपूर चन्दन चूर भूर, सुगन्ध पावक में धरों ।
तसु जरत जरत समस्त पातक, सार निज सुखकों भरों ॥ शिव०
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल अनार सु आम आदिक, पक्व फल अति विस्तरों ।
सो मोक्षफल के हेत लेकर, तुम चरन आगे धरों ॥ शिव०
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गन्ध आदि मिलाय आठों, दरब अरघ सजों वरों ।
पूजों [1]चरणकज भक्तिजुत, जातैं जगत सागर तरों ॥ शिव०

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

पञ्चकल्याणक

तोटक

तिथि दोयज सावन श्याम भयो, गरभागम मंगल मोद थयो ।
हरिवृन्द सची पितुमात जजें, हम पूजत [2]ज्यौं अघ ओघ भजें ॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णद्वितीयायां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घं०

वैशाख वदी दशमी वरनी, जनमें तिहि द्यौस त्रिलोकधनी ।
सुरमंदिर ध्याय पुरन्दर ने, मुनिसुव्रतनाथ हमें शरने ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घं० ।

तप दुद्धर श्रीधर ने गहियो, वैसाख वदी दशमी कहियो ।
निरुपाधि समाधि सु ध्यावत हैं, हम पूजत भक्ति बढ़ावत हैं ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घं० ।

वर केवलज्ञान उद्योत किया, नवमी वयसाख वदी सुखिया ।
घनि मोहनिशाभनि मोखमगा, हम पूजि चहैं भवसिंधु थगा ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घं० ।

वदि बारस फागुन मोक्ष गये, तिहुँ लोक शिरोमणि सिद्ध भये ।
सु अनन्त गुनाकर विघन हरी, हम पूजत हैं मनमोद भरी ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णद्वादश्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घं० ।

जयमाला

दोहा– मुनिगणनायक मुक्तिपति, सूक्तव्रताकर युक्त ।
भुक्ति-मुक्ति-दातार लखि, वन्दों तन मन उक्त ॥

---

१. चरणकमल, पाठान्तर–चरणरज २. पाठान्तर–ध्यावत पादकजे

तोटक छन्द

जय केवल भान अमान धरं, मुनि स्वच्छ सरोज विकासकरं ।
भव संकट भंजन लायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥१

घनघातवनं दवदीप्त भनं, भवि बोध तृषातुर मेघघनं ।
नित मंगलवृन्द बधायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥२

गरभादिक मंगलसार धरे, जगजीवन के दुखद्वन्द हरे ।
सब तत्त्वप्रकाशन वायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥३

शिवमारग मण्डन तत्त्व कह्यो, गुनसार जगत्त्रय शर्म लह्यो ।
रुज राग रु दोष मिटायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥४

समवसृत में सुरनार सही, गुण गावत नावत भाल मही ।
अरु नाचत भक्ति बढ़ायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥५

पग नूपुर की धुनि होत भनं, झननं झननं झननं झननं ।
सुर लेत अनेक रमायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥६

घननं घननं घन घंट बजैं, तननं तननं तनतान सजैं ।
दृमदृम मिरदंग बजायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥७

छिन में लघु औ छिन थूल बनें, जुत हावविभाव विलासपनें ।
मुखतें पुनि यों गुणगायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥८

धृगतां धृगतां पग पावत हैं, सननं सननं सु नचावत हैं ।
अति आनन्द को पुनि पायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥९

अपने भव को फल लेत सही, शुभ भावनतैं सब पाप दही ।
तित तैं सुख को सब पायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥१०

इन आदि समाज अनेक तहाँ, कहि कौन सकै जु विभेद यहाँ ।
धन श्री जिनचन्द सुधायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ॥११

पुनि देशविहार कियौ जिनने, [1]वृष अमृतवृष्टि कियौ तुमने ।
हम तो तुमरी शरनायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ।।१२

हमपै करुणा करि देव अबैं, शिवराज समाज सुदेहु सबैं ।
जिमि होहुँ सुखाश्रम नायक हैं, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ।।१३

भवि 'वृन्द' तनी विनती जु यही, मुझ देहु अखैपद राज सही ।
हम आन गही शरनायक है, मुनिसुव्रत सुव्रतदायक हैं ।।१४

घत्ता

जय गुणगणधारी, शिवहितकारी, शुद्धबुद्ध चिद्रूपपती ।
परमानन्ददायक दाससहायक मुनिसुव्रत जयवन्त जती ।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

श्री मुनिसुव्रत के चरण, जो पूजै अभिनन्द ।
सो सुरनर सुख भोगकें, पावें सहजानन्द ।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री नेमिनाथजिन पूजा

छन्द लक्ष्मी, तथा अर्द्धलक्ष्मीधरा

जैतिजै जैतिजै जैतिजै नेमकी, धर्म औतार दातार श्यौ चैन की ।
श्री शिवानन्द भौफंद निकन्द की ध्यावै जिन्हैं इन्द्र नागेन्द्र औ मैन की ।।
पर्म कल्यान के देनहारे तुम्हीं, देव हो एव तातैं करौं ऐन को ।
थापि हौं बार त्रै शुद्ध उच्चार कें, शुद्धताधार भौपारकूं लेन की ।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

---

१ धर्म

अष्टक (चाल होली, ताल जत्त)

दाता मोच्छ के, श्रीनेमिनाथ जिनराय, दाता० ॥टेक॥
निगम नदी कुश प्रासुक लीनौ, कंचनभृंग भराय ।
मन वच तन तैं धार देत ही, सकल कलंक नशाय ।
दाता मोच्छ के, श्रीनेमिनाथ जिनराय ॥ दाता०
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति

हरि चन्दन जुत कदलीनन्दन, कुंकुम सङ्ग घसाय ।
विघन ताप नाशन के कारन, जजौं तिहारे पाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति

पुण्यराशि तुम जस सम उज्जल, तंदुल शुद्ध मंगाय ।
अखय सौख्य भोगन के कारन, पुंज धरों गुनगाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति

पुण्डरीक तृणद्रुम को आदिक, सुमन सुगंधित लाय ।
दर्प्पक मनमथभंजनकारन, जजहुं चरन लवलाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति

घेवर बावर खाजे साजे, ताजे तुरत मँगाय ।
क्षुधावेदनी नास करन को, जजहुँ चरन उमगाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति

कनक दीप नवनीत पूरकर, उज्जल जोति जगाय ।
तिमिरमोहनाशक तुमकों लखि, जजहुँ चरन हुलसाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

दशविध गंध मँगाय मनोहर, गुंजत अलिगन आय ।
दशों बंध जारन के कारन, खेवों तुम ढिग लाय ॥ दाता०
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरस वरन रसना मनभावन, पावन फल सु मंगाय ।
मोक्ष महाफल कारन पूजों, हे जिनवर तुम पाय ॥ दाता॰
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलफल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय ।
अष्ठम छिति के राज करन को, जजों अंग वसु नाय ॥ दाता॰
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति..

पञ्चकल्याणक

सित कार्तिक छट्ठ अमंदा, गरभागम आनन्दकन्दा ।
शचि सेय सिवापद आई, हम पूजत मन वच काई ॥
ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लषष्ठ्यां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सित सावन छट्ठ अमन्दा, जनमें त्रिभुवन के चन्दा ।
पितु समुद्र महासुख पायो, हम पूजत विघन नशायो ॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तजि राजमती व्रत लीनों, सित सावन छट्ठ प्रवीनों ।
शिवनारि तबै हरषाई, हम पूजैं पद शिर नाई ॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सित आश्विन एकम चूरे, चारों घाती अति कूरे ।
लहि केवल महिमा सारा, हम पूजैं अष्ट प्रकारा ॥
ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लप्रतिपदायां केवलज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सित षाढ अष्टमी चूरे, चारों अघातिया कूरे ।
शिव उर्ज्जयन्त तैं पाई, हम पूजैं ध्यान लगाई ॥
ॐ ह्रीं आषाढशुक्लाष्टम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

श्याम छवी तन चाप दश, उन्नत गुननिधि धाम ।
शंख चिह्नपद में निरखि, पुनि पुनि करों प्रनाम ॥

पद्धरि छन्द

जै जै जै नेमि जिनिंद चन्द, पितु समुद सेन आनन्दकन्द ।
शिवमात कुमुद-मन-मोद-दाय, भविवृन्द चकोर सुखी कराय ॥

जयदेव अपूरब मारतंड, तम कीन ब्रह्मसुत सहस खंड ।
शिवतिय मुखजलज-विकाशनेश, नहि रहो सृष्टि में तम अशेष ॥

भवि भीत कोक कीनों अशोक, शिवमग दरशायो शर्मथोक ।
जै जै जै जै तुम गुनगंभीर, तुम आगम निपुन पुनीत धीर ॥

तुम केवल जोति विराजमान, जै जै जै जै करुनानिधान ।
तुम समवसरन में तत्त्वभेद, दरशायो जातैं नशत खेद ॥

तित तुमकों हरि आनन्द धार, पूजत भगतीजुत बहु प्रकार ।
पुनि गद्यपद्यमय सुजस गाय, जै बल अनंत गुनवंतराय ॥

जय शिव शंकर ब्रह्मा महेश, जय बुद्ध विधाता विष्णुवेष ।
जय कुमति-मतंगन को मृगेन्द्र, जय मदनध्वांत को रवि जिनेन्द्र ॥

जय कृपासिन्धु अविरुद्ध बुद्ध, जय रिद्धसिद्ध दाता प्रबुद्ध ।
जय जग जनमनरंजन महान, जय भवसागरमँह सुष्ठु यान ॥

तुव भगति करें ते धन्य जीव, ते पावैं दिव शिवपद सदीव ।
तुमरो गुन देव विविध प्रकार, गावत नित किन्नर की जु नार ॥

वर भगतिमाँहि लवलीन होय, नाचैं ताथेई थेई थेई बहोय ।
तुम करुनासागर सृष्टिपाल, अब मोकों बेगि करों निहाल ॥

मैं दुख अनंत वसुकरमजोग, भोगे सदीव नहि और रोग ।
तुमको जग में जान्यों दयाल, हो वीतराग गुनरतनमाल ॥
तातैं शरना अब गही आय, प्रभु करो वेगि मेरी सहाय ।
यह विघनकरम मम खंडखंड, मन वांछित कारज मंड मंड ॥
संसारकष्ट चकचूर चूर, सहजानन्द मम उर पूर पूर ।
निज पर प्रकाश बुधि देइ देइ, तजि के विलंब सुधि लेइ लेइ ॥
हम जांचत हैं यह बार बार, भव सागर तैं मो तार तार ।
नहिं सह्यो जात यह जगत दुःख, तातैं विनवों हे सुगुन मुक्ख ॥

घत्तानन्द

श्रीनेमिकुमारं, जितमदमारं, शीलागारं, सुखकारं ।
भवभयहरतारं, शिवकरतारं, दातारं धर्माधारं ॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मालिनी

सुख धन जस सिद्धी पुत्र पौत्रादि वृद्धी,
सकल मनसि सिद्धी होतु है ताहि रिद्धी ।
जजत हरष धारी नेमि को जो अगारी,
अनुक्रम अरि जारी सो वरे मोच्छनारी ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री पार्श्वनाथजिन पूजा

कवि बख्तावरसिंह

गीता छंद

वर स्वर्ग प्राणत को विहाय, सुमात वामा सुत भये,
अश्वसेन के पारस जिनेश्वर, चरन जिनके सुर नये ।
नौ हाथ उन्नत तन विराजै, उरग लच्छन पद लसैं,
थापूँ तुम्हें जिन आय तिष्ठो कर्म मेरे सब नसैं ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (चामरछन्द)

क्षीरसोम के समान अम्बुसार लाइए ।
हेमपात्र धारिकैं सु आपको चढ़ाइए ।
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिए नहीं कदा ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं..

चंदनादि केशरादि स्वच्छ गंध लीजिए ।
आप चरण चर्च मोहताप को हनीजिए ॥ पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति..

फेन चंद के समान अक्षतान् लाइकैं ।
चर्न के समीप सार पुंज को रचाइकैं ॥ पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति..

केवड़ा गुलाब और केतकी चुनाइए ।
धार चर्न के समीप काम को नसाइए ॥ पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति

घेवरादि बावरादि मिष्ठ सर्पि में सनें ।
आप चर्ण अर्चते क्षुधादि रोग को हनें ॥ पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति

लाय रत्न दीप को सनेह पूर के भरूँ ।
वातिका कपूर बारि मोह ध्वांत को हरूँ ॥ पार्श्व०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

धूप गंध लेय कैं सुअग्नि संग जारिये ।
तास धूप के सुसंग कर्म अष्ट बारिये ॥ पार्श्व०
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।
खारकादि चिर्भटादि रत्नथाल में भरूँ ।
हर्षधारिकैं जजूं सुमोक्ष सौख्य को वरूँ ॥ पार्श्व०
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
नीर गंध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिये ।
दीप धूप श्रीफलादि अर्घ तैं जजीजिये ॥ पार्श्व०
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

पंचकल्याणक

छन्द चाल

शुभ प्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये ।
वैशाख तनी दुति कारी, हम पूजें विघ्न निवारी ॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।
जनमें त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता ।
श्यामा तन अद्‌भुत राजै, रवि कोटिक तेज सु लाजै ॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।
कलि पौष एकादशि आई, तब बारह भावन भाई ।
अपने कर लोंच सु कीना, हम पूजें चरन जजीना ॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं
कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवल ज्ञान उपाई ।
तब प्रभु उपदेश जु कीना, भवि जीवन को सुख दीना ॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां केवलज्ञानमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं
सित सावन सातैं आई, शिवनारि वरी जिनराई ।
सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजैं मोक्ष कल्याना ॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जयमाला

पारसनाथ जिनेन्द्र तने वच, पौनभखी जरते सुन पाये ।
कर्‍यो सरधान लह्यो पद आन, भये पद्मावति शेष कहाये ॥
नाम प्रताप टरें संताप सु, भव्यन को शिवशर्म दिखाये ।
हो अश्वसेन के नंद भले, गुण गावत हैं तुमरे हरषाये ॥

दोहा

केकी -कंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ ।
लक्षण उरग निहार पग, वंदौं पारसनाथ ॥

मोतियादाम

रची नगरी षट् मास अगार, बने चहुँ गोपुर शोभ अपार ।
सु कोट तनी रचना छवि देत, कंगूरन पै लहकें बहुकेत ॥१
बनारस की रचना जु अपार, करी बहु भाँति धनेश तैयार ।
तहाँ विश्वसेन नरेन्द्र उदार, करैं सुख वाम सु दे पटनार ॥२
तज्यो तुम प्रानत नाम विमान, भये तिनके घर नंदन आन ।
तबै सुर इंद्र नियोगनि आय, गिरीन्द करी विधि न्हौन सुजाय ॥३
पिता घर सौंप गये निज धाम, कुबेर करै वसु जाम सुकाम ।
बढ़े जिन दोज मयंक समान, रमैं बहु बालक निर्जर आन ॥४
भये जब अष्टम वर्ष कुमार, धरे अणुव्रत महा सुखकार ।
पिता जब आन करी अरदास, करो तुम ब्याह वरो मम आस ॥५
करी तब नाहि रहे जग चंद, किये तुम काम कषाय जु मंद ।
चढ़े गजराज कुमारन संग, सुदेखत गंगतनी सुतरंग ॥६
लख्यो इक रंक करै तपघोर, चहूँ दिशि अगनि बलै अति जोर ।
कहै जिननाथ अरे सुन भ्रात, करै बहुजीवन की मत घात ॥७

भयो तब कोप कहै कित जीव, जले तब नाग दिखाय सजीव ।
लख्यो यह कारण भावन भाय, नये दिव ब्रह्म-ऋषी सुर आय ॥८॥

तबहिं सुर चार प्रकार नियोग, धरी शिविका निजकंध मनोग ।
कियो वन माँहि निवास जिनंद, धरे व्रत चारित आनंदकंद ॥९॥

गहें तहँ अष्टम के उपवास, गये धनदत्त तने जु अवास ।
दियो पयदान महासुखकार, भई पन वृष्टि तहाँ तिहि बार ॥१०॥

गये तब कानन माँहिं दयाल, धर्यो तुम योग सबहि अघ टाल ।
तबै वह धूम सुकेतु अयान, भयो कमठाचर को सुर आन ॥११॥

करै नभ गौन लखे तुम धीर, जु पूरब बैर विचार गहीर ।
कियो उपसर्ग भयानक घोर, चली बहु तीक्षण पवन झकोर ॥१२॥

रह्यो दशहूँ दिश में तम छाय, लगी बहुअग्नि लखी नहिं जाय ।
सुरुण्डन के बिन मुण्ड दिखाय, पड़ें जल मूसलधार अथाय ॥१३॥

तबै पद्मावति कंत धनंद, नये जुग आय तहाँ जिनचंद ।
भग्यो तब रंक सु देखत हाल, लह्यो तब केवलज्ञान विशाल ॥१४॥

दियो उपदेश महा हितकार, सुभव्यन बोध सम्मेद पधार ।
सुवर्णभद्र जू कूट प्रसिद्ध, वरी शिवनारि लही वसुरिद्ध ॥१५॥

जजूँ तुम चरन दोउ कर जोर, प्रभु लखिए अब ही मम ओर ।
कहै 'बखतावर रत्न' बनाय, जिनेश हमें भव पार लगाय ॥१६॥

घत्ता

जय पारस देवं सुरकृत सेवं, वंदत चरण सुनागपती ।
करुणा के धारी पर उपकारी, शिवसुखकारी कर्महती ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल

जो पूजै मनलाय भव्य पारस प्रभु नित ही ।
ताके दुख सब जाँय भीति व्यापै नहि कित ही ॥
सुख संपत्ति अधिकाय पुत्र मित्रादिक सारे ।
अनुक्रमसौं शिव लहै, 'रतन' इमि कहै पुकारे ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री रविव्रत पूजा

अडिल्ल

यह भविजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही ।
करहु भव्यजन सर्व, सुमन देकें सही ॥
पूजों पार्श्व जिनेन्द्र, त्रियोग लगायके ।
मिटैं सकल सन्ताप, मिलै निधि आयके ॥

मतिसागर इक सेठ, सु ग्रन्थन में कहो ।
उनने भी यह पूजा कर आनन्द लहो ॥
तातें रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये ।
सुख सम्पति संतान, अतुल निधि लीजिये ॥

दोहा

प्रणमों पार्श्व जिनेश को, हाथजोड़ सिर नाय ।
परभव सुख के कारने, पूजा करुँ बनाय ॥
ऐतवार व्रत के दिना, ये ही पूजन ठान ।
ता फल सम्पति को लहैं, निश्चय लीजे मान ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (जोगीरासा)

उज्ज्वल जल भरकें अति लायो, रतन कटोरन माँहीं ।
धार देत अति हर्ष बढ़ावत, जन्म जरा मिट जाहीं ॥
पारसनाथ जिनेश्वर पूजो, रविव्रत के दिन भाई ।
सुख सम्पति बहु होय तुरत ही, आनन्द मंगल दाई ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं

मलयागिर केसर अति सुन्दर, कुंकुम रंग बनाई ।
धार देत जिन चरनन आगे, भव आताप नशाई ॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति..

मोतीसम अति उज्ज्वल तंदुल, लावो नीर पखारो ।
अक्षयपदके हेतु भावसों, श्रीजिनवर ढिग धारो ॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति..

बेला अरु मचकुंद चमेली, पारिजात के ल्यावो ।
चुनचुन श्रीजिनअग्र चढ़ाऊँ, मनवांछित फल पावो ॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविनाशनाय पुष्पाणि निर्वपामीति

बावर फैनी गुजिया आदिक, घृत में लेत पकाई ।
कंचन थार मनोहर भरके, चरनन देत चढ़ाई ॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति

मणिमय दीप रतनमय लेकर, जगमग जोति जगाई ।
जिनके आगे आरति करके, मोहतिमिर नश जाई ॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

चूरन कर मलयागिर चंदन, धूप दशांग बनाई ।
तट पावक में खेय भाव सों, कर्मनाश हो जाई ॥ पारस०

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि बदाम सुपारी, भाँति भाँति के लावो ।
श्रीजिनचरन चढ़ाय हरषकर, तातें शिवफल पावो ॥ पारस०
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधादिक अष्ट द्रव्य ले, अर्घ बनावो भाई ।
नाचत गावत हर्षभाव सों, कंचन थार भराई ॥ पारस०
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

गीतिका

मन वचन काय विशुद्ध करके, पार्श्वनाथ सु पूजिये,
जल आदि अर्घ बनाय भविजन, भक्तिवंत सु हूजिये ।
पूज्य पारसनाथ जिनवर, सकल सुखदातार जी,
जे करत हैं नर नारि पूजा, लहत सौख्य अपार जी ॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

यह जग में विख्यात हैं, पारसनाथ महान ।
तिन गुण की जयमालिका, भाषा करुँ बखान ॥

पद्धरि

जय जय प्रणमों श्री पार्श्व देव, इन्द्रादिक तिनकी करत सेव ।
जय जय सु बनारस जन्म लीन, तिहुँ लोक विषैं उद्योत कीन ॥

जय जिनके पितु श्री विश्वसेन, तिनके घर भये सुखचैन देन ।
जय वामा देवी मात जान, तिनके उपजे पारस महान ॥

जय तीन लोक आनन्द देन, भविजन के दाता भये ऐन ।
जय जिनने प्रभु का शरण लीन, तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन ॥

जय नाग-नागिनी भये अधीन, प्रभु चरणन लाग रहे प्रवीन ।
तजके स्वदेह स्वर्गे सु जाय, धरणेन्द्र पद्मावति पद लहाय ॥

जय अञ्जन चोर अधम अजान, चोरी तज प्रभु को धरो ध्यान ।
जय मृत्यु भये वह स्वर्ग जाय, ऋद्धी अनेक उनने सो पाय ॥

जय मतिसागर इक सेठ जान, तिन अशुभकर्म आयो महान ।
तिनके सुत थे परदेश माँहिं, उनसे मिलने की आश नांहिं ॥

जय रविव्रत पूजन करी सेठ, ता फल कर सबसे भई भेंट ।
जिन-जिनने प्रभु का शरण लीन, तिन ऋद्धि सिद्धि पाई नवीन ॥

जय रविव्रत पूजा करहिं जेय, ते सौख्य अनन्तानन्त लेय ।
धरणेन्द्र पद्मावति हुये सहाय, प्रभुभक्त जान तत्काल आय ॥

पूजा विधान इह विधि रचाय, मन वचन काय तीनों लगाय ।
जो भक्ति भाव जयमाल गाय,सो ही सुख सम्पति अतुल पाय ॥

बाजत मृदंग बीनादि सार, गावत नाचत नाना प्रकार ।
तन नन नन नन नन ताल देत, सन नन नन नन सुर भर सो लेत ॥

ताथेई थेई थेई पग धरत जाय, छम छम छम छम घुंघरू बजाय ।
जे करहि निरत इह भाँत भाँत, ते लहहि सुक्ख शिवपुर सुजात ॥

दोहा

रविव्रत पूजा पार्श्व की, करै भविक जन जोय ।
सुख सम्पति इह भव लहै, आगे सुर पद होय ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल

रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र, पूज भवि मन धरें ।
भव भव के आताप, सकल छिन में टरें ॥
होय सुरेन्द्र नरेन्द्र, आदि पदवी लहे ।
सुख सम्पति सन्तान, अटल लक्ष्मी रहे ॥

फेर सर्व विधि पाय, भक्ति प्रभु अनुसरें ।
नानाविध सुख भोग, बहुरि शिवतिय वरें ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचिंतामणिपार्श्वनाथाय नमः ।

श्री वर्द्धमानजिन पूजा

कविवर वृन्दावनदास

मत्तगयन्द

श्रीमत वीर हरें भव-पीर, भरें सुख-सीर अनाकुलताई,
केहरि-अंक अरीकरदंक, नये हरि-पंकति-मौलि सुआई ।
मैं तुमको इत थापतु हौं प्रभु, भक्ति समेत हिये हरषाई,
हे करुणा-धन-धारक देव, इहाँ अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (अवतार छंद)

क्षीरोदधि सम शुचि नीर, कंचन-भृंग भरों,
प्रभु वेग हरो भव-पीर, यातैं धार करों ।
श्रीवीर महा अतिवीर सन्मति नायक हो,
जय वर्द्धमान गुण-धीर सन्मति-दायक हो ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति

मलयागिर-चन्दन सार, केसर-संग घसौं ।
प्रभु भव-आताप निवार, पूजत हिय हुलसौं ॥ श्रीवीर०

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति

तन्दुल सित शशि-सम शुद्ध, लीनों थार भरी।
तसु पुंज धरों अविरुद्ध, पावों शिव-नगरी॥ श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति

सुरतरु के सुमन समेत, सुमन सुमन प्यारे।
सो मन्मथ-भंजन हेत, पूजौं पद थारे॥ श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति

रस-रज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी।
पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख-अरी॥ श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति

तम-खण्डित मण्डित-नेह, दीपक जोवत हों।
तुम पदतर हे सुख-गेह, भ्रम-तम खोवत हों॥ श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति

हरिचन्दन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा।
तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा॥ श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋतु-फल कल-वर्जित लाय, कंचन-थार भरों।
शिव-फल-हित हे जिनराय, तुम ढिग भेंट धरों॥ श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल वसु सजि हिम-थार, तन-मन-मोद धरों।
गुण गाऊँ भव-दधि तार, पूजत पाप हरों॥ श्रीवीर०
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चकल्याणक

राग टप्पा चाल

मोहि राखो हो सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी,
मोहि राखो हो सरना ॥

गरभ साढ़ सित छट्ठ लियो थिति, त्रिशला उर अघ-हरना।
सुर सुरपति तित सेव करें नित, मैं पूजों भव-तरना ॥ मोहि०

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठ्यां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनम चैत सित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कन-वरना ।
सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भव-हरना ॥ मोहि०

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना ।
नृप-कुमार घर पारन कीनों, मैं पूजों तुम चरना ॥ मोहि०

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुकल दशैं वैशाख दिवस अरि, घाति चतुक छय करना ।
केवल लहि भवि भव-सर तारे, जजों चरन सुख भरना ॥ मोहि०

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक श्याम अमावस शिव-तिय, पावापुर तैं वरना ।
गन-फनि-वृन्द जजैं तित बहुविधि, मैं पूजों भय-हरना ॥ मोहि०

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छन्द हरिगीता

गनधर असनिधर, चक्रधर, हलधर गदाधर वरवदा,
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा ।
दुखहरन आनन्द-भरन तारन, तरन चरन रसाल हैं,
सुकुमाल गुन-मनिमाल उन्नत, भाल की जयमाल है॥

घत्तानन्द

जय त्रिशला नन्दन, हरिकृत वन्दन, जगदानन्दन चन्दवरं ।
भव-ताप-निकन्दन, तन कन मन्दन, रहित-सपन्दन नयन-धरं॥

छन्द तोटक

जय केवल-भानु कलासदनं, भवि-कोक-विकासनकंज-वनं ।
जग-जीत-महारिपु-मोह-हरं, रज-ज्ञान-दृगांवर चूर-करं॥

गर्भादिक-मंगल-मण्डित हो, दुख-दारिद को नित खण्डित हो ।
जग माँहिं तुम्हीं सत-पण्डित हो, तुम ही भव-भाव विहण्डित हो॥

हरिवंश-सरोजन को रवि हो, बलवन्त महन्त तुम्हीं कवि हो ।
लहि केवल धर्म-प्रकाश कियो, अबलों सोइ मारग राजति यो॥

पुनि आप तने गुन माँहि सही, सुर मग्न रहैं जितने सब ही ।
तिनकी वनिता गुन गावत हैं, लय माननि सौं मन -भावत हैं॥

पुनि नाचत रंग उमंग भरी, तुअ भक्ति विषैं पग येम धरी ।
झननं झननं झननं झननं, सुर लेत तहाँ तननं तननं॥

घननं घननं घन घण्ट बजै, दृमदं, दृमदं मिरदंग सजै ।
गगनांगन-गर्भगता सुगता, ततता ततता अतता वितता॥

धृगतां धृगतां गति बाजत है, सुरताल रसाल जु छाजत है ।
सननं सननं सननं नभ में, इक रूप अनेक जु धारि भ्रमें॥

कई नारि सुबीन बजावति हैं, तुमरो जस उज्ज्वल गावति हैं ।
कर-ताल विषैं करताल धरें, सुरताल विशाल जु नाद करें ॥

इन आदि अनेक उछाह भरी, सुर भक्ति करें प्रभु जी तुमरी ।
तुम ही जग-जीवनि के पितु हो, तुम ही बिन कारन तैं हितु हो ॥

तुम ही सब विघ्न-विनाशन हो, तुम ही निज आनन्द-भासन हो ।
तुम ही चित चिन्तित-दायक हो, जगमाँहिं तुम्हीं सब लायक हो ॥

तुमरे पन मंगल माँहिं सही, जिय उत्तम पुन्न लियो सब ही ।
हमको तुमरी सरनागत है, तुमरे गुन में मन पागत है ॥

प्रभु मो हिय आप सदा बसिये, जब लों वसु कर्म नहीं नसिये ।
तब लों तुम ध्यान हिये वरतो, तब लों श्रुत चिन्तन चित्त रतो ॥

तब लों व्रत चारित चाहतु हों, तब लों शुभ भाव सुगाहतु हों ।
तब लों सत-संगति नित्त रहो, तब लों मम संजम चित्त गहो ॥

जब लों नहिं नाश करौं अरि को, शिव-नारि वरौं समता धरि को ।
यह द्यो तब लों हमको जिन जी, हम जाचतु हैं इतनी सुन जी ॥

घत्तानन्द

श्रीवीर-जिनेशा नमित-सुरेशा, नाग-नरेशा भगति भरा ।
'वृन्दावन' ध्यावै विघन नशावै, वांछित पावै शर्म-वरा ॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

श्री सनमति के जुगल पद, जो पूजै धरि प्रीति ।
'वृन्दावन' सो चतुर नर, लहै मुक्ति नवनीत ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

चौबीसी जिन पूजा

कविवर वृन्दावनदास

छन्द कवित्त

ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन, सुमति पदम सुपार्श्व जिनराय ।
चन्द पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासुपूज्ज पूजित सुरराय ॥
विमल अनन्त धर्म जस-उज्ज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय ।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् । ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांत-चतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (अवतार छंद)

मुनि मन सम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गन्ध भरा ।
भरि कनक - कटोरी धीर, दीनी धार धरा ॥
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनँद-कन्द सही ।
पद जजत हरत भवफन्द, पावत मोक्षमही ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं...

गोशीर कपूर मिलाय, केसर रंग भरी ।
जिन चरनन देत चढ़ाय, भव आताप हरी ॥ चौ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्व...

तन्दुल सित सोम समान, सुन्दर अनियारे ।
मुक्ताफल की उनमान, पुञ्ज धरों प्यारे ॥ चौ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति

वर-कंज कदम्ब कुरण्ड, सुमन सुगन्ध भरे ।
जिन अग्र धरों गुनमण्ड, कामकलंक हरे ॥ चौ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्व...

मन - मोदन मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने ।
रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने ॥ चौ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व....

तम-खण्डन दीप जगाय, धारों तुम आगै ।
सब मोहतिमिर क्षय जाय, ज्ञानकला जागै ॥ चौ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपा..

दश गन्ध हुताशन माँहिं, हे प्रभु ! खेवत हों ।
मिस धूम करम जर जाँहिं, तुम पद सेवत हों ॥ चौ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा

शुचि पक्व सुरस फल सार, सब ऋतु के ल्यायो ।
देखत दृग मन को प्यार, पूजत सुख पायो ॥ चौ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति

जल फल आठों शुचि सार, ताको अर्घ करों ।
तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों ॥ चौ०

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

जयमाला

दोहा—श्रीमत तीरथनाथ पद, माथ नाय हित हेत ।
गाऊँ गुणमाला अबै, अजर अमर पद देत ॥

घत्तानन्द

जय भवतमभंजन, जनमनकंजन, रंजन दिनमनि स्वच्छकरा ।
शिवमग परकाशक, अरिगणनाशक, चौबीसों जिनराज वरा ॥

पद्धरि छन्द

जय ऋषभदेव ऋषि-गन नमन्त, जय अजित जीत वसु अरि तुरन्त ।
जय सम्भव भव-भय करत चूर, जय अभिनन्दन आनन्दपूर ॥

जय सुमति सुमति दायक दयाल, जय पद्म पद्म दुति तन रसाल ।
जय जय सुपास भव-पास-नाश, जय चन्द, चन्द-तन-दुति-प्रकाश ॥

जय पुष्पदन्त दुति-दन्त-सेत, जय शीतल शीतल-गुन-निकेत ।
जय श्रेयनाथ नुत-सहजभुज्ज, जय वासव-पूजित वासुपुज्ज ॥

जय विमल विमल-पद-देनहार, जय जय अनन्त गुन-गन अपार ।
जय धर्म धर्म शिवशर्म देत, जय शान्ति शान्ति-पुष्टी करेत ॥

जय कुन्थु कुन्थु-आदिक रखेय, जय अरजिन वसु अरि छय करेय ।
जय मल्लि मल्ल हत-मोहमल्ल, जय मुनिसुव्रत व्रतशल्य दल्ल ॥

जय नमि नित वासव-नुत सपेम, जय नेमिनाथ वृष-चक्र-नेम ।
जय पारसनाथ अनाथ-नाथ, जय वर्धमान शिव-नगर साथ ॥

घत्तानन्द

चौबीस जिनन्दा, आनन्द-कन्दा, पाप-निकन्दा, सुखकारी ।
तिन पद-जुग-चन्दा, उदय अमन्दा, वासव-वन्दा, हितकारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति

सोरठा—भुक्ति-मुक्ति-दातार, चौबीसों जिनराजवर ।
तिन पद मन वच धार, जो पूजै सो शिव लहै ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

श्री निर्वाणक्षेत्र पूजा

कविवर द्यानतराय

सोरठा

परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये ।
सिद्धभूमि निश-दीस, मन-वच-तन पूजा करौं ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् । ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः । ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट्

अष्टक (गीता छंद)

शुचि क्षीर-दधि-सम नीर निरमल, कनक झारी में भरौं ।
संसार पार उतार स्वामी, जोर कर विनती करौं ॥

सम्मेदगढ़ गिरनार चम्पा, पावापुरि कैलास कों ।
पूजौं सदा चौबीस जिन, निर्वाणभूमि निवास कों ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं

केसर कपूर सुगन्ध चन्दन, सलिल शीतल विस्तरौं ।
भव-ताप को सन्ताप मेटो, जोर कर विनती करों ॥ सम्मेद०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

मोती-समान अखण्ड तन्दुल, अमल आनन्द-धरि तरौं ।
औगुन-हरौ गुन करौ हमको, जोर कर विनती करौं ॥ सम्मेद०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ फूल-रास सुवास-वासित, खेद सब मन की हरों ।
दुख-धाम-काम विनाश मेरो, जोर कर विनती करों ॥ सम्मेद०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज अनेक प्रकार जोग मनोग धरि भय परिहरों ।
यह भूख-दूखन टार प्रभु जी, जोर कर विनती करों ॥ सम्मेद०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक-प्रकाश उजास उज्ज्वल, तिमिर-सेती नहि डरों ।
संशय-विमोह-विभर्म-तमहर, जोर कर विनती करों ॥ सम्मेद०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ-धूप परम-अनूप पावन, भाव पावन आचरों ।
सब करम पुंज जलाय दीज्यो, जोर कर विनती करों ।।सम्मेद०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बहु फल मँगाय चढ़ाय उत्तम, चार गति सों निरवरों ।
निहचै मुकति फल देहु मोको, जोर कर विनती करों ।।सम्मेद०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गन्ध अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरों ।
'द्यानत' करो निरभय जगत सौं, जोर कर विनती करों ।।सम्मेद०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

जयमाला

सोरठा

श्रीचौबीस जिनेश, गिरि कैलासादिक नमों ।
तीरथ-महाप्रदेश, महापुरुष निरवाण तैं ।।

चौपाई (१६ मात्रा)

नमों ऋषभ कैलास पहारं, नेमिनाथ गिरनार निहारं ।
वासुपूज्य चम्पापुर वन्दौं, सनमति पावापुर अभिनन्दौं ।।१।।

वन्दौं अजित अजित-पद-दाता, वन्दौं सम्भव भव-दुख-घाता ।
वन्दौं अभिनन्दन गण-नायक, वन्दौं सुमति सुमति के दायक ।।२।।

वन्दौं पद्म मुकति-[1]पदमाकर, वन्दौं सुपास आश-पासाहर ।
वन्दौं चन्द्रप्रभ प्रभु चन्दा, वन्दौं सुविधि सुविधि-निधि कन्दा ।।३।।

वन्दौं शीतल अघ-तप-शीतल, वन्दौं श्रियान्स श्रियान्स महीतल ।
वन्दौं विमल विमल-उपयोगी, वन्दौं अनन्त अनन्त-सुखभोगी ।।४।।

पाठान्तर १. पदमाधर

वन्दौं धर्म धर्म-विस्तारा, वन्दौं शान्ति शान्ति-मन-धारा ।
वन्दौं कुन्थु कुन्थु-रखवालं, वन्दौं अर अरि-हर गुणमालं ।।५।।

वन्दौं मल्लि काम-मल-चूरन, वन्दौं मुनिसुव्रत व्रत-पूरन ।
वन्दौं नमि जिन नमित-सुरासुर, वन्दौं पास पास-[1]भ्रमजग हर ।।६।।

बीसौं सिद्धभूमि जा ऊपर, शिखरसम्मेद-महागिरि भूपर ।
एक बार वन्दे जो कोई, ताहि नरक-पशु-गति नहि होई ।।७।।

नरपति नृप सुर शक्र कहावै, तिहुँ जग-भोग भोगि शिव पावै ।
विघन-विनाशन मंगलकारी, गुण-विलास वन्दौं भवतारी ।।८।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

घत्ता

जो तीरथ जावै पाप मिटावै, ध्यावै गावै भगति करै ।
ताको जस कहिये सम्पति लहिये, गिरि के गुण को बुध उचरै ।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जिनवाणी स्तुति

वीर-हिमाचलतैं निकसी, गुरु गौतम के मुख-कुण्ड ढरी है ।
मोह-महाचल भेद चली, जग की जड़तातप दूर करी है ।।

ज्ञान-पयोनिधि माँहिं रली, बहुभंग-तरंगनि सों उछरी है ।
ता शुचि शारद गंगनदी प्रति, मैं अंजुलि कर शीश धरी है ।।

या जग-मन्दिर में अनिवार, अज्ञान-अँधेर छयो अति भारी ।
श्रीजिन की धुनि दीप-शिखा सम, जो नहिं होत प्रकाशन-हारी ।।

तो किस भाँति पदारथ-पाँति, कहाँ लहते रहते अविचारी ।
या विधि सन्त कहैं, धनि हैं, धनि हैं जिन-बैन बड़े उपकारी ।।

पाठान्तर १. भ्रमजर

श्री पूर्णमती माताजी द्वारा रचित पूजाएँ

देव शास्त्र गुरु समुच्चय पूजन

स्थापना

(ज्ञानोदय छंद)

देव जिनेन्द्र दिगम्बर गुरु को, जिनवाणी को वंदन हैं।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्धों का अभिनंदन है॥
जड़ रत्नों की रक्षा करते, काल अनंत गँवाया है।
तीन रत्न शाश्वत निधि पाने, दास शरण में आया है॥१॥

वीतरागता सार जगत में, जबसे मैंने जाना है।
प्रभु पूजा से सिद्धालय को, पाना मैंने ठाना है॥
हृदयांगन में करूँ प्रतीक्षा, नाथ बुलाने आया हूँ।
ज्ञान वेदी पर आन विराजो, यही भाव ले आया हूँ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह ! विद्यमानविंशतितीर्थंकरसमूह !
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिसमूह !
अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह ! विद्यमानविंशतितीर्थंकरसमूह !
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिसमूह
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह ! विद्यमानविंशतितीर्थंकरसमूह !
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिसमूह !
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

द्रव्यार्पण

ज्ञान सिंधु लहराता मुझमें, फिर भी राग में जलता हूँ।
जलन सही ना जाती मुझसे, प्रभु आश पर पलता हूँ॥
देव शास्त्र गुरु विद्यमान श्री, बीस तीर्थंकर नमन करूँ।
सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ मैं, राग आग का शमन करूँ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

चंदन सा शीतल स्वभाव पा, द्वेष अनल में झुलस गया।
किन्तु सौम्य जिन मूरत लख कर, सारे जग को भूल गया॥
देव शास्त्र गुरु विद्यमान श्री, बीस तीर्थंकर नमन करूँ।
सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ मैं, द्वेष दाह का शमन करूँ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं ....।

अक्षयपुर का वासी होकर, खंडित सुख को चाह रहा।
नंत बार धिक्कार मुझे है, निज स्वभाव से दूर रहा॥
देव शास्त्र गुरु विद्यमान श्री, बीस तीर्थंकर नमन करूँ।
सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ मैं, अक्षय पद का वरण करूँ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

कल्पतरु सम स्वभाव मेरा, ज्ञान पुष्प सुरभित होते।
काम भोग की आँधी में सब, फूल गिरे धूमिल होते॥
देव शास्त्र गुरु विद्यमान श्री, बीस तीर्थंकर नमन करूँ।
सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ मैं, निज स्वरूप में रमण करूँ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

समता रस का कूप भरा है, फिर भी तृष्णा प्यासी है।
स्वयं नाथ होकर इच्छा की, बनी चेतना दासी है॥
देव शास्त्र गुरु विद्यमान श्री, बीस तीर्थंकर नमन करूँ।
सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ मैं, अध्यातम रस पान करूँ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

ज्ञान सूर्य चेतन प्राची में, अनंत किरणों वाला हैं।
फिर भी मिथ्यातम ने घेरा, छाया घोर अंधेरा है॥
देव शास्त्र गुरु विद्यमान श्री, बीस तीर्थंकर नमन करूँ।
सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ मैं, मोह तिमिर का नाश करूँ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ....।

चेतन गृह में चिन्मय धूप, निरंतर जलती रहती है।
फिर भी भाव कर्म की शक्ति, मुझको छलती रहती है॥
देव शास्त्र गुरु विद्यमान श्री, बीस तीर्थंकर नमन करूँ।
सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ मैं, अष्ट कर्म विध्वंस करूँ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

रत्नत्रय तरुवर पर सुंदर शिवफल प्राप्त किया स्वामी।
पुण्य फलों में राग भाव कर, भटक रहा मैं भवगामी॥
देव शास्त्र गुरु विद्यमान श्री, बीस तीर्थंकर नमन करूँ।
सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ मैं, मोक्ष महा पद प्राप्त करूँ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो
अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

जल फलादि वसु द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाऊँ मैं स्वामी।
दर्शन ज्ञान चरित गुण आदि, निज में प्रगट करूँ स्वामी॥
देव शास्त्र गुरु विद्यमान श्री, बीस तीर्थंकर नमन करूँ।
सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ मैं, अनर्घ्य पद को प्राप्त करूँ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....।

जयमाला

(चौबोला छंद)

चार घातिया सर्व नाश कर अर्हत पद को पाया है।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, प्रभु को शीश नवाया है॥
छियालीस गुण कहने को है, अनंत गुण के धारी हैं।
नंत चतुष्टय युक्त जिनेश्वर, तीन लोक हितकारी हैं॥१॥

बिन इच्छा खिरती उपकारी, मेघ गर्जना समवाणी।
स्व पर भेद विज्ञान कराती, तीन जगत की कल्याणी॥
तालु ओष्ठ कंठादि न हिलते, नहीं बदलती मुख कांती।
द्वादशांग ओंकारमयी हैं, सर्व अंग से है खिरती॥२॥

वर्तमान के भरत क्षेत्र में, सिद्ध और अरहंत नहीं।
तीन परमपद धारी दिखते, सूरी पाठक और मुनी॥
सूरीश्वर पाठक साधू गण, रत्नत्रय के धारी है।
पथ भूलों को राह दिखाते, गुरुवर भव दुखहारी हैं॥३॥

मन वच तन से गुरु चरणों में, अपना शीश झुकाता हूँ।
जिनवर सी पावन मुद्रा लख, जीवन अर्पण करता हूँ॥
विदेह जाने की नहीं शक्ति, अतः यहीं से नमन करूँ।
सीमंधर से अजितवीर्य तक, बीस तीर्थंकर नमन करूँ॥४॥

एकसाथ इक शत सत्तर भी, तीर्थंकर हो सकते हैं।
किंतु न्यूनतम बीस तीर्थकर, विदेह में ही होते हैं॥
ढाई द्वीप के पन विदेह में, विद्यमान जिन को वंदन।
समवसरण के मध्य विराजे, श्रद्धा से कर लूँ अर्चन॥५॥

शीघ्र दर्श प्रत्यक्ष मुझे हो, यही भावना भाता हूँ।
भावों से जब वंदन करता, समीप ही मैं पाता हूँ॥
मुक्ति का ही लक्ष्य बनाकर, सिद्धप्रभु का ध्यान धरूँ।
अभेद रत्नत्रय को पाऊँ, सिद्धक्षेत्र में वास करूँ॥६॥

सम्यक् दर्शन देव, शास्त्र से ज्ञान, गुरु से चारित हो।
बीस तीर्थ दर्शन से शांति, सिद्ध दर्श से सिद्धि हो॥
देव शास्त्र गुरु पर श्रद्धा हो, बीस तीर्थकर वंदन हो।
सिद्ध शुद्ध पावन परमेष्ठी अष्टकर्म मम खंडन हो॥७॥

दोहा

अनुपम जग में आप हो, इच्छित फल दातार।
शाश्वत शिव फल दीजिये, प्रभु पूजा आधार॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अनंतानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

प्रभुवर को पूजे, शिव पथ सूझे, भव-भव का संताप हरो।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

सोलह कारण पूजन

स्थापना

(हरिगीतिका छंद)

शुभ नाम तीर्थंकर सु कारण, भावना सोलह कही।
सुर पंच कल्याणक मनाते, रत्न वृष्टि हो रही॥
जिन धर्म तीरथ रथ चलाते, तीर्थंकर हितकार हैं।
भविजीव को भवसिंधु तारें, भावना सुखकार हैं॥१॥

दोहा

उत्तम सोलह भावना, भावे बारम्बार।
तीर्थनाथ की अर्चना, देती शिव सुख सार॥२॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननम्। ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् सन्निधिकरणम्।

द्रव्यार्पण

(नरेन्द्र छंद)

मैं हूँ निर्मल शुद्ध आतमा, रूप नहीं लख पाया।
जनम जरा मृत के दुःखों को, देख देख घबराया॥
सोलह कारण शुद्ध भावना, श्रद्धा युत जो भावे।
तीन लोक में पूज्य जिनेश्वर, तीर्थंकर पद पावे॥१॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ..

क्रोधादिक का ताप न मुझमें, द्वेष स्वरूप न मेरा।
किन्तु विकारों में झुलसा हूँ, ताप मिटा दो मेरा॥ सोलह ॥२॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं ....

आतम अक्षय रूप अखंडित, उसे कभी न निहारा।
परपरणति में उलझ रहा हूँ, मिला कहीं न सहारा ॥सोलह॥३॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।
आत्म रूप है पुष्प सा कोमल, पावन गंध न भायी ।
अब तक इंद्रिय मन विषयों की, दुर्गंधी मन भायी ॥
सोलह कारण शुद्ध भावना, श्रद्धा युत जो भावे।
तीन लोक में पूज्य श्रेष्ठ शुभ, तीर्थंकर पद पावे ॥४॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ...।
ज्ञानानंद सुधा रस आतम, फिर क्यों क्षुधा सताती।
षट रस व्यंजन खाये अनगिन, तृप्ति नहीं हो पाती ॥सोलह ..॥५॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....
आत्म ज्ञान दीपक निज में है, उसको नहीं जलाया।
बाहर लाखों दीप जले पर, मिटा नहीं अँधियारा ॥सोलह..॥६॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....
कर्म स्वभाव भिन्न मुझसे है, ये जड़ मैं चेतन हूँ।
फिर भी ये बलजोर नाथ कमजोर हुआ मैं क्यों हूँ॥सोलह..॥७॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।
स्वानुभूति फल मधुर स्वयं में, कभी नहीं चख पाया।
कर्मफलों के रस को पीकर, काल अनंत बिताया ॥सोलह..॥८॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।
जग के सारे नश्वर पद तज, नाथ शरण में आया।
सिद्धों केवसु गुण पाने यह, अर्घ्य बनाकर लाया॥सोलह..॥९॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

जाप्य

'ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो नमो नमः।'

जयमाला

दोहा

सोलह कारण भावना, तीर्थंकर पद हेतु ।
गुणमाला अर्पण करूँ, पा जाऊँ शिव सेतु ॥१॥

(चाल - शेर)

जय तीर्थनाथ की करूँ मैं आज अर्चना ।
जय दर्श विशुद्ध्यादि को मम भाव वंदना ॥
शुभ भावना के भाव से तीर्थेश हो गये ।
हम भव्य जीव आपके ही दास हो गये ॥२॥
शंकादि दोष मुक्त शुद्ध हो गया दर्शन ।
दर्शन विशुद्धि भावना को भाव से नमन ॥
चारों विनय धरे वही सु-साधना करे ।
शिवद्वार खोल मोक्ष नार दर्श वो करें ॥३॥
व्रत शील को निर्दोष रूप पालते सदा ।
निज आत्मा को देह से ही मानते जुदा ॥
निज ज्ञान को वे ज्ञान भाव श्रुत में लगाते ।
अभीक्ष्ण ज्ञान में सदा उपयोग रमाते ॥४॥
संसार से भयभीत है विरक्त भावना ।
तन भोग से निरीह हुए मोक्ष कामना ॥
शक्ति न छिपाये कभी चउ दान जो करें ।
इच्छा निरोध करके ही वे घोर तप करें ॥५॥
बारह प्रकार के तपों से कर्म नशाते ।
ऐसे महा तपस्वियों को शीश झुकाते ॥
जो ध्यानलीन साधकों के विघ्न टारते ।
सम्यक् समाधि अंत हो ये भाव धारते ॥६॥

रोगी मुनि की सेवा जो निःस्वार्थ ही करें ।
निरोग हो स्वयं अनंतवीर्य को धरें ॥
अरिहंत भक्ति आत्म शक्ति मुक्ति प्रदाता ।
गुणगान जो करे उसे न पाप सताता ॥७॥
आचार्य देव के गुणों की भक्ति जो करें ।
संयम की नाव पाय के भव-सिंधु को तरे ॥
है ज्ञानवान उपाध्याय बहुश्रुत धरें ।
आगम पढ़े सुने सदा वो सर्व गुण भरें ॥८॥
आवश्यकों को नित्य जो अवश्य आचरें ।
मन वश करे, स्वतंत्र हो, निष्काम पद वरे ॥
दश धर्म सत्यधर्म की हो जग प्रभावना ।
पूजा विधान दान से हो धर्म भावना ॥९॥
जिन धर्म देव शास्त्र गुरु को प्रणाम हो ।
इनके गुणों में प्रीत हो वात्सल्य भाव हो ॥
शुभ भावनाओं की प्रभु जी शक्ति दीजिये ।
हे तीर्थनाथ भावना को 'पूर्ण' कीजिये ॥१०॥

घत्ता

जय सोलह कारण, भव दुख वारण, कर्म निवारण कारण हैं ।
तीर्थंकर पद की, अनुपम सुख की, दाता भविजन तारण हैं ॥११॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

प्रभुवर को पूजे, शिव पथ सूझे, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

नवदेवता पूजन

स्थापना

(गीता छंद)

अरि चार घाति विनाश कर, अरहंत पद को पा लिया ।
पुरुषार्थ प्रबल किया प्रभो, मुक्तीरमा को वर लिया ॥
अरहंत पथ पर चल रहे, आचार्य पद वंदन करूँ ।
उवज्झाय साधु श्रेष्ठ पद का, भक्ति से अर्चन करूँ ॥१॥
जिन धर्म आगम चैत्य चैत्यालय शरण को पा लिया ।
भव-सिंधु पार उतारने, नौका सहारा ले लिया ॥
यह भावना मेरी प्रभो, मम ज्ञान महल पधारिये ।
निज सम बना लीजे मुझे, जिनराज पदवी दीजिये ॥२॥

दोहा –सुख दाता नव देवता, तिष्ठो हृदय मँझार ।
भावों से आह्वान करूँ, करो भवोदधि पार ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्व-साधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(तर्ज - माता तू दया करके.....)

जिनको अपना माना, उनसे ही दुख पाया ।
फिर भी क्यों राग किया, यह समझ नहीं आया ॥
यह राग की आग मिटे, ऐसा जल दो स्वामी ।
नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-
चैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं....।

प्रभो ! काल अनादि से, भव का संताप सहा ।
अब सहा नहीं जाता, यह मेटो द्वेष महा॥
इस द्वेष की ज्वाला को, अब शांत करो स्वामी ।
नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी॥२॥

ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं....।

जिसको मैंने चाहा, सब नश्वर है माया ।
जिस तन में हूँ रहता, क्षणभंगुर वह काया॥
क्षत विक्षत जग सारा, अब जाऊँ कहाँ स्वामी ।
नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी॥३॥

ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्....।

इस काम लुटेरे ने, आतम धन लूट लिया ।
मैं मौन खड़ा निर्बल, बस तेरा शरण लिया॥
विश्वास मुझे तुम पर, आतम बल दो स्वामी ।
नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी॥४॥

ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं....।

इस क्षुधा रोग से मैं, प्रभुवर लाचार रहा ।
व्यंजन की औषध खा, ना कुछ उपचार हुआ॥
प्रभु तू ही सहारा है, यह रोग नशे स्वामी ।
नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी॥५॥

ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं....।

पर तत्त्व प्रशंसा में, महिमा पर की आयी ।
नर तन में रहकर भी, निज की ना सुध आयी॥

अब ज्ञान ज्योति प्रगटे, आशीष मिले स्वामी ।
नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी ॥६॥
ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं.... ।

कर्मों की आँधी में, चेतन गृह बिखर गया ।
आया अब दर तेरे, निज आतम निखर गया ॥
शुभ ध्यान अनल में ही, वसु कर्म जले स्वामी ।
नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी ॥७॥
ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं.... ।

पापों का बीज बोया, कैसे शिव फल पाऊँ ।
तप धारूँ कर्म नशे, तब सिद्धालय पाऊँ ॥
मुझे पास बुला लेना, यह अरज सुनो स्वामी ।
नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी ॥८॥
ॐ ह्रीं नवदेवेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं.... ।

वसु कर्मों ने मिलकर, दिन-रात जलाया है ।
गुरुदेव कृपा पाकर, यह अर्घ्य बनाया है ॥
यह पद अनर्घ्य अनमोल, हो प्राप्त मुझे स्वामी ।
नव देव शरण आया, शरणा दो जगनामी ॥९॥
ॐ ह्रीं नवदेवेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.... ।

जाप्य

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः ॥९ बार॥

जयमाला

दोहा

नव देवों की भक्ति से, सब अरिष्ट नश जाय ।
आत्म सिद्धि को प्राप्त कर, अष्टम वसुधा पाय ॥१॥

(चौपाई)

जय अरहंत देव जिनराई, तीन लोक में महिमा छाई ।
घाति कर्म चउ नाश किये हैं, भव्य जनों में वास किये हैं ॥२॥

दोष अठारह दूर किये हैं, छयालीस गुण पूर्ण हुये हैं ।
समवसरण के बीच विराजे, तीर्थंकर पद महिमा राजे ॥३॥

क्षणभंगुर सारा जग जाना, जड़ चेतन को भिन्न पिछाना ।
कल्याणक सब पंच मनाये, देव इंद्र हर्षित गुण गाये ॥४॥

प्रभो ! आपने प्रभुता पायी, दो हमको समता सुखदायी ।
दुष्ट करम ने मुझको घेरा, निज स्वभाव से मुख को फेरा ॥५॥

प्रभो आप सिद्धालय वासी, दर दर भटका मैं जगवासी ।
अब निज भूल समझ में आई, सिद्धदशा ही मन में भायी ॥६॥

करो नमन स्वीकार हमारा, भव सागर से करो किनारा ।
कर्म भँवर में मेरी नैया, गुरुवर तुम बिन कौन खिवैया ॥७॥

गुण छत्तीस मुनीश्वर धारे, इस कलयुग में आप सहारे ।
दीक्षा देकर राह दिखाते, खुद चलते चलना सिखलाते ॥८॥

उपाध्याय पद है तम नाशे, गुण पच्चीस ज्ञान परकासे ।
अट्ठाईस गुणों के धारी, साधू पद की महिमा भारी ॥९॥

श्री जिनधर्म अहिंसा प्यारा, गूँज उठा है जग में नारा ।
आगम आतम बोध कराता, फिर चेतन का शोध कराता ॥१०॥

जिनने आगम को अपनाया , अहो भाग्य तुम सा पद पाया ।
अनेकांत मय धर्म सहारा, द्वादशांग को नमन हमारा ॥११॥

कर्म निकाचित् निधत्ति विनाशे, बिम्ब जिनेश्वर आत्म प्रकाशे ।
निज स्वरूप का बोध कराती, जिन सम जिन मूरत कहलाती ॥१२॥

जो जन नित जिन मंदिर जावे, पाप नशे औ पुण्य बढ़ावे ।
परमातम का ध्यान लगावे, शुद्ध होय मुक्तीपुर जावे ॥१३॥
नव देवों को शीश झुकाऊँ, गुण गाऊँ और ध्यान लगाऊँ ।
रहूँ सदा मैं प्रभुवर चरणा, भव-भव मिले आपकी शरणा ॥१४॥
दोहा—पूर्व पुण्य से हो रहा, नव देवों का दर्श ।
अल्प बुद्धि कैसे लहे, अनंत गुण का स्पर्श ॥१५॥
ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

प्रभुवर को पूजे, शिव पथ सूझे, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

ॐ

श्री तीर्थंकर विधान प्रारम्भ

मंगलाचरण

दोहा

चौतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य वसु धार ।
नंत चतुष्टय युक्त जिन, प्रणमूँ बारंबार ॥१॥

(ज्ञानोदय छंद)

जीवन एक मरुस्थल जैसा, कर्म ताप भरपूर है ।
शांति नहीं है मन में किञ्चित्, भेद ज्ञान से दूर है ॥
ऊँचा कुल पाकर भी करता, नीच पाप मय कर्म है ।
धन दौलत माया को पाकर, मानव भूला धर्म है ॥२॥

हेय तत्त्व आदेय तत्त्व का, भान नहीं है किञ्चित् भी ।
विषय भोग में गँवा रहा है, मौलिक मानव जीवन ही ॥
इसीलिए पथ भूलों को, चौबीस जिनेश्वर आश्रय हैं ।
भाव सहित पूजा विधान कर, पा लेते सिद्धालय हैं ॥३॥

वर्तमान चौबीसी पूजा, है विधान मंगलकारी ।
श्रद्धा से जो पूजन करते, होते शिवसुख अधिकारी ॥
दुर्भावों को तुरत मिटाता, कषाय मल का शमन करे ।
साधर्मी में प्रेम बढ़ाता, वीतराग पथ गमन करे ॥४॥

कर्मोदय से घिरा हुआ हो, मन सुख कहीं न पाता हो ।
तन मन के हो दुःख भयंकर, आतम में नहि साता हो ॥
पाप पुण्य में संक्रम करता, मनवांछित सुख पूर्ण करे ।
सर्व ग्रहों को शांत कराता, सर्व व्याधियाँ दूर करे ॥५॥

तीर्थंकर पूजन जो करता, आतम आनंद पाता है ।
कालांतर में स्वयं जिनेश्वर, होकर मुक्ति पाता है ॥
चौबीसों तीर्थंकर की जो, पूजन करता भक्ति से ।
पर द्रव्यों से दृष्टि हटाकर, नाता जोड़े मुक्ति से ॥६॥

चौबीसी समुच्चय जिन पूजन

स्थापना

(ज्ञानोदय छंद)

जय-जय आदि जिनेश्वर अंतिम, महावीर प्रभु दया निधान ।
आत्म शक्ति का आश्रय ले तीर्थंकर पद पाया अभिराम ॥
भवसागर के तीर ले चलो, तीर्थंकर मेरे जिनराज ।
भाव सहित वंदन करता हूँ, पावन हो मन मंदिर आज ॥

जहाँ-जहाँ पर आप विराजे, नमन मेरा स्वीकार करो ।
पास बुला लो या आ जाओ, पूजन को स्वीकार करो ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

द्रव्यार्पण

(ज्ञानोदय छंद)

अनगिन सागर का जल पीकर, तृषा नहीं बुझ पाई है ।
अनुपम शीतल समता जल की, याद कभी ना आई है ॥
हृदय कलश लेकर आया हूँ, श्रद्धा से करता वंदन ।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, नाश करो विधि के बंधन ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

भव ज्वाला से झुलस गया हूँ, मुझे बचा लो हे स्वामी ।
पंचेन्द्रिय सुख नहीं चाहता, अनंत सुख चाहूँ स्वामी ॥
पास नहीं कुछ मेरे जिनवर, भाव समर्पण है चंदन ।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, नाश करो विधि के बंधन ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं ....।

आत्मज्ञान वैभव के अक्षत, से अब तक अनजान रहा ।
अक्षय निधि दानी हे जिनवर ! तव दर्शन वरदान रहा ॥
क्षणभंगुर काया का मैंने, किया आज तक अभिनंदन ।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, नाश करो विधि के बंधन ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

काम भयंकर अभिमानी जो, तीखे तीर चलाता है ।
किंतु आपकी मुद्रा लख क्यों, अपनी नजर झुकाता है ॥

परम ब्रह्म ज्ञानी जिनवर मैं, करता हूँ जीवन अर्पण ।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, नाश करो विधि के बंधन ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

क्षुधा रोग के कारण मैंने, बहु उपचार किये स्वामी ।
भेद ज्ञान औषध नहि पायी, अतः व्यथित हूँ मैं स्वामी ॥
शरणागत पर करुणा कीजे, यही प्रार्थना है भगवन् ।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, नाश करो विधि के बंधन ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

मैंने अपने ज्ञान भानु को, मिथ्या घन में छिपा दिया ।
इसीलिए निज घर ना सूझा, किंतु आपने दिखा दिया ॥
हे जिनवर अज्ञान मिटा दो, ज्ञान दीप ले करूँ नमन ।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, नाश करो विधि के बंधन ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

अष्ट कर्म विध्वंस करूँ अब, चिन्मय धूप जलाऊँ मैं ।
हे सर्वज्ञ जिनेश्वर मेरे, सिद्धालय कब पाऊँ मै ॥
है अधीर यह भक्त तुम्हारा, कह दो कुछ आशीष वचन ।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, नाश करो विधि के बंधन ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

मोक्ष महाफल अति दुर्लभ है, सुलभ करो मेरे जिनवर ।
पुण्य फलों में अहं भाव से, रिक्त करो मेरे प्रभुवर ॥
दिखला दो शिवपंथ मुझे भी, शीश झुका करता वंदन ।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, नाश करो विधि के बंधन ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

जड़ द्रव्यों का मूल्य किया पर, आत्म द्रव्य अनमोल रहा ।
फिर भी निज को जड़ द्रव्यों से, मैं मूरख क्यों तोल रहा॥

शिवपथ की आशा ले आया, अर्घ्य चढ़ा करता वंदन।
वृषभादिक चौबीस जिनेश्वर, नाश करो विधि के बंधन॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो नमो नमः।'

जयमाला

दोहा

श्री चौबीस जिनेश को बारंबार प्रणाम ।
एक यही बस कामना पाऊँ शिवपुर धाम॥१॥

(ज्ञानोदय छंद)

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर तीर्थंकर को करूँ प्रणाम ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ मैं हो जाऊँ निश्चल निष्काम॥
प्रभो! आपकी भक्ति से मैं पाऊँ शाश्वत मुक्तिधाम ।
संयम पथ का अनुरागी शिवराह चलूँ अविरल अविराम॥२॥

आदि जिनेश्वर आदिनाथ प्रभु अरज सुनाने आया हूँ ।
कर्मजयी जिन अजितनाथ मैं तुमसा बनने आया हूँ॥
हे जिनवर संभव करुणा कर भवदधि पार लगा देना ।
हे अभिनंदन अभिनंदनीय, कर्मों के बंध छुड़ा देना॥३॥

मैं अल्पमति हूँ सुमतिनाथ सन्मति प्रदान मुझको कर दो ।
जग में ना कोई वैरी हो पद्मप्रभ मैत्री से भर दो॥
जय-जय सुपार्श्व जिनराज मेरी दृष्टि को स्व सन्मुख कर दो ।
चन्द्रप्रभ चरण शरण में हूँ बस एक नजर मुझ पर कर दो॥४॥

हे पुष्पदंत हो कर्म अंत शिवपंथ सुविधि बतला देना ।
शीतल जिनराज हमारे हो क्रोधानल शीतल कर देना॥

हे श्रेयनाथ दो श्रेय पंथ वसु कर्मशैल चकचूर करूँ ।
श्री वासुपूज्य शत इंद्र पूज्य मैं राग-द्वेष को दूर करूँ ॥५॥

हे विमल नाथ ! निर्मल कर दो उपकार सदा ही स्मरण करूँ ।
हे नाथ अनंत बली मेरे शक्ति दो सम्यक् मरण करूँ ॥
धर्मनाथ पद शीश नवाकर आर्त रौद्र का नाश करूँ ।
धर्म्यध्यान को धारण करके शुक्लध्यान को प्राप्त करूँ ॥६॥

हे शांतिनाथ तव शांत मूर्ति लख परम शांत रस पान करूँ ।
श्रीकुंथुनाथ जिन चरणों में अब निज का ही नित ध्यान धरूँ ॥
हे अरहनाथ तव चरणों में शुभ भाव सँजोकर लाया हूँ ।
इस मोह मल्ल को चूर करो श्री मल्लिनाथ दर आया हूँ ॥७॥

हे मुनिसुव्रत ऐसा व्रत दो मैं नाथ स्वयं का बन जाऊँ ।
अब हार गया जग से स्वामी नमिनाथ शरण को पा जाऊँ ॥
हे नेमिनाथ मैं डूब रहा भव पार करो मेरे स्वामी ।
उपसर्ग विजेता पार्श्व प्रभु सब, जग के प्रिय अंतर्यामी ॥८॥

हे मंगलकारी महावीर अति वीर मुझे आतम बल दो ।
कलयुग में हो आप सहारे हम भक्तों को संबल दो ॥
हे तीर्थंकर ज्ञान सरोवर मैं प्राणी अज्ञानी हूँ ।
भव-भव में बस जन्म मरण की दुख से भरी कहानी हूँ ॥९॥

याचक बनकर आया तेरे दर पर पाने शुभ आशीष ।
हे मेरे चौबीस जिनेश्वर पद में आज नवाऊँ शीश ॥
श्री चौबीस जिनेश्वर पद में वंदन करता बारंबार ।
अंतर्यामी त्रिभुवननामी हम सबके जीवन आधार ॥१०॥

दोहा–मन वच तन से पूजते, वे होते भव पार।
मैं तव चरण सदा रहूँ, क्यों ना हो उद्धार॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

प्रभुवर को पूजे, शिवपथ सूझे, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री आदिनाथ जिन पूजन

स्थापना

(ज्ञानोदय छंद)

आदि जिनेश्वर आदिनाथ प्रभु के चरणों में करूँ नमन ।
नाभिराय के राजदुलारे माँ मरुदेवी के नंदन॥
पतित-जनों को नाथ आपने दिया मुक्ति का अवलंबन ।
श्रद्धा भाव विनय से करता तव चरणों का आह्वानन॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

द्रव्यार्पण

(ज्ञानोदय छंद)

क्षीरोदधि का क्षीर वर्ण सम, श्रद्धा जल लेकर आया ।
श्री चरणों में भेंट चढ़ाने, और नहीं कुछ भी लाया॥
आदीश्वर जिनराज आपने, श्रद्धा जल यदि स्वीकारा ।
पा जाऊँगा निश्चित ही मैं, जन्म मृत्यु से छुटकारा॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

चंदन जलता स्वयं किंतु, अपनी सुगंध फैलाता है ।
तव चरणों की पूजा का वह, द्रव्य स्वयं बन जाता है ॥
आदीश्वर जिनराज हमारे, चंदन को यदि स्वीकारा ।
पा जाऊँगा भवाताप से, निश्चित ही मैं छुटकारा ॥२॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

उज्ज्वल अक्षत तंदुल लेकर, द्वार आपके आया हूँ ।
दूर करोगे पाप बोझ से, आशा लेकर आया हूँ ॥
आदीश्वर जिनराज अर्चना के अक्षत स्वीकार करो ।
अखंड अक्षय सुख दो मुझको, नश्वरता से दूर करो ॥३॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

रोग भयंकर विषय भोग का, कहीं नहीं उपचार हुआ ।
विवश हो गया मारा-मारा, हार गया लाचार हुआ ॥
आदीश्वर जिनराज भक्ति के, सुमन यदि स्वीकारोगे ।
है विश्वास अटल यह मेरा, निज सम आप बना लोगे ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।

सुमेरु पर्वत जितना खाया, क्षुधा रोग ना शांत हुआ ।
कई समंदर रिक्त किये पर, तृषा रोग ना शमन हुआ ॥
आदीश्वर जिनराज चरण में, चरु चढ़ाने आया हूँ ।
पूर्ण भरोसा तुम पर स्वामी, क्षुधा मेटने आया हूँ ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।

छाया मिथ्या घोर अँधेरा, गिरा अँधेरे में हर बार ।
श्रद्धा दीपक आप जला दो, निज दर्शन कर लूँ इस बार ॥
आदीश्वर जिनराज आपका, यह उपकार न भूलूँगा ।
जब तक श्वास रहेगी घट में, तेरी ही जय बोलूँगा ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।

किया बहुत पुरुषार्थ मगर, कर्मों का नाश न कर पाया ।
अहंकार को तजकर प्रभु जी, आप शरण में हूँ आया ॥
आदीश्वर जिनराज यदि मैं, एक नजर पा जाऊँगा ।
संसारी फिर नहीं रहूँगा, मुक्तिनाथ कहलाऊँगा ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

मोक्ष मिलेगा इस आशा में, काल अनंता बिता दिया ।
दुष्कर्मों ने ऐसा लूटा, नाम धर्म का मिटा दिया ॥
आदीश्वर जिनराज शीश अब, अपना आज नवाऊँगा ।
पार किया ना तुमने जिनवर, और कहाँ मैं जाऊँगा ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

मेरे पास नहीं कुछ स्वामी, कैसे अर्घ्य बनाऊँगा ।
आतम धन से निर्धन हूँ मैं, अब तुम सम बन जाऊँगा ॥
आदीश्वर जिनराज आज यदि, अपना भक्त बनाओगे ।
सच कहता हूँ शीघ्र मुझे भी, सिद्धालय में पाओगे ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

सर्वार्थसिद्धि को तजकर स्वामी, नगर अयोध्या में आये ।
कर्मभूमि के आदि जिनेश्वर, मरुदेवी उर में आये ॥
शुभ आषाढ़ कृष्ण द्वितीया को, धन्य हुई यह वसुंधरा ।
शरद पूर्णिमा का चंदा ही, मानो धरती पर उतरा ॥१॥
ॐ ह्रीं आषाढकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

तीन लोकमें सब जीवों को, कुछ पल सुख का भान हुआ ।
जन्म हुआ है 'आदि' प्रभु का, देवों को यह ज्ञान हुआ ॥

चैत वदी नवमी का दिन था, नाभिराय गृह जन्म लिया ।
गिरि सुमेरु पर पांडुकवन में, क्षीरोदधि से न्हवन किया ॥२॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं .

जन्म कल्याणक की खुशियाँ थी, तप संयम में बदल गई ।
नीलांजन का नृत्य देख, दृष्टि शिव पाने मचल गई ॥
चैत कृष्ण की नवमी शुभ थी, पंच मुष्टि कचलोंच किया ।
जय-जय ऋषभनाथ जिनवर ने, उत्तम मुनि पद धार लिया ॥३॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...

फाल्गुन वदी एकादशी को, प्रभु चार घातिया नाश किया ।
कर पुरुषार्थ प्रबल जिनवर ने, केवलज्ञान प्रकाश लिया ॥
समवसरण में सब जीवों के, मिथ्यातम का नाश हुआ ।
हुई प्रफुल्लित धरती ही क्या, प्रमुदित सब आकाश हुआ ॥४॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय..

माघ कृष्ण चौदस के दिन, कैलाश गिरि ने यश पाया ।
आठों कर्म विनाशे प्रभु ने, अष्टम वसुधा को पाया ॥
तीर्थंकर से परिणय करके, मुक्तिरमा भी धन्य हुई ।
जय-जय आदीश्वर नारों से, पावन धरा अनन्य हुई ॥५॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय..

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा

भक्ति भरी आराधना, कर लो प्रभु स्वीकार ।
शरण आपकी पा गया, हो जाऊँगा पार ॥१॥

(ज्ञानोदय छंद)

जय-जय आदिनाथ तीर्थंकर, धर्म सारथी तुम्हें प्रणाम ।
निज स्वभाव साधन से तुमने, पाया शाश्वत मुक्तिधाम ॥
पंद्रह मास रतन बरसे औ, माँ को सोलह स्वप्न दिये ।
तीन ज्ञान के धारी जिनवर, भूतल पर विख्यात हुये ॥२॥

जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र में, नगर अयोध्या महा विशाल ।
नाभिराय अंतिम कुलकर से, जन्में मरुदेवी के लाल ॥
देवों ने अति हर्ष भाव से, पाण्डु शिला अभिषेक किया ।
बालपने में ही जिनवर ने आत्म शक्ति को दिखा दिया ॥३॥

राज्य अवस्था में ही सारे, जग के कष्ट मिटाये थे ।
मोक्ष पंथ के राही थे पर, शुभ षट्कर्म सिखाये थे ॥
नीलांजन का नृत्य देखकर, वस्तु स्वरूप विचार किया ।
लौकांतिक देवों ने आकर, नत हो जय-जयकार किया ॥४॥

सिद्धारथ वन में जाकर प्रभु, निज आतम का किया मनन ।
नमः सिद्धेभ्यः भावों से कह , सब सिद्धों को किया नमन ॥
एक हजार वर्ष तप करके, शुक्लध्यान में हुए मगन ।
चार घातिया कर्म नाश कर, पाया केवलज्ञान गगन ॥५॥

मैं संसारी कर्म जाल में, फंसा चतुर्गति किया भ्रमण ।
रुचि न जागी सिद्ध स्व पद की, अतः कर रहा जन्म मरण ॥
समवसरण में नाथ आपने, सप्त तत्त्व उपदेश दिया ।
वृषभसेन गणधर से श्रोता, भरतराज ब्राह्मी आर्या ॥६॥

धर्मचक्र का किया प्रवर्तन मंगल मय जब हुआ विहार ।
धन्य हुआ कैलाशधाम जब, हुआ कर्म का उपसंहार॥

बिना आपकी शरण जिनेश्वर, अनंत भव में भ्रमण किया।
सिद्धालय को पा जाऊँ बस, इसी भाव से शरण लिया॥७॥

आज आपकी पूजा करके, मेरे मन आनंद हुआ।
पुण्य कर्म का उदय हुआ औ, पाप कर्म भी मंद हुआ॥
हे प्रभुवर तव पथ पर चलकर, शाश्वत सुख को पा जाऊँ।
घबराया हूँ इस भव वन में, कब शिवनगरी आ जाऊँ॥८॥

आदि तीर्थ करतार जिनेश्वर, मुक्ति के प्रभु हो आधार।
दुष्कर्मों का नाश कीजिये, शीघ्र करो मेरा उद्धार॥
ज्ञान नहीं है शब्द नहीं हैं, भावों की गूंथी यह माल।
नमन करूँ स्वीकारो जिनवर, श्रद्धा से अर्चित जयमाल॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ...।

घत्ता

हे प्रथम जिनेश्वर, श्री आदीश्वर, भव-भव का संताप हरो।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री अजितनाथ जिन पूजन

स्थापना

(सखी छंद)

श्री अजितनाथ पद वंदन, स्वीकारो मम अभिनंदन।
अति पुण्य उदय है आया, करने आया हूँ अर्चन॥
प्रभु आप स्वयं वैरागी, मैं तव चरणन अनुरागी।
है काल अनंत गंवाया, अब प्रीत प्रभु से जागी॥
मैं ध्याऊँ शाम सवेरा, मेटो भव-भव का फेरा।
नहीं और लगाओ देरी, भक्तों ने प्रभुवर टेरा॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम् ।

द्रव्यार्पण

(सखी छंद)

भवसागर डूब रहा हूँ, कर्मों से ऊब रहा हूँ ।
अब पार लगा दो नैया, चरणों में आन खड़ा हूँ ॥
श्री अजितनाथ जिनराजा, मेरे उर माहि समा जा ।
यहाँ कोई नहीं सहारा, प्रभु तारण तरण जहाजा ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

प्रभु बहुत लगाया चंदन, ना किया प्रभु पद वंदन ।
यह भूल हुई प्रभु मुझसे, मेटो सारा दुख क्रंदन ॥श्री...॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

पर को ही अपना माना, निज को खंडित पहचाना ।
यह जग नश्वर है सारा, नहि दिखता कहीं ठिकाना ॥श्री...॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

यहाँ मोह की मदिरा पी है, अपनी ही सुध बिसरी है ।
फिर दोष दिया है पर को, चेतन कलियाँ बिखरी हैं ॥श्री...॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।

तृष्णा ने जाल बिछाया, मैं समझ नहीं कुछ पाया ।
हो गया क्षुधा का रोगी, चरु औषध पाने आया ॥श्री...॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।

अज्ञान अँधेरा छाया, मिथ्यातम ने भरमाया।
निज घर को ही प्रभु भूला, नहि दिखता चेतन राया ॥श्री...॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

हूँ स्वयं ही पर का कर्ता, मिथ्या भ्रम सारी जड़ता।
समकित की धूप मिले तो, सारे बंधन हर लेता ॥श्री...॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

निज सुख पलभर न पाया, सुख-दुख फल में भरमाया।
शिव सुख फल रस का प्याला, अब जी भर पीने आया ॥श्री ..॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

अब तक कई अर्घ्य चढ़ाये, प्रभु एक नहीं मन भाये।
वसु द्रव्य चढ़ा प्रभु आगे, यह दास चरण सिर नाये ॥श्री..॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(ज्ञानोदय छंद)

कृष्ण अमावस ज्येष्ठ मास को, विजया माता हर्षाए ।
विजय विमान त्याग कर प्रभुजी, नगर अयोध्या में आए ॥१॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णामावस्यायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय..

कर्म विजय करने वाले है, अतः अजित जिन नाम दिया ।
माघ शुक्ल दशमी को जन्मे, पाण्डु शिला पर न्हवन किया ॥२॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लदशम्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय ...

लौकांतिक देवों ने आकर, किया जगत में जय जयकार ।
माघ शुक्ल नवमी को प्रभु ने, तप धारण का किया विचार ॥३॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लनवम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं.

बारह वर्ष मौन रहकर फिर, पाया केवलज्ञान महान ।
पौष शुक्ल एकादशी के दिन, दिया मुक्ति संदेश महान ॥४॥
ॐ ह्रीं पौषशुक्लैकादश्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय..

कूट सिद्धवर पावन भू से, चैत्र शुक्ल पंचमी का काल ।
अजितनाथ ने मोक्ष प्राप्त कर, सम्मेदाचल किया निहाल ॥५॥
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपंचम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय..

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा– अजितनाथ के पद कमल, मैं पूजूँ धर प्रीत ।
परभावों से हे प्रभो, हो जाऊँ अब रीत ॥१॥

(सखी छंद)

जय -जय श्री अजित जिनंदा, विजया माता के नंदा ।
मैं शरण तिहारी आया, भव्यों के आप हो चंदा ॥२॥

इंद्रिय मन पर जय पाई, बन गए आप मुनिराई ।
प्रभु सार्थक नाम अजित है, हो गए आप जिनराई ॥३॥

हुई समवसरण की रचना, झर रहें फूल सम वचना ।
सब इंद्र देव भी नत हैं, प्रभु महिमा का क्या कहना ॥४॥

प्रभुवर की ऐसी वाणी, यह जन-जन की कल्याणी ।
कब पुण्य उदय मम आये, साक्षात् सुनूँ जिनवाणी ॥५॥

वसु प्रातिहार्य की गरिमा, तीर्थंकर प्रभु की महिमा ।
निर्दोष परम अतिशायी, है चतुर्मुखी जिन प्रतिमा ॥६॥

प्रभु छियालीस गुणधारी, हैं अनंत गुण भंडारी ।
हम अल्पमति किम गायें, चरणों में है बलिहारी ॥७॥

प्रभु आप वरी शिव नारी, मैं भटक रहा संसारी ।
प्रभु निज सम मुझे बना लो, पा जाऊँ पद अविकारी ॥८॥

नहीं वचनों में कुछ शक्ति, बस हृदय बसी तव भक्ति ।
बालक को ना ठुकराना, प्रभु देना अविचल मुक्ति ॥९॥

दोहा

अजित प्रभु की अर्चना, संचित दुरित पलाय ।
दास खड़ा कर जोड़ कर, नाशूँ सकल कषाय ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ...... ।

घत्ता

श्री अजित जिनेश्वर, हे परमेश्वर, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री संभवनाथ जिन पूजन

स्थापना

(चौबोला छंद)

भव-भयहारी संभव जिन के, श्री चरणों में करूँ नमन ।
निज चैतन्य विहारी जिनवर, दूर करो मेरे बंधन ॥
द्रव्य भाव नोकर्म रहित जो, सिद्धालय के वासी हैं ।
मन मंदिर में आन विराजो, हम जिन पद अभिलाषी हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम् ।

द्रव्यार्पण

(तर्ज - नंदीश्वर श्री जिन धाम ...)

पावन समता रस नीर, पाने मैं आया ।
प्रभु जन्म मृत्यु को क्षीण, करने हूँ आया ॥
हे करुणा के अवतार, संभव जिन स्वामी ।
दो शाश्वत सुख हितकार, हे अंतर्यामी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

समता रस चंदन नाथ, अब तक ना पाया ।
अब भवाताप का नाश, करने मैं आया ॥ हे..२॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

अविनश्वर पद का नाथ, मुझको ज्ञान नहीं ।
शब्दों से किया है ज्ञान, निज पहचान नहीं ॥ हे..३॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

इंद्रिय के विषय जिनेश, मम मन को भाये ।
निज शील रूप का दर्श, अब करने आये ॥ हे..४॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।

तृष्णा का उदर विशाल, अब तक है खाली ।
आनंद अमृत से आज, भर दो ये प्याली ॥ हे..५॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।

तिहुँलोक प्रकाशकज्ञान, की पहचान नहीं ।
छाया मिथ्या अज्ञान, निज का भान नहीं ॥ हे..६॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।

इस कर्म शत्रु को नाथ, निज गृह में पाला ।
मेरे ही धन को लूट, निर्धन कर डाला ॥ हे..७॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं .... ।

हो कर्म चक्र मम चूर्ण, भाव बना लाया ।
शिवमय रस से परिपूर्ण, फल पाने आया ॥ हे..८॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

पर द्रव्यों की अभिलाष, अब तक भायी है ।
आतम अनर्घ्य की बात, नहीं सुहायी है ॥ हे..९॥

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(चौपाई)

फाल्गुन शुक्ल अष्टमी प्यारी, मात सुसेना है अवतारी ।
ग्रैवेयक से आये स्वामी, माथ नवाऊँ अन्तर्यामी ॥१॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लाष्टम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय..

कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा आयी, श्रावस्ती नगरी हर्षायी ।
पांडु शिला अभिषेक किया है, तिहुँ जग में आनंद हुआ है ॥२॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लपूर्णिमायां जन्ममंगलमंडिताय श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय.

मगसिर शुक्ल पूर्णिमा प्यारी, परिग्रह तजकर दीक्षा धारी ।
देवों ने जयकार किया है, तव चरणों में नमन किया है ॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षपूर्णिमायां तपोमंगलमंडिताय श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय

कार्तिक कृष्ण चतुर्थी आई, केवलज्ञान लक्ष्मी पाई ।
समवसरण की महिमा भारी, संभव जिन सबके हितकारी ॥४॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णचतुर्थ्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय

धवलकूट विख्यात हुआ है, अष्ट कर्म का नाश किया है ।
चैत्र शुक्ल षष्ठी सुखकारा, मन वच तन से नमन हमारा ॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लषष्ठ्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं .

-:: जाप्य ::-

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला (स्त्रग्विणी छंद)

हे जिनेश्वर करूँ मैं सदा प्रार्थना ।
आप सुन लीजिये भक्त की भावना ॥
नाथ संभव ! करूँ आपकी अर्चना ।
आत्मसिद्धी मिले एक ही कामना ॥१॥

सर्व ज्ञाता प्रभु हो विधाता प्रभो ।
आज आया शरण पार कर दो विभो ॥२॥ नाथ..

अश्व का चिह्न पद पद्म में शोभता ।
पुण्य तीर्थेश का सर्व मन मोहता ॥३॥ नाथ..

एक दिन मेघ का नाश होते दिखा ।
सर्व वैभव तजा और संयम लखा ॥४॥ नाथ..

वर्ष चौदह किये मौन की साधना ।
पा लिया ज्ञान कैवल्य शुद्धातमा ॥५॥ नाथ..

श्री समोसर्ण रचना करे धनपती ।
नर पशु देव देवी औ आये यती ॥६॥ नाथ..

नाथ की दिव्य अमृत ध्वनि जब खिरे ।
जैसे तरु से निरंतर ही सुमना झरें ॥७॥ नाथ..

शक्ति से सिद्ध जाना है यह आत्मा ।
जो चले राह शिवपुर हो परमात्मा ॥८॥ नाथ..

हे प्रभु भक्त पे अब कृपा कीजिए ।
नाथ तेरा ही हूँ मैं बचा लीजिए ॥९॥ नाथ..

एक ही भावना 'पूर्ण' कर दीजिए ।
नाथ संभव भवाताप हर लीजिए ॥१०॥ नाथ..

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

श्री संभव जिनवर, हे परमेश्वर, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥
॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री अभिनन्दननाथ पूजन

स्थापना

(अडिल्ल छंद)

परम पूज्य अभिनंदन नाथ जिनेश हैं,
कोटिक रवि शशि तेज धरे परमेश हैं ।
पुण्योदय से आज शरण में आ गया,
वीतराग चिद्रूप हृदय को भा गया ॥१॥
बिना आपके काल अनंता हो गया,
गुरू कृपा से भक्त आपका हो गया ।
मन मंदिर में प्रभु बुलाने आया हूँ,
पूजन करके जिनगुण पाने आया हूँ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण (नरेंद्र छंद)

तन की प्यास बुझाने वाला, सरिता का जल लाया ।
आत्म तत्त्व की प्यास जगा दे, वह जल पाने आया॥
हे अभिनंदन स्वामी मेरे, देहालय में आना ।
दर्शन देकर दुष्कर्मों से, मुझको नाथ छुड़ाना ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

तन का ताप मिटाने वाला, शीतल चंदन भाया।
राग आग संताप मिटाने, आप शरण में आया ॥२॥ हे..
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं ....।

परम शुद्ध अक्षय पद पाने, भावाक्षत ले आया ।
भव समुद्र से पार उतरने, नौका पाने आया ॥३॥ हे..
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

अपनी अनुकंपा से जिनवर, इतनी शक्ती देना ।
विषय भोग से हार गया हूँ, कामजयी कर देना ॥४॥ हे..
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

पर द्रव्यों से भूख मिटी ना, क्षुधा रोग है भारी ।
निज आतम अनुभव चरु पाने,आया शरण तिहारी ॥५॥ हे..
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

मेरे ही मिथ्यात्व कर्म से, छाया है अंधियारा ।
प्रभो आपके चरण दीप से, पाऊँ मैं उजियारा ॥६॥ हे..
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

कर्म शत्रु से करी मित्रता, इसका ही फल पाया ।
चउ गतियों में भ्रमण कराया, कर्मों की ये माया ॥७॥ हे..
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

अशुभ भाव केकारण मैंने, कभी नहीं सुख पाया ।
संवर और निर्जरा द्वारा, शिवपथ पाने आया ॥८॥ हे..
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

प्रभो आपके दर्शन पाकर, निज दर्शन ना पाया ।
सिद्धक्षेत्र का आसन पाने, अर्घ्य सजा के लाया ॥९॥ हे..
ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(ज्ञानोदय छंद)

विजय विमान से आये प्रभु जी, नगरी लगती अतिशायी ।
शुभ वैशाख शुक्ल षष्ठी को, माँ सिद्धार्था हर्षायी ॥१॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय

माघ शुक्ल बारस को स्वामी, अभिनंदन ने जन्म लिया ।
नृपति स्वयंवर के प्रांगण में, इंद्र शचि सुर नृत्य किया ॥२॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय

नश्वर बादल को लख प्रभु ने, संयम अंगीकार किया ।
माघ शुक्ल द्वादश को लौकांतिक देवों ने गान किया ॥३॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय

पौष शुक्ल की चतुर्दशी को केवलज्ञान उपाया था ।
समवसरण की रचना करके, धनपति अति हर्षाया था ॥४॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लचतुर्दश्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय

वैशाख शुक्ल षष्ठी के दिन, सम्मेद शिखर से मोक्ष हुआ ।
श्री अभिनंदन तीर्थंकर से, भवि जीवों को लक्ष्य मिला ॥५॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठ्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

(मुक्त : पद्धरि छंद)

जय अभिनंदन जिनवर महान, गुण गाता है सारा जहान ।
हे त्यागमूर्ति वात्सल्य धाम, तीर्थंकर को शत-शत प्रणाम ॥१॥

चौथे तीर्थंकर आप नाथ, पाकर वसुंधरा हुई सनाथ ।
सोलह वर्षों तक मौन रहे, फिर क्षपक श्रेणी आरूढ़ हुये ॥२॥

घाति क्षय कर अरिहंत हुये, भवि जीवों के शिवपंथ हुये ।
प्रभु तीन अधिक थे शत गणधर, श्री वज्रनाभि पहले श्रुतधर ॥३॥
थी मुख्य मेरुषेणा आर्या, सुर नर पशु-गण दर्शन पाया ।
करके विहार उपकार किया, भव्यों का प्रभु कल्याण किया ॥४॥
प्रभु आप नंत गुण के भंडार, वंदन से हो सब दुःख क्षार ।
प्रभु की अमृत झरणी वाणी, है परम प्रमाणी जिनवाणी ॥५॥
निज आत्म तत्त्व है उपादेय, है भाव विकारी नित्य हेय ।
है जीव तत्त्व उपयोगमयी, बिन चेतन तत्त्व अजीव सही ॥६॥
आश्रव औ बंध अहितकारी, संवर औ निर्जर हितकारी ।
जो रत्नत्रय आश्रय लेते, वे मुक्तिरमा को वर लेते ॥७॥
प्रभु ने इस विध उपदेश दिया, पथ भूलों को संदेश दिया ।
मैं त्याग करूँ बहिरातम का, औ लक्ष्य करूँ परमातम का ॥८॥
अंतर आतम होकर स्वामी, बन जाऊँ मैं शिवपथगामी ।
जय-जय जिनवर महिमा निधान, भगवन् कर दो अब कर्म हान ॥९॥
तुम कर्म विजेता जगन्नाथ, मेरी भव व्याधि हरो नाथ ।
नहीं माप सके जलधि अथाह, जल बिम्ब पकड़ने का प्रयास ॥१०॥
त्यों गुण वर्णन करना जिनवर, है अल्पमति मेरी प्रभुवर ।
मैं करूँ भाव से पद प्रणाम, प्रभु देना निश्चित मुक्तिधाम ॥११॥

-:: घत्ता ::-

चौथे तीर्थंकर, भव्य हितंकर, किस विध हम गुणगान करें ।
प्रभु कृपा कीजिये, ज्ञान दीजिये, तव चरणों में आन खड़े ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

-:: घत्ता ::-

अभिनंदन स्वामी, हे जगनामी, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥
॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री सुमतिनाथ जिन पूजन

स्थापना

(सखी छंद)

हे नाथ सुमति के दाता, तव चरणन शीश नवाता ।
अब भाग्य उदय है आया, तव पूजन करने आया ॥१॥

प्रभु तीन लोक के स्वामी, मैं भटक रहा भवगामी ।
इस भवसागर से तारो, दुखिया हूँ नाथ उबारो ॥२॥

यह भक्त पुकारे आओ, प्रभु अब ना देर लगाओ ।
मेरे मन मंदिर रहना, मुझको अब भगवन बनना ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(तर्ज - पाँचों मेरु ....)

गंगा जल सम नीर चढ़ाय, जन्म रोग का नाश कराय ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥
जिन पूजा है जग में सार, किया न अब तक आत्म विचार ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

भव आताप सहा नहीं जाय, नाशन हेतु चंदन लाय ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥२॥ जिन..
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

शुभ भावों के अक्षत लाय, पद अक्षय अनुपम प्रगटाय ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥३॥ जिन..
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

निज अखंड पद रूप अनूप, पाऊँ जिनवर ब्रह्म स्वरूप ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥४॥ जिन..
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।

उत्तम संयम चरू सुहाय, क्षुधा रोग अविलम्ब नशाय ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥५॥ जिन..
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।

ज्ञान दीप अनमोल जलाय, मोह तिमिर अज्ञान मिटाय ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥६॥ जिन..
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।

ध्यानअग्नि में कर्म जलाय, सिद्धालय का दर्श कराय ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥७॥ जिन..
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं .... ।

प्रभुभक्ति ही शिवफल दाय, भक्त प्रभुजी शीश नवाय ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥८॥ जिन..
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं .... ।

प्रभु पद का जो ध्यान लगाय, शिव अनमोल रतन शुभ पाय ।
सुमति दातार, हे जिनराज करो भव पार ॥९॥ जिन..
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं .... ।

पंचकल्याणक

(सखी छंद)

श्रावण शुक्ला द्वितीया थी, माँ मंगला उर खुशियाँ थी ।
प्रभु नगर अयोध्या आये, इंद्रादिक सुर मुस्काये ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लद्वितीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय

प्रभु जन्म लिया सुखदाता, एकादशी चैत्र कहाता ।
शुभ स्वर्ण देह के धारी, हर्षित नगरी है सारी ॥२॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

वैशाख शुक्ल नवमी को, सब त्याग दिये परिजन को ।
जय सुमतिनाथ तीर्थंकर, हो प्राणिमात्र क्षेमंकर ॥३॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लनवम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय

जब प्रतिमा योग को धारा, अद्भुत प्रकाश उजियारा ।
वो चैत्र सुदी ग्यारस थी, केवललक्ष्मी प्रगटी थी ॥४॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

जब ग्यारस चैत्र सुदी थी, तब पाई शिवलक्ष्मी थी ।
प्रभु अचल हुए अविचल से, शुभ कूट सम्मेदाचल से ॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा –प्रभु क्षेत्र से दूर हूँ, रखना मेरा ध्यान ।
शिव आलय में आ बसूँ, दो ऐसा वरदान ॥१॥

(चौपाई)

हे पंचम तीर्थेश नमस्ते, गिरी शिखर से मुक्त नमस्ते ।
अरि नाशक अरहंत नमस्ते, वीतराग जिन संत नमस्ते ॥२॥

जन्म अयोध्या नगर नमस्ते, भव्य जीव आधार नमस्ते ।
पितु मेघप्रभ माँ मंगला से, जन्म लिया है प्रभु नमस्ते ॥३॥

दुखहारी सुखकार नमस्ते, त्रिभुवनपति हितकार नमस्ते ।
सत्य तथ्य शिवकार नमस्ते, दोष अठारह मुक्त नमस्ते ॥४॥

शील धर्म परिपूर्ण नमस्ते, भविजन पालक नाथ नमस्ते ।
एक शतक सोलह गणधर से, सुमतिनाथ जिनराय नमस्ते ॥५॥

पंचम गति आवास नमस्ते, चिदानंद चिद्रूप नमस्ते ।
राग-द्वेष से रहित नमस्ते, नंत गुणों से सहित नमस्ते ॥६॥

भक्त करे त्रय योग नमस्ते, स्वीकारो जिनईश नमस्ते ।
पतित जनों के शरण नमस्ते, पावन शिवपुर पंथ नमस्ते ॥७॥

पद पूजित शत इंद्र नमस्ते, सुमति-सुमति दातार नमस्ते ।
जन्म नमस्ते, मोक्ष नमस्ते, जिन जीवन है धन्य नमस्ते ॥८॥

मोक्ष कल्पतरु नाथ नमस्ते, कामधेनु चिन्मणी नमस्ते ।
ज्ञान सिंधु उत्तीर्ण नमस्ते, 'विद्यासागर पूर्ण' नमस्ते ॥९॥

दोहा

दुर्बुद्धि कुमति तजूँ, धरूँ सुमति सुखकार ।
परमातम से मिलन हो, अर्पण गुण-मणि-हार ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

श्री सुमति जिनंदा, आनंद कंदा, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री पद्मप्रभ जिन पूजन

स्थापना

(ज्ञानोदय छंद)

जय-जय पद्म जिनेश्वर मेरे, पावन पद्माकर सुखधाम ।
भव दुखहर्ता, मंगलकर्ता, छठवें तीर्थंकर अभिराम ॥

हरो अमंगल प्रभु अनादि का, भाव यही लेकर आया ।
मन मंदिर है मेरा सूना, आह्वानन करने आया ॥

वीतराग सर्वज्ञ हितैषी, पद्म जिनेश्वर प्रभु महेश ।
पूजा को स्वीकारो स्वामी, दिखला दो मुक्ति का देश ॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(ज्ञानोदय छंद)

जन्म मरण की इस ज्वाला में, अब तक मैं जलता आया ।
सिंधु नीर से बुझी न ज्वाला, अतः भक्ति का जल लाया ॥
श्री पद्माकर पद्म जिनेशा, तव दर्शन कर हर्षाया ।
आत्म शांति पाने को भगवन्, शरण तिहारी हूँ आया ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

भवाताप से व्यथित हुआ हूँ, अगणित दुख पाये स्वामी ।
तप्त हृदय शीतल कर दो, संताप हरो अंतर्यामी ॥२॥ श्री..

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

नश्वरता में ही सुख माना, अक्षय पद ना जाना है ।
दर्श आपका पाया जबसे, जिन पद पाना ठाना है ॥३॥ श्री..
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

इंद्रिय सुख के महाजाल में, भगवन् फँसकर तड़फ रहा ।
मुझे बचा लो काम विषय से, तुम्हें छोड़कर जाऊँ कहाँ ॥४॥ श्री..
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

तरह-तरह के व्यंजन खाकर, क्षुधा न मन की मिट पाई ।
मन की इच्छाओं पर स्वामी, अब तक विजय नहीं पाई ॥५॥ श्री..
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

मोह महातम नाश हेतु, यह दीपक भेंट चढ़ाना है ।
अंतर घट में हो उजियारा, ज्ञान ज्योति प्रकटाना है ॥६॥ श्री..
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

पर परणति के नाश हेतु, यह धूप सुगंधित लाया हूँ ।
अष्ट कर्म को जला जलाकर, धूम्र उड़ाने आया हूँ ॥७॥ श्री..
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

दुष्कर्मों के फल को भोगा, चतुर्गति में किया भ्रमण ।
मोक्ष महाफल पाने भगवन्, आया तेरी चरण शरण ॥८॥ श्री..
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

जल से फल का वैभव सारा, आज चढ़ाने आया हूँ ।
निज अनर्घ्य पद देना स्वामी, भाव संजोकर लाया हूँ ॥९॥ श्री..
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

माघ कृष्ण षष्ठी के शुभ दिन, हुआ गर्भ कल्याण महान ।
पंद्रह मास रतन बरसाये, किया सुरों ने मंगलगान ॥

उपरिम ग्रैवेयक से आये, मात सुसीमा हर्षाई ।
धरणराज की शुभ नगरी में, अतिशय खुशियाँ हैं छाईं ॥१॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ... ।

कार्तिक कृष्णा तेरस के दिन, त्रिभुवन में आनंद हुआ ।
कौशांबी नगरी में आकर, देवों ने जयगान किया ॥
मेरु सुदर्शन पांडुक वन में, हर्षित हो अभिषेक किया ।
सुराङ्गनाओं ने प्रभु आगे, थिरक-थिरक कर नृत्य किया ॥२॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय..

जाति स्मरण जब हुआ प्रभु को, कार्तिक कृष्ण त्रयोदश थी ।
लौकांतिक देवों ने आकर, तप संयम की अर्चा की ॥
पद्मप्रभ ने मुनिव्रत धारा, जिन पद से अनुराग किया ।
पर तत्त्वों से चित्त हटाया, जग वैभव को त्याग दिया ॥३॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय..

चैत्र शुक्ल की पूर्णमासी थी, चार घाति अवसान किया ।
पाकर केवलज्ञान प्रभु ने, भव बंधन का नाश किया ॥
सप्त तत्त्व का समवसरण में, किया प्रभु सुंदर उपदेश ।
षट् द्रव्यों के प्रभु प्रणेता, जय-जय जयप्रभु पद्म जिनेश ॥४॥
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपूर्णिमायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

फाल्गुन कृष्ण चतुर्थी के दिन, अष्ट कर्म का नाश किया ।
मोहन कूट सम्मेदाचल से, सिद्धालय में वास किया ॥
अंतिम शुक्लध्यान धरकर जब, ऊर्ध्व लोक में किया गमन ।
सादि अनंत सिद्ध पद पाया, भव्य जनों ने किया नमन ॥५॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्थ्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा–पद्म चिह्न शोभित चरण, नमूँ अनंतों बार ।
प्रभु कृपा हो भक्त पर, करें भवाम्बुधि पार ॥१॥

(ज्ञानोदय छंद)

जय-जय पद्मप्रभ जगनामी, आप सर्व जग हितकारी ।
शरण आ गया नाथ आपकी, दुःख सह रहा अति भारी ॥
बहु आरंभ परिग्रह से प्रभु, नरक गति में जा पहुँचा ।
दुःख सहे अनगिनती स्वामी, वचनों से नहि जाए कहा ॥२॥

वैतरणी में गिरा कभी तो, सेमर तरु असि धार बने ।
क्षुधा तृषा से व्यथित हुआ औ, शीत उष्ण के दुःख सहे ॥
राग भाव से अपना माना, वो ही वैरी बने वहाँ ।
आर्तध्यान से मरकर स्वामी, पशू गति में जा पहुँचा ॥३॥

एकेन्द्रिय भी कभी बना तो, दुष्कर्मों का बोझ सहा ।
देव गति भी पाकर भगवन्, विषय भोग में मस्त रहा ॥
प्रभु पूजन भक्ति नहीं कीनी, पर परिणति में भटक गया ।
दुर्लभ नर तन पाकर प्रतिपल, कर्म फलों में अटक गया ॥४॥

प्रभु आपने जग वैभव को, हेय जानकर ठुकराया ।
आत्म साधना के साधन से, परम शुद्ध पद को पाया ॥
भव्य जनों को समवसरण में, वस्तु तत्त्व का ज्ञान दिया ।
है अनंत उपकार आपका, परमातम का ज्ञान दिया ॥५॥

एक शतक ग्यारह थे गणधर, उनको भी मैं नमन करूँ ।
साम्य भाव धर उर अंतर में, राग-द्वेष का हनन करूँ ॥
पद्म जिनेश्वर आप कृपा से, शरण तिहारी आया हूँ ।
बालक पर उपकार करो प्रभु, तुम सम बनने आया हूँ ॥६॥

नाथ आपने भूले भटके, भव्यों को शिव द्वार दिया ।
सिद्धालय की आशा लेकर, मैं भी चरण शरण आया ॥
बाल सूर्य सम वर्ण आपका, पद्मप्रभ जिनराज महान ।
जयमाला अर्पण करता हूँ, पा जाऊँ मैं भी निर्वाण ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

श्री पद्म जिनेशा, नमित सुरेशा, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री सुपार्श्वनाथ जिन पूजन

स्थापना

(नरेंद्र छंद)

श्री सुपार्श्व प्रभु के चरणों में, पूजन करने आया ।
चिद्भावों को विशुद्ध करके, कर्म नशाने आया ॥
दर्श किया तो लगा मुझे यों, सिद्धालय को पाया ।
हृदय कमल में बस जाओ प्रभु, भक्ति सुमन ले आया ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(स्रग्विणी छंद)

जन्म और मृत्यु का रोग भारी प्रभो ।
सब मिटा दो अहो दुःखहारी विभो ॥

आज भावों से पूजा करूँगा प्रभो।
जन्म का नाश निश्चित करूँगा विभो॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।
कर्म आताप से नाथ जर्जर हुआ।
शांति मुझको मिली जब से दर्श हुआ॥
आज भावों से पूजा करूँगा प्रभो।
भव का संताप नाश करूँगा विभो॥२॥
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं ....।
जो पाया अभी तक वो नाश हुआ।
आपको देख शाश्वत का भान हुआ॥
आज भावों से पूजा करूँगा प्रभो।
पद अक्षय को निश्चित वरूँगा विभो॥३॥
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।
भा रही थी मुझे काम बंध कथा।
आपके दर्श से भा रही आतमा॥
आज भावों से पूजा करूँगा प्रभो।
शुद्ध आतम का दर्श करूँगा विभो॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।
भूख व्याधि मुझे नाथ तड़पा रही।
तृष्णा नागिन प्रभु जी डँसी जा रही॥
आज भावों से पूजा करूँगा प्रभो।
अक्ष मन के विषय को तजूँगा विभो॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।
मोह माया का तूफान भटका रहा।
ज्ञान नभ में घना मेघ मंडरा रहा॥

आज भावों से पूजा करूँगा प्रभो ।
आप सम पूर्णज्ञानी बनूँगा विभो ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।

कर्म बंधन की कारा में कब से पड़ा ।
नाथ मुझको छुड़ा लो मैं दर पे खड़ा ॥
आज भावों से पूजा करूँगा प्रभो ।
अष्ट कर्मों का नाश करूँगा विभो ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं .... ।

यूँ ही जीवन गंवाया है निष्फल रहा ।
राग-द्वेष ने लूटा है उपवन महा ॥
आज भावों से पूजा करूँगा प्रभो ।
मोक्षलक्ष्मी का स्वामी बनूँगा विभो ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं .... ।

आप ही मोक्षलक्ष्मी के स्वामी महा ।
भव से तारो मुझे मैं व्यथित हूँ यहाँ ॥
आज भावों से पूजा करूँगा प्रभो ।
अर्चना से जिनेश्वर बनूँगा विभो ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ... ।

पंचकल्याणक

(स्रग्विणी छंद)

भाद्र शुक्ला की षष्ठी मनोहर अति ।
गर्भ में आ गये तीन जग के पति ॥
स्वप्न को देख माँ पृथ्वी हरषा गई ।
जय सुपार्श्व प्रभो देवियाँ कह रही ॥१॥

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

जन्म वाराणसी में प्रभु ने लिया।
सुप्रतिष्ठ के गृह को पवित्र किया॥
ज्येष्ठ शुक्ला की बारस तिथि आ गई।
सर्व आनंद की ही छटा छा गई॥२॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय..

जन्म उत्सव ही दीक्षा में बदला तभी।
राग पथ त्याग वैराग्य धारा तभी॥
रूप हैं निर्विकारी महाव्रत धरें।
श्री सुपार्श्व प्रभुजी की जय-जय करें॥३॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय...

कृष्ण फाल्गुन की षष्ठी तिथि आ गई।
नाशे चउ घातिया निज निधि मिल गई॥
हुई रचना समोसर्ण की सुखकरी।
ध्वनि सुपार्श्व प्रभुवर की है हितकरी॥४॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णषष्ठ्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय...

सप्तमी कृष्ण फाल्गुन की जब आ गई।
वसु विधि नाशकर शिवरमा मिल गई॥
मोक्ष का धाम कूट प्रभास रहा।
दर्श कर पा रहे यात्री शांति महा॥५॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय..

-:: जाप्य ::-

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमो नमः।'

जयमाला (ज्ञानोदय छंद)

जय सुपार्श्व सप्तम तीर्थंकर, दीनानाथ कहाते हो।
हम अज्ञानी रागी-द्वेषी, तुम जगनाथ कहाते हो॥

स्वस्तिक चिह्नित पद कमलों में, करते वंदन बारम्बार ।
श्री सुपार्श्व जिनराज हमारे, करते हैं भविजन को पार ॥१॥
कहूँ नाथ क्या आज आपसे, मैं दुखिया भववासी हूँ ।
तेरी अनुपम करुणा का ही, नाथ हुआ अभिलाषी हूँ ॥
आज आपकी महिमा सुनकर, आया हूँ श्री चरणों में ।
कृपा आपकी हो जाये तो, लीन रहूँगा चरणों में ॥२॥
नहीं सुनोगे मेरी अरजी, और कहाँ मैं जाऊँगा ।
अन्य आपसा सच्चा भगवन्, और कहाँ मैं पाऊँगा ॥
भटक रहा हूँ भव-वन में, सन्मार्ग मुझे अब दे देना ।
कौन सुनेगा जग में मेरी, नाथ मुझे अपना लेना ॥३॥
बहुविध उपसर्गों को सहकर, जगत पूज्य अरहंत हुये ।
ऊर्ध्व मध्य औ अधोलोक से, प्रभु आप जगवंद्य हुये ॥
पंचानवे गणधर प्रभु के थे, मीनार्या थी प्रमुख महान ।
बारह कोठे में श्रोतागण, सुन वाणी करते कल्याण ॥४॥
अरिहंत पद पाकर प्रभु ने, सप्त तत्त्व उपदेश दिया ।
राग-द्वेष से भव बढ़ता है, जीवों को संदेश दिया ॥
श्रीसुपार्श्व जिनवर को पूजूँ, नित्य उन्हीं का ध्यान करूँ ।
रागादिक का नाश करूँ मैं, मुक्तिवधू अविराम वरूँ ॥५॥
जिसने भी तव चरण धूल को, अपने शीश चढ़ाया है ।
महा भयानक भव सागर से, उसको पार लगाया है ॥
तेरे उद्धारक चरणों पर, नाथ मेरी बलिहारी है ।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, "पूर्ण" ज्ञान के धारी हैं ॥६॥

दोहा–यद्यपि दोष का कोष हूँ, अज्ञानी हूँ नाथ ।
फिर भी भक्ति प्रबल है, चरण नमाऊँ माथ ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

हे सुपार्श्व स्वामी, अंतर्यामी, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

श्री चन्द्रप्रभ जिन पूजन

स्थापना

(ज्ञानोदय छंद)

मुझमें इतनी शक्ति नहीं है, कैसे नाथ पुकारूँ मैं ।
मेरे मन मंदिर आवो या, भावों से आ जाऊँ मैं॥
जैसा प्रभुवर आप कहोगे, वैसा मुझको करना है ।
लक्ष्य यही है चन्द्रप्रभ जी, भवसागर से तरना है॥
भक्त अकेला तड़फ रहा है, विरह वेदना सुन लेना ।
आह्वानन करता हूँ स्वामी, देहालय में आ जाना॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम्।

द्रव्यार्पण

(त्रिभंगी छंद)

प्रासुक जल लाया, चरण चढ़ाया, मन निर्मल ना कर पाया ।
तन का मल धोया, मन ना धोया, बुझी न ज्वाला शरणाया॥
अष्टम तीर्थंकर, घातिक्षयंकर, भव्य हितंकर जिनराई ।
मैं पूजूँ ध्याऊँ, जिन गुण गाऊँ, श्री चन्द्रप्रभ सुखदाई॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

प्रभु भवदधि पारग, शांति विधायक, भवि शिव मारग कारक हो ।
तव धुनि हितकारी, शीतल कारी, भवाताप के हारक हो ॥
अष्टम तीर्थंकर, घातिक्षयंकर ..॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं ....।

सारा जग नश्वर, प्रभु अविनश्वर, भवि रक्षक हो त्रिभुवन में ।
अक्षय पद देना, राह दिखाना, भटक गए हैं भव वन में ॥
अष्टम तीर्थंकर, घातिक्षयंकर .. ..॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

प्रभु विषय विरत हो, आत्म निरत हो, ब्रह्मचर्य व्रत अतिशायी ।
मम काम नशा दो, आतम बल दो, काम शूर है बलशाली ॥
अष्टम तीर्थंकर, घातिक्षयंकर .. ..॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

प्रभु आप निराकुल, मैं हूँ व्याकुल, क्षुधा रोग का रोगी हूँ ।
प्रभु परम वैद्य हो, क्षुधा ध्वंस हो, कर्म फलों का भोगी हूँ ॥
अष्टम तीर्थंकर, घातिक्षयंकर ..॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

जिन वचन तिहारे, कर्म निवारे, सत्पथ मारग प्रगटाये ।
अज्ञान हटायें, ज्ञान जगायें, आरति कर मन हर्षाये ॥
अष्टम तीर्थंकर, घातिक्षयंकर ..॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

प्रभु आप सिद्ध हो, जग प्रसिद्ध हो, शुद्ध गंध को हम लाये ।
प्रभु शुद्ध बना दो, ऐसा वर दो, सिद्धालय को हम जाये ॥
अष्टम तीर्थंकर, घातिक्षयंकर ...॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

प्रभु आप सफल हैं, जग निष्फल है, इंद्रिय सुख को ना चाहूँ ।
सान्निध्य तिहारा, श्रीजिन प्यारा, मोक्ष महा फल पा जाऊँ ॥
अष्टम तीर्थंकर, घातिक्षयंकर ...॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं .... ।

हम दास तिहारे, आये द्वारे, सिद्धक्षेत्र में बस जायें ।
पद अर्घ्य चढ़ाये, शरणे आये, चन्द्रप्रभ सम बन जायें ॥
अष्टम तीर्थंकर, घातिक्षयंकर ...॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं .... ।

पंचकल्याणक

(ज्ञानोदय छंद)

गर्भ दिवस पर मात लक्ष्मणा, देखे सोलह स्वप्न महान ।
चैत्र कृष्ण पंचमी को त्यागा, वैजयंत का महा विमान ॥
चंद्र कांति सम चन्द्रप्रभ की, महिमा वृहस्पति गाते ।
रत्नों की बौछार हो रही, सुर नरपति भी हर्षाते ॥१॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपंचम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....

पौष कृष्ण एकादशी को नृप, महासेन घर जन्म लिया ।
मेरु सुदर्शन पर ले जाकर, जिन बालक का न्हवन किया ॥
प्रभु के जन्म कल्याणक को लख, छाया हर्ष अपार हैं ।
चंद्रपुरी में गूँज रहें हैं, घर-घर मंगलाचार है ॥२॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं..

प्रभुवर के तप कल्याणक की, महिमा वच से कही न जाय ।
संयम तप वैराग्य का उत्सव, करके सुर नर मुनि हर्षाय ॥
वस्त्राभूषण त्याग दिये सब, पंच महाव्रत धार लिया ।
जन्मदिवस के दिन ही प्रभु ने, संयम से अनुराग किया ॥३॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

तीन माह छद्मस्थ रहे प्रभु, निज आतम में होकर लीन ।
फाल्गुन कृष्ण सप्तमी के दिन, केवलज्ञान हुआ स्वाधीन ॥
पूर्णज्ञान है कल्पवृक्ष सम, भविजन मनवांछित पाते ।
समवसरण में सुर नर पशु आ, सम्यग्दर्शन पा जाते ॥४॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय...

महा मोक्ष कल्याण आपका, नमूँ जोड़कर हाथ प्रभो ।
और नहीं कुछ मुझे चाहिये, रहूँ आपके साथ प्रभो ॥
फाल्गुन शुक्ल सप्तमी के दिन, ललित कूट से मुक्त हुये ।
कर्म नष्ट कर सिद्धक्षेत्र में, मुक्तिरमा से युक्त हुये ॥५॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय....

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला (ज्ञानोदय छन्द)

वीतराग अरहंत प्रभु को, मन वच तन से करूँ प्रणाम ।
नंत चतुष्टय के धारी हैं, करते हैं भविजन कल्याण ॥
भावों से भरकर करते हैं, आज प्रभु का हम गुणगान ।
चिंतामणि श्री चन्द्रप्रभ जी, करते सब कर्मों की हान ॥१॥
चन्द्रपुरी के महासेन नृप, हुए यशस्वी अति गुणवान ।
उनकी प्रिय रानी के उर से, जन्मे तीर्थंकर भगवान ॥
जन्म हुआ जब प्रभु आपका, देवों ने जयगान किया ।
प्रभु के तन को देख सभी ने, निज चेतन को जान लिया ॥२॥

राज पाट में न्याय नीति से, यौवन में जब लीन हुये ।
किंतु स्व-पर का भेद जानकर, सिंहासन आसीन हुये ॥
देख चमकती बिजली तत्क्षण, नष्ट हुई तो किया विचार ।
सारा जग क्षणभंगुर माया, वस्त्राभूषण लिये उतार ॥३॥

तीन माह तक मौन रहे और, कठिन तपस्या की जिनवर ।
द्वादश तप के ही प्रभाव से, कर्म निर्जरा की प्रभुवर ॥
सप्तम गुणथानक में पहुँचे, आत्म तत्त्व का करके ध्यान ।
चार घातिया क्षय करते ही, प्रभु ने पाया केवलज्ञान ॥४॥

थे तिरानवे गणधर प्रभु के, मुख्य आर्यिका वरुणा मात ।
श्रोता दानवीर्य आदि ने, वचन सुने होकर नत माथ ॥
नाथ आपने समवसरण में, सार वस्तु को बतलाया ।
नहीं सुनी मैंने जिनवाणी, अतः शरण में अब आया ॥५॥

हे चन्द्रप्रभ आप पंथ पर, चलकर जिन पद पाऊँगा ।
तव प्रसाद से लोक अग्र पर, सिद्धक्षेत्र को जाऊँगा ॥
चन्द्र चिह्न शोभित चरणों में, आज नवाऊँ अपना शीश ।
परम पवित्र सिद्ध पद पाऊँ, ऐसा दो मुझको आशीष ॥६॥

दोहा

कोटि भानु शशि से महा, जिनवर ज्योर्तिमान ।
चन्द्रप्रभ तीर्थेश हैं, अनंत गुण की खान ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

चन्द्रप्रभ स्वामी, हे शिवधामी, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

श्री सुविधिनाथ जिन पूजन

स्थापना

(गीता छंद)

जय-जय विदेही आप जिनवर, पुष्पदंत जिनेश्वरम् ।
श्री सुविधिनाथ जिनेश जय-जय, जय भवोदधि तारणम् ॥
मैं करूँ निर्मल भाव पूजन, ज्ञान सूर्य प्रकाशकम् ।
मम आतमा में आ पधारो, हे मेरे परमेश्वरम् ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम् ।

द्रव्यार्पण

(अडिल्ल छंद)

जन्म जरा मृत्यु से मैं भयभीत हूँ ।
काल अनंता से तृष्णा में लिप्त हूँ ॥
सुविधिनाथ जिनराज शरण में आ गया ।
करुणासागर दयासिंधु मन भा गया ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

तन की तपन मिटाने वाला है चंदन ।
भवाताप का नाश कराता जिन वंदन ॥२॥ सुविधि...

ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

अनुपम शांत निराकुल अक्षय पद पाऊँ ।
अक्षत चरण चढ़ा कर जिन पद गुण गाऊँ॥३॥ सुविधि...

ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

मार्दव गुण को आज पाने आया हूँ।
काम विकार विनाश करने आया हूँ ॥४॥ सुविधि...
ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।
इच्छाओं की भूख मिटाने आया हूँ।
रत्नत्रय नैवेद्य पाने आया हूँ ॥५॥ सुविधि...
ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।
अंतर को आलोकित करने आ गया।
मोह महाबली नाश करने आ गया ॥६॥ सुविधि...
ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।
आठों कर्म विचित्र आतम में छाये।
प्रभु शरण में आते ही सब नश जाये ॥७॥ सुविधि...
ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।
सुविधिनाथ विधि अंत हमारे कीजिये।
सिद्धों जैसा सुख अनंत फल दीजिये ॥८॥ सुविधि...
ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।
जग में सबका मूल्य, आप अनमोल हैं।
अनर्घ्य पद पाने को जिनवर ठोर हैं ॥९॥ सुविधि...
ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(अडिल्ल छंद)

दिखलाते हैं प्रभु के महा प्रभाव को ।
माँ ने देखे सोलह सपने रात को॥
फाल्गुन कृष्णा नवमी की यह बात थी ।
माँ जयरामा के उत्सव की रात थी ॥१॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णनवम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय ..

अंतिम जन्म ही लिया धरा पर नाथ ने ।
नृप सुग्रीव के गृह काकंदी ग्राम में॥
मगसिर शुक्ला एकम को शुभ लग्न में ।
मेरू पर अभिषेक हुआ सुर मग्न हैं॥२॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदायां जन्ममंगलमंडिताय श्रीसुविधिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं

मेघ विलय लख आ गये स्वामी वन में ।
लिये पालकी देव सब आये क्षण में॥
जन्मोत्सव की शहनाई बदली तप में ।
लौकांतिक सुर कहे धन्य जिनवर जग में॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदायां तपोमंगलमंडिताय श्रीसुविधिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं

जिन महिमा को गूँथ सके ना शब्द हैं ।
नाश हो गई त्रेसठ प्रकृति कर्म है॥
कार्तिक शुक्ला दूज केवलज्ञान लिया ।
झुका झुकाकर माथ सबने नमन किया॥४॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वितीयायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीसुविधिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

मोक्ष निकट यह प्रभु आपने जान लिया ।
मास पूर्व ही समवसरण का त्याग किया॥
सुप्रभ कूट से जिनवर ने मुक्ति पाई ।
भाद्र शुक्ल अष्टम की शुभ बेला आई॥५॥

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लाष्टम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय..

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

(ज्ञानोदय छंद)

मंगलमय श्री सुविधि जिनेश्वर, मंगलमय प्रभु की वाणी ।
दुखी देख जग सर्व अंग से, खिरी प्रभु अंतर्वाणी ॥
मकर चिह्न से चिह्नित पद है, मिले भाग्य से मुझको आज ।
भव सिंधु से पार लगा दो, जिनवर अद्‌भुत परम जहाज ॥१॥

प्रभु आपने समवसरण में, दश धर्मों का ज्ञान दिया ।
नहीं सुनी मैंने जिनवाणी, राग-द्वेष का पान किया ॥
धर्म नीर बिन जीवन तरुवर, मिथ्यानल से जला दिया ।
मोक्ष तत्त्व का अर्थ न समझा, नंत काल यों बिता दिया ॥२॥

पुण्योदय से आज प्रभु मैं, समवसरण में आया हूँ ।
दिव्यध्वनि से दश धर्मों का, अमृत पीने आया हूँ ॥
जहाँ क्षमा है वहाँ धर्म है, स्व-पर दया का मूल महान ।
क्रोध कषाय नरक ले जाती, सब दु:खों की यही प्रधान ॥३॥

मान कषाय सदा दुख देती, मार्दव मोक्ष नगर का द्वार ।
सरल भाव सिद्धों का साथी, उत्तम आर्जव है सुखकार ॥
लोभ कषाय नाश कर देती, शौच धर्म करता कल्याण ।
सत्य धर्म मय जो हो जाता, निश्चित पाता है निर्वाण ॥४॥

धन्य-धन्य संयम की महिमा, तीर्थंकर भी अपनाते ।
उत्तम तप जो धारण करते, निश्चित शिव पदवी पाते ॥
अहो दान की महिमा न्यारी, तीर्थंकर भी लें आहार ।
उत्तम त्याग धर्म की जय हो, स्वर्ग मोक्ष का है दातार ॥५॥

सर्व परिग्रह त्याग आकिंचन, सिद्ध स्व पद का दाता है ।
सब धर्मों में श्रेष्ठ धर्म है, ब्रह्मचर्य सुख दाता है ॥

दिव्य वचन सुन लगा मुझे अब, भव सागर का अंत हुआ ।
शरण आपकी जो भी आया, भक्ति से भगवंत हुआ ॥६॥
प्रभु आपकी धर्म सभा में, अट्ठासी गणधर स्वामी ।
श्रीघोषा थी प्रमुख आर्या, बुद्धिवीर्य श्रोता नामी ॥
कर्म अंत करने को स्वामी, शरण आपकी आया हूँ ।
पंच परावर्तन मिट जाये, यही आस ले आया हूँ ॥७॥

सोरठा– नाथ निरंजन आप, पुष्पदंत जिनराज जी ।
हो जाऊँ निष्पाप, कर्म नष्ट कर दो प्रभो ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीसुविधिनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

-:: घत्ता ::-

श्री सुविधि जिनेशा, हे परमेशा, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

श्री शीतलनाथ जिन पूजन

स्थापना (ज्ञानोदय छन्द)

मैं निज घर को भूला भगवन्, पर घर में फिरता रहता ।
बिना भाव से मात्र द्रव्य से, तुम्हें रिझाने मैं आता ॥
निज गृह की पहचान नहीं प्रभो ! तुमको कहाँ बिठाऊँगा ।
मैं अज्ञानी भगवन् कैसे, अनंत गुण को गाऊँगा ॥
है विश्वास अटल यह मेरा, श्रद्धालय में आओगे ।
अपने एक अनन्य भक्त को, निज गृह में पहुँचाओगे ॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम् ।

द्रव्यार्पण

(तर्ज - नंदीश्वर श्री जिन धाम ....)

जल से निर्मल जिनराज, रूप तुम्हारा है ।
जन्मादि रोग क्षयकार, नाथ सहारा है ॥
शीतल जिनराज महान, दर्शन सुखकारी ।
है अनंत गुण की खान, भविजन हितकारी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

चंदन सी शीतल मिष्ट, वाणी है तेरी ।
मैं क्रोधाग्नि में दग्ध, भूल रही मेरी ॥२॥ शीतल.

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं .... ।

निर्मल अक्षय सुखकार, पदवी के धारी ।
प्रभु मुझमें भरे विकार, नाशो अविकारी ॥३॥ शीतल.

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

रत्नों सम गुण की राश, निज शुद्धातम है ।
फिर भी विषयों का दास, बनता आतम है ॥४॥ शीतल.

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।

षट् रस नैवेद्य जिनेश, तृष्णा उपजावे ।
अष्टादश दोष विनाश, करने हैं आये ॥५॥ शीतल.

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।

प्रभु ज्ञान ज्योति तमहार, विश्व प्रकाश किया ।
निज ज्ञान ज्योति हितकार, नहि पुरुषार्थ किया ॥५॥ शीतल.

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।

प्रभु अष्ट कर्म कर नष्ट, आतम गुण प्रगटे ।
हम कर्मों से संतप्त, चारों गति भटके ॥७॥ शीतल.

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं .... ।

पुण्योदय आया आज, फल को भेंट करूँ।
निज मधुर मोक्ष फल काज, श्रद्धा बीज धरूँ ॥८॥ शीतल.
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

शुभ अर्घ्य बनाकर ईश, चरणों में लाये।
भक्तों के भाव मुनीश, आप समझ जाये ॥९॥ शीतल.
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(चौपाई)

चैत्र वदी अष्टम तिथि आई, मात सुनंदा है हरषाई।
स्वर्गपुरी से प्रभु जी आये, पूर्वाषाढ़ नखत कहलाये ॥१॥
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णाष्टम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..

त्रिभुवन में शीतलता छायी, विश्व योग उत्तम फलदायी।
माघ वदी बारस अवतारी, किया न्हवन देवों ने भारी ॥२॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय...

हिम का नाश देख जिनवर ने, जग वैभव सब त्यागा क्षण में।
माघ वदी द्वादश के दिन में, बने मुनीश सहेतुक वन में ॥३॥
ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

पौष कृष्ण की चतुर्दशी थी, पूर्वाषाढ़ा शुभ घड़ियाँ थी।
भद्दलपुर में चार कल्याणक, तीर्थंकर हैं ज्ञान प्रकाशक ॥४॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय...

आश्विन शुक्ला अष्टम तिथि में, कूट विद्युतवर गिरि शिखर से।
शेष पचासी प्रकृति नाशी, हुए जिनेश्वर मुक्तिवासी ॥५॥
ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लाष्टम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय..

-:: जाप्य ::-

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय नमो नमः।'

जयमाला

(तर्ज - अहो जगत गुरु ....)

सौम्य मूर्ति जिन आप, त्रिभुवन के हो स्वामी ।
कल्पतरु है चिह्न मुक्ति दो शिवधामी ॥
जय-जय शीतलनाथ, जय-जय श्री भगवंता ।
दशम तीर्थंकर आप, नमते मुनिगण संता ॥१॥

पंच महाव्रत धार, नाथ हुए वैरागी ।
पुनर्वसु नृपराज, दे आहार बड़भागी ॥
प्रभु कर में पयधार, दे भव सेतु बनाया ।
तीन वर्ष छद्मस्थ, मौन में समरस पाया ॥२॥

आर्त रौद्र दो ध्यान, भव-भव में दुखकारी ।
धर्म शुक्ल प्रशस्त, मुक्ति के अधिकारी ॥
चार घातिया नष्ट, त्रेसठ प्रकृति नाशी ।
जीत अठारह दोष, निज चेतन गृहवासी ॥३॥

समवसरण में नाथ, शीतल की बलिहारी ।
सब प्राणी तज वैर, मन में समताधारी ॥
इक्यासी गणधर, प्रमुख थे कुंथु ज्ञानी ।
मुख्य आर्यिका श्रेष्ठ, धरणा गुण की खानी ॥४॥

चतुर्निकायी देव, प्रभु की महिमा गाये ।
मुनिगण भक्ति समेत बार-बार सिर नायें ॥
प्रभुवर आपके गुण, पार न कोई पावे ।
नाम मात्र से नाथ, भव सिंधु तिर जावे ॥५॥

प्रभु हम दीन अनाथ, चरण शरण में आये ।
वीतराग पद छोड़, और न दूजा भाये ॥

हे प्रभु दया निधान, मुझ पर करुणा कर दो ।
झोली मेरी रिक्त, उसमें शिव फल भर दो ॥६॥

दोहा

इस अपार संसार में, जिन पूजा ही सार ।
वीतराग का ध्यान ही, मोक्षपुरी का द्वार ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

हे शीतल नाथा, गाऊँ गाथा, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री श्रेयांसनाथ जिन पूजन

स्थापना

(ज्ञानोदय छंद)

हे श्रेयनाथ मेरे भगवन्! मैं श्रेय पंथ पाने आया ।
मैं चला अभी तक मोह पंथ, भगवंत संत को ना पाया ॥

निज रूप नहीं जाना मैंने, कैसे वसु द्रव्य सजाऊँ मैं ।
श्रद्धा का थाल लिया कर में, हे स्वामी तुम्हें पुकारूँ मैं ॥

मैंने मन आँगन स्वच्छ किया, विश्वास प्रभु जी आयेंगे ।
प्रभु काल अनादि से सोये, बालक को आज जगायेंगे ॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(तर्ज - हे दीनबंधु ......)

उत्तम क्षमा का जल नहीं, पिया मेरे प्रभो ।
कषायों की कलुषता मिटी नहीं प्रभो ॥
जन्मादि रोग नाशने को आ गया शरण ।
हे श्रेयनाथ दूर कीजिये जनम मरण ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

शीतल सुगंध द्रव्य लेप भी किया प्रभो ।
निज आत्मा का ताप भी मिटा नहीं प्रभो ॥
राग ताप नाशने को आ गया शरण ।
हे श्रेयनाथ दूर कीजिये जनम मरण ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

संयोग औ वियोग का ये सिलसिला रहा ।
उत्पन्न जो हुआ उसी का नाश भी हुआ ॥
गुण अखंड पाने हेतु आ गया शरण ।
हे श्रेयनाथ दूर कीजिये जनम मरण ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

श्रद्धा बिना ही धर्म को करता रहा प्रभो ।
निज ब्रह्म रूप को नहीं लखा मेरे प्रभो ॥
कामबाण नाशने को आ गया शरण ।
हे श्रेयनाथ दूर कीजिये जनम मरण ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।

तृष्णा महाभयंकरी है नागिनी प्रभो ।
निज ज्ञान नागदमनी से बचाइये प्रभो ॥

तृष्णा का रोग नाशने को आ गया शरण ।
हे श्रेयनाथ दूर कीजिये जनम मरण ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

मोहांधकार का विनाश कीजिये प्रभो ।
दैदीप्यमान पूर्णज्ञान दीजिये प्रभो ॥
ज्ञान दीप्ति पाने हेतु आ गया शरण ।
हे श्रेयनाथ दूर कीजिये जनम मरण ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

मैं पाप कर्म का विनाश कर नहीं सका ।
चिर काल से थका हुआ था आप दर रुका ॥
अष्ट कर्म नाश हेतु आ गया शरण ।
हे श्रेयनाथ दूर कीजिये जनम मरण ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

मैं पाप और पुण्य के फलों में लिप्त था ।
बोया बबूल और आम चाहता रहा ॥
मोक्ष फल की भावना से आ गया शरण ।
हे श्रेयनाथ दूर कीजिये जनम मरण ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

स्वानुभूति दिव्य अर्घ्य आपके समीप हैं ।
क्या चढ़ाऊँ नाथ अर्घ्य आपको विदित है ॥
सिद्ध पद के हेतु प्रभु आ गया शरण ।
हे श्रेयनाथ दूर कीजिये जनम मरण ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक (ज्ञानोदय छन्द)

माता विमला गर्भ पधारे, पुष्पोत्तर से गमन किया ।
ज्येष्ठ वदी मावस को सारे, देव लोक ने नमन किया ॥
सिंहपुरी में पिता विमल के, गृह में जय-जयकार किया ।
मात गर्भ में प्रभुवर राजे, किञ्चित् भी नहीं कष्ट दिया ॥१॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णामावस्यायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं .

फाल्गुन वदी ग्यारस को जन्मे, देवासन भी कांप उठे ।
शचि कहे जिनवर से स्वामी, मेरा जन्म मरण छूटे ॥
शीतल मंद सुगंधित वायु, बहती है हौले - हौले ।
क्षीरोदधि का क्षीर नीर ले, देव सभी जय-जय बोले ॥२॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं .

रुकी बहारें ऋतु बसंत की, देख प्रभु वैराग्य धरा ।
फाल्गुन कृष्णा ग्यारस के दिन, श्रवण ऋक्ष में तप धारा ॥
विमलप्रभा पालकी मनोहर, वन पहुँची सुर नर के साथ ।
किये तीन उपवास साथ में, एक हजार हुए मुनिनाथ ॥३॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

माघ वदी मावस अपराह्ले, पूर्णज्ञान का सूर्य उगा ।
पंच सहस धनु उन्नत नभ में, समवसरण की लगी सभा ॥
दिव्यध्वनि से श्री जिनवर ने, जीवों का उद्धार किया ।
जय श्रेयांसनाथ तीर्थंकर, देवों ने गुणगान किया ॥४॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णामावस्यायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

सावन के महिने में शीतल, पूर्ण चंद्र का उदय हुआ ।
सम्मेदाचल संकुल कूट से, जिन श्रेयांस को मोक्ष हुआ ॥
एक सहस मुनि साथ पधारे, शिवलक्ष्मी भी धन्य हुई ।
मोक्ष कल्याणक महिमा मेरे, पुण्योदय से गम्य हुई ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लपूर्णिमायां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीश्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं.

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय नमो नमः।'

जयमाला

दोहा

श्री श्रेयांश जिनेश को, नमन करूँ शत बार ।
मात्र आप आधार हैं, देख लिया संसार ॥१॥

(चाल - शेर)

जय श्रेयनाथ आप श्रेयपंथ दिखाते ।
संसारी जीव आप पाद पद्म में आते ॥
हे विश्व-वंद्य श्रेयनाथ अर्चना करें ।
हो आपको नमोस्तु नाथ वंदना करें ॥२॥

जो भव्य जीव आप तीर्थ स्नान करें हैं।
वे अष्ट कर्म मल समूह नष्ट करें हैं ॥३॥ हे...
हैं ग्यारवें तीर्थंकरा श्रेयांस जिनवरा।
प्रभु आप में रहे नहीं अब दोष अठारा ॥४॥ हे...
हे नाथ जग प्रकाश एक रूप आप ही।
उपयोग नंत ज्ञान दर्श दोय रूप भी ॥५॥ हे...
जिन दर्श ज्ञान वृत्त से त्रिरूप हो तुम्हीं।
आर्हन्त्य के अनंत चतुष्टय स्वरूप भी ॥६॥ हे...
पंच परम इष्ट ब्रह्म पंच रूप हो।
जीवादि द्रव्य जानते तुम षट् स्वरूप हो ॥७॥ हे...
सातों नयों की देशना दी सात रूप हो।
आठों गुणों से युक्त सिद्ध आठ रूप हो ॥८॥ हे...
क्षायिकी नव लब्धियों से नव स्वरूप हो।
दश धर्म के धारी जिनेश दश स्वरूप हो ॥९॥ हे...

ग्यारह प्रतिमाओं का उपदेश दे दिया।
भक्तों ने ग्यारवें जिनेश को नमन किया ॥१०॥ हे...
जिनराज दिव्यदेशना सौभाग्य से मिली।
पावन घड़ी है आज हृदय की कली खिली ॥११॥ हे...
कोई नहीं जिनेश है इस जग में हमारा।
चारों गति में देख लिया तू ही सहारा ॥१२॥ हे...

दोहा– अगणित गुण गण के धनी, मुक्तिरमा के नाथ ।
मेरा भी कल्याण हो, हूँ त्रियोग नत माथ ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

हे श्रेय जिनेश्वर, श्री परमेश्वर, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री वासुपूज्य जिन पूजन

स्थापना (गीता छन्द)

जय वासुपूज्य जिनेश पद में, वंदना शत बार है ।
जिसने लिया है नाम श्रद्धा, से हुआ भव पार है ॥
जबसे प्रभु तव दर्श पाया, एक अतिशय हो गया ।
कोई नहीं भाता मुझे अब, मन विरागी हो गया ॥
भव से बचाकर नाथ अपने, सिद्धमहल बुलाइये ।
या भक्त भव्यों के हृदय में, आइये प्रभु आइये ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम्।

द्रव्यार्पण

शुचि पद्मद्रह का नीर लेकर, आपको अर्पण करूँ ।
मिथ्यात्व मल मेरा नशा दो, हे प्रभु अर्चन करूँ॥
श्री वासुपूज्य शतेन्द्र पूजित, मैं करूँ आराधना ।
संसार से घबरा गया हूँ, बन सकूँ परमातमा॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

भव ताप को चंदन जिनेश्वर, मेट ना सकता कभी।
प्रभु आ गया हूँ मैं भटक कर, पद शरण देना अभी ॥२॥श्री..
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं ....।

तंदुल धवल के पुंज पावन, शुभ्र चरणों में धरूँ।
मैं चार विध आराधना से,चार गति के दु:ख हरूँ ॥३॥श्री..
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

शुभ पुष्प नंदन वन सुगंधित, चरण में अर्पण करूँ।
दुष्काम का संताप हरने, शीश चरणों में धरूँ॥४॥श्री..
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

यह सरस पावन सौम्य रस युत, चरु चरण युग में धरूँ।
जिनराज भव व्याधि मिटा दो, नमन तव पद में करूँ ॥५॥श्री..
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

तव पद कमल की आरती कर, ज्ञान दीप जला सकूँ ।
सब मोह पथ को त्याग कर मैं, मोक्ष पथ अपना सकूँ ॥६॥श्री..
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

शुभ गंध लेकर आ गया हूँ, ध्यान निज का कर सकूँ ।
ये कर्म अष्ट विनष्ट कर मैं, मोक्षगामी हो सकूँ ॥७॥श्री..
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

प्रभु कर्म फल के राग की रुचि, अब नहीं किञ्चित् करूँ।
यह मोक्षफल परमात्म पद पा, शिवमहल में पग धरूँ ॥८॥श्री..
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

हो आप सर्व समर्थ जिनवर, अर्घ्य क्या अर्पण करूँ।
प्रभु आप ही के नंत गुण का, रात-दिन सुमिरण करूँ ॥९॥श्री..
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(तर्ज - जय जय आदिनाथ भगवान (२), इक्षुरस का किया पारणा ....)

जय-जय वासुपूज्य भगवान, जय जय तीर्थंकर भगवान

महाशुक्र वैभव तज आये, आषाढ़ कृष्ण षष्ठी दिन आये।
माँ विजया के गर्भ में आये, सुपूज्य पितु हर्ष मनाये॥
वासुपूज्य गर्भोत्सव के दिन, देव करें जयगान।
जय -जय वासुपूज्य भगवान, जय-जय तीर्थंकर भगवान॥१॥
ॐ ह्रीं आषाढकृष्णषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं.

फाल्गुन कृष्णा का दिन आया, चौदस वारुण योग बताया।
मेरु पर अभिषेक कराया, इंद्रों ने शुभ अवसर पाया॥
इंद्राणी ने हर्ष हर्षकर, नृत्य किया गुणगान।
जय -जय वासुपूज्य भगवान, जय-जय तीर्थंकर भगवान॥२॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय....

फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी आई, पुष्पाभा पालकी भी आई।
मनुज देव ने उसे उठाई, उद्यान मनोहर तक पहुँचाई॥
जाति स्मरण हुआ प्रभुवर को, लीन हुए निज ध्यान।
जय -जय वासुपूज्य भगवान, जय-जय तीर्थंकर भगवान॥३॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय...

माघ शुक्ल की दोज मनोरम, तेंदु तरु तल बाग मनोहर ।
केवलज्ञान प्रकाशित जिनवर, जय हो जय जगपूज्य जिनेश्वर ।
समवसरण में राजे स्वामी, दे उपदेश महान।
जय-जय वासुपूज्य भगवान, जय-जय तीर्थंकर भगवान ॥४॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वितीयायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय...

भादों शुक्ल चतुर्दशी आयी, उडु विशाख शिवलक्ष्मी पाई ।
छह सौ एक साथ मुनिराई, कर्म नष्ट कर मुक्ति पाई ॥
चंपापुर निर्वाण धाम जहाँ, हुए पाँच कल्याण ।
जय-जय वासुपूज्य भगवान, जय-जय तीर्थंकर भगवान ॥५॥

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय....

-:: जाप्य ::-

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला (ज्ञानोदय छन्द)

इंद्र नरेंद्र सुरों से पूजित, वासुपूज्य मेरे भगवान ।
विश्व विजेता विश्व विभूति, जिनवर महिमा महा महान ॥
महिष चिह्न युत पद कमलों को, जो मनमंदिर में धारे ।
पूज्य पदों की परम कृपा से, भक्त स्वयं निज को तारे ॥१॥

तीन ज्ञान के धारी स्वामी, जन्म समय से थे गुणवान ।
वसुदेव पितु माँ विजया ने, दिया सभी को अनुपम दान ॥
प्रभु आपका जन्म जानकर, आनंदित सुर नर सारे ।
ऐरावत गज लेकर आये, लाए वाद्य यंत्र सारे ॥२॥

तीन प्रदक्षिणा दे नगरी की, इंद्राणी जिनगृह आई ।
निद्रालीन किया माता को, मन में हर्षित हो आई ॥
प्रथम किये जिन शिशु के दर्शन, सूरज जैसा अतिशायी ।
सौंप दिया कर में प्रभु जी को, इंद्र अचंभित था भारी ॥३॥

सहस्र नयन से निरख-निरख कर, मेरु सुदर्शन न्हवन किया ।
इंद्राणी ने वस्त्राभूषण, पहनाकर शृंगार किया ॥
चंपापुर में आकर सबने, मात पिता को नमन किया ।
तांडव नृत्य किया अति अद्‍भुत, जिन बालक को सौंप दिया ॥४॥

अष्ट वर्ष की आयु में ही, प्रभु ने अणुव्रत धार लिया ।
ब्रह्मचर्य आजीवन रखकर, पंच मुष्टि कचलोंच किया ॥
दीक्षा लेकर चार ज्ञान युत, मौन रहे इक वर्ष प्रमाण ।
क्षपक श्रेणि चढ़ मोह नाश कर, पद पाया अरहंत महान ॥५॥

देश-देश में विहार करके, मुक्ति का उपदेश दिया ।
धर्म-शुक्ल शुभ ध्यान के द्वारा, मोक्ष मिले संदेश दिया ॥
श्रावक मुनिव्रत को दर्शाया, दीक्षा विधि भी बतला दी ।
छ्यासठ गणधर थे जिनवर के, मुख्यार्या वरसेना थी ॥६॥

गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष, कल्याण हुए चंपापुर में ।
धन्य-धन्य चंपापुर नगरी, धन्य धरा इस भूतल में ॥
हे जिनवर मैं शिवपद पाऊँ, यही भावना है स्वामी ।
"पूर्ण" करो मेरी अभिलाषा, वासुपूज्य त्रिभुवननामी ॥७॥

दोहा

प्रभु कृपा से प्राप्त हो, परम आत्म कल्याण ।
जयमाला चरणन धरूँ, हे जिन पूज्य महान ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

श्री वासुपूज्य जी, लाया अरजी, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

श्री विमलनाथ जिन पूजन

स्थापना (चौपाई)

विमलनाथ प्रभु दर पर आया, श्री चरणों में शीश झुकाया ।
जब से भगवन् दर्शन पाया, और न कोई मन को भाया ॥१॥

काल अनंता व्यर्थ बिताया, आतम को पहचान न पाया ।
पर को जान, मान ही आया, मन मंदिर में नहीं बिठाया ॥२॥

क्षमा कीजिए हे सुखधामी, हृदय वेदी पर आओ स्वामी ।
भक्ति भाव का चौक पुराया, श्रद्धा थाल सजाकर लाया ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(ज्ञानोदय छंद)

परमातम आनंद सरोवर, भावों से जल अर्पित है ।
रत्नत्रय की मुक्ता चुगता, मानस हंसा प्रमुदित है ॥
सम्यग्दर्शन कलश कनकमय, ज्ञान नीर को ले आऊँ ।
जन्म मरण के नाश हेतु श्री, विमलप्रभु के गुण गाऊँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

हे प्रभुवर तुम शांत सौम्य हो, शीतल चंदन ले आया ।
क्रोधानल से दूर रहूँ मैं, अतः शरण में हूँ आया ॥
तप्त हो रहा भवाताप से, समता रस का पान करूँ ।
गुण अनंत मय चंदन पाने, आत्म तत्त्व का ध्यान धरूँ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

जान नहीं पाते अक्षर से, अक्ष अगोचर जिनवर हैं ।
ज्ञान परोक्ष प्रभु जी मेरा, ध्याऊँ कैसे जिनवर मैं ॥
आत्म शक्ति के द्वारा फिर भी,जिन पद का सम्मान करूँ ।
इंद्रिय सुख क्षणभंगुर सारा, शाश्वत सुख का पान करूँ ॥३॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।
तन की ही परिणति को मैंने, अब तक माना धर्म प्रभो ।
शुद्धातम के भाव न जागे, बना रहा अनजान प्रभो ॥
गुण अनंत मय पुष्प खिले हैं, हे जिनवर तव उपवन में ।
कभी नहीं मुरझाने वाले, महके ज्ञान सरोवर में ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।
क्षुधा तृषा से रहित जिनेश्वर, दोष अठारह रहित रहें ।
आनंद रस नैवेद्य अनुपम, पाकर निज में लीन रहें ॥
विषय भोग की चाह नहीं है, हे जिनवर मेरे मन में ।
अनाहारी विमलेश्वर प्रभु को, धारूँ मैं अपने मन में ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।
काल अनादि ज्ञान स्वरूपी, निजानंद को पा न सका ।
तत्त्व ज्ञान की अद्‌भुत महिमा, नहीं इसे पहचान सका ॥
आत्म ज्ञान का दीप जलाकर, पूजा मेरी सफल करो ।
असंख्यात आतम प्रदेश के, दीपों में प्रभु तेल भरो ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।
द्वेष भाव भी नहीं आपके, राग अंश का नाम नहीं ।
ध्यानाग्नि प्रगटी है ऐसी, जला दिये हैं कर्म सभी ॥
आत्म विशुद्धि अनुपम ऐसी, भाव सुगंधी फैल रही ।
सिद्धक्षेत्र तक जा पहुँची है, पथ दिखला दो हमें वही ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

सुखी-दुखी मैं हुआ आज तक, कर्म फलों का वेदन कर ।
स्वानुभूति मय अमृत फल को, चखा नहीं अब तक जिनवर ॥
मोक्ष महाफल शीघ्र मिलेगा, मुझको ये विश्वास प्रभो ।
सम्यक् मूल चरित्र वृक्ष पर, शिवफल पाना आश प्रभो ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

मैं पर का नहीं कर्ता होता, पर भी मेरा क्या करता ।
निमित्त भाव से कर सकता पर, उपादान से क्या करता ॥
पुण्योदय से आप कृपा से, भास रहा है आत्मस्वरूप ।
पा जाऊँ अब निज प्रभुता को, छूट जाए यह भव दुख कूप ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(सखी छंद)

वदी ज्येष्ठ दशमी आई, माँ जयश्यामा हरषाई ।
तजकर शतार जिन आये, कंपिला देव सजवाये ॥
पंद्रह महिने तक बरसे, बहुमूल्य रतन नभगण से ।
सब जन-जन मंगल गाये, हम गर्भ कल्याण मनाये ॥१॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णदशम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

प्रभु जन्म पुनः नहि धारे, नृप कृतवर्मा सुत प्यारे ।
जिन पांडु शिला पर लाये, इंद्रों ने न्हवन कराये ॥
सुद माघ चौथ थी प्यारी, सुरपति शचि भी हरषाई ।
शचि जन्मोत्सव मनाये, इक भव में मुक्ति पाये ॥२॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

जब मेघ नाश को देखा, सब छोड़ दिया जग लेखा ।
लौकांतिक विभु गुण गाया, तप दुद्धर विभु मन भाया ॥

पालकी देवदत्ता थी, उद्यान सहेतुक पहुँची ।
तप कल्याणक सुखदाई, जय विमलनाथ जिनराई ॥३॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

त्रय वर्ष रहे छद्मस्था, प्रभु मौन रहे निज स्वस्था ।
वदि माघ सु षष्ठी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई ॥
पहले पाटल तरु नीचे, फिर अधर गगन में पहुँचे ।
जय विमलनाथ क्षेमंकर, जय त्रयोदशम तीर्थंकर ॥४॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णषष्ठ्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

शुभ कृष्ण अष्टमी आई, आषाढ़ मास सुखदाई ।
गिरि कूट सुवीर शिखर से, शिवनार वरी गिरिवर से ॥
प्रभु आठों करम नशाये, औ निजानंद पद पाये ।
हम मोक्ष कल्याण मनाये, कब पास आपके आये ॥५॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णाष्टम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं.........

जाप्य

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

(चौपाई)

विमलनाथ जिन भवभयहारी, ज्ञान मूर्ति शिशु सम अविकारी ।
परम दिगंबर मुद्रा धारी, शरणागत को मंगलकारी ॥१॥

तेरहवें तीर्थंकर स्वामी, दयामूर्ति समता अभिरामी ।
तेरह विध चारित्र बताया, दिव्यध्वनि में ज्ञान कराया ॥२॥

पाँच महाव्रत पाँच समितियाँ, तीन गुप्ति पाले दिन रतियाँ ।
निश्चय पंच महाव्रत धारी, पाता शिवपद अतिशय कारी ॥३॥

हिंसा झूठ परिग्रह सारे, कुशील चोरी पाप निवारे ।
पूर्ण रूप से इनको त्यागे, सम्यग्दर्शन युत अनुरागे ॥४॥

मिथ्यादर्शन जब तक रहता, शून्य सभी हो चारित चर्या ।
मिथ्यातम है पहले जाता, फिर संयम है क्रम से आता ॥५॥

ईर्या भाषैषणा समिती, निक्षेपण आदान सुनीती ।
प्रतिष्ठापन ये पाँच समिती, मुनी जनों को इनसे प्रीती ॥६॥

बिन विवेक है क्रिया अधूरी, मोक्षमहल से रहती दूरी ।
जब तक है मिथ्यात्व वासना, समिति का है नाम लेश ना ॥७॥

वचन गुप्ति मनो गुप्ति पाले, काय गुप्ति धारे भव टाले ।
मन वच तन जो संयम धारे, योगों की दुष्प्रवृत्ति निवारे ॥८॥

तीर्थ प्रवर्तक आप कहाये, आतम हित चारित्र बताये ।
गुरू कृपा से जागे शक्ती, प्रभु चरणों की कर लूँ भक्ती ॥९॥

दुर्भावों को दूर भगाऊँ, सोयी आतम शक्ती जगाऊँ ।
नाथ आपका पथ अनुगामी, बन जाऊँ मैं शिवपथ गामी ॥१०॥

दोहा

पूजा विमल जिनेश की, भक्ति भरी जयमाल ।
अल्पमति मम 'पूर्ण' हो, गाऊँ तव गुणमाल ॥११॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

जय जय विमलेश्वर, हे अखिलेश्वर, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

श्री अनन्तनाथ जिन पूजन

स्थापना

(अडिल्ल छंद)

अनंत ज्ञानी ज्योतिर्मय जिनराय जी ।
कर्म अंत कर मोक्ष गये शिवराय जी ॥
करुणाकर स्वीकारो प्रभु वंदन मेरा ।
आ गया चरणों में मेटो भव फेरा ॥१॥

शक्ति जब तक मुझमें दर ना छोड़ूँगा ।
जैसी आज्ञा प्रभु आपकी मानूँगा ॥
आह्वानन करता हूँ नाथ आ जाओ ।
भावों के उच्चासन प्रभु समा जाओ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि करणम् ।

द्रव्यार्पण

(तर्ज - हे दीन बंधु ....)

अनादि काल से जनम मरण किया प्रभो ।
इक बार भी सम्यक् मरण नहीं किया विभो ॥
अनंत ज्ञान हेतु नाथ प्रार्थना करूँ ।
जन्म मृत्यु नाश हेतु अर्चना करूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

शीतल मलय सुगंधित चंदन है चढ़ाया ।
भवताप मिटाने प्रभो शरण में हूँ आया ॥

अनंत ज्ञान हेतु नाथ प्रार्थना करूँ ।
संसार ताप नाश हेतु अर्चना करूँ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं ....।

अक्षय प्रभु अनंतनाथ सुख निधान हैं ।
नश्वर सुखों में रुल रहा दुख महान हैं ॥
अनंत ज्ञान हेतु नाथ प्रार्थना करूँ ।
अखंड पद की प्राप्ति हेतु अर्चना करूँ ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

निष्काम आप नाम है न कोई काम है ।
न नाम है न धाम है निज में विराम है ॥
अनंत ज्ञान हेतु नाथ प्रार्थना करूँ ।
अखंड ब्रह्मचर्य हेतु अर्चना करूँ ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

आनंद सरोवर निमग्न आप हैं प्रभो ।
तृष्णा के जाल में फँसा उबार लो प्रभो ॥
अनंत ज्ञान हेतु नाथ प्रार्थना करूँ ।
क्षुधा व्यथा के नाश हेतु अर्चना करूँ ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

ज्ञान भानु का उदय हुआ प्रभो तुम्हें ।
दिखता नहीं अज्ञान अंधकार में हमें ॥
अनंत ज्ञान हेतु नाथ प्रार्थना करूँ ।
ज्ञान के प्रकाश हेतु अर्चना करूँ ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

द्रव्य कर्म भाव कर्म नाश कर दिये ।
ध्यान लीन हो गये निज दर्श पा लिये ॥

अनंत ज्ञान हेतु नाथ प्रार्थना करूँ ।
अष्ट कर्म मेटने को अर्चना करूँ ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

भौतिक सुखों की कामना से धर्म भी किया ।
अतएव क्रिया मात्र से शिव शर्म ना लिया ॥
अनंत ज्ञान हेतु नाथ प्रार्थना करूँ ।
मोक्षलक्ष्मी प्राप्ति हेतु अर्चना करूँ ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

वसु द्रव्य लेय श्रेष्ठ आत्म द्रव्य मिलाऊँ ।
अनंतनाथ के चरण में शीघ्र चढ़ाऊँ ॥
अनंत ज्ञान हेतु नाथ प्रार्थना करूँ ।
सिद्ध पद के हेतु नाथ अर्चना करूँ ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(सखी छंद)

कार्तिक कृष्णा एकम को, आये सपने माता को ।
पुष्पोत्तर तजकर आये, सुर नर मुनि जन हर्षाये ॥१॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णप्रतिपदायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

ज्येष्ठा वदी बारस आई, सुर गृह गूँजी शहनाई ।
नृप सिंहसेन हर्षाये, सारी साकेत सजाये ॥२॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

बजी जन्मोत्सव की बधाई, उल्का गिरने को आई ।
तब एक हजार नृप संग में, दीक्षा ली सहेतुक वन में ॥३॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

जब चैत्र अमा काली थी, तब ज्ञान सूर्य लाली थी ।
प्रभु समवसरण में राजे, और बारह सभा विराजे ॥४॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं .. ।

जब केवलज्ञान हुआ था, उस तिथि में मोक्ष हुआ था ।
गिरि शिखर स्वयंभू कूट, प्रभु गये करम से छूट ॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा

अनंत गुणगण युक्त है, अनंत जिन भगवंत ।
गुणमाला अर्पण करूँ, पा जाऊँ शिवपंथ ॥१॥

(ज्ञानोदय छंद)

जय-जय चौदहवें तीर्थंकर, अनंतनाथ प्रभु दया निधान ।
दे उपदेश भव्य जीवों को, करते आप सदा कल्याण ॥
दीक्षा धर सर्वज्ञ हुए जब, जन-जन का उद्धार किया ।
रत्नत्रय मय मोक्षमार्ग है, दिव्यध्वनि का सार दिया ॥२॥
जीव समास चतुर्दश चौदह, मुख्य मार्गणा बतलाई ।
गुणस्थान जीवों के चौदह, परिभाषा भी बतलाई ॥
तत्त्वों का श्रद्धान नहीं वह, मिथ्यातम कहलाता है ।
उपशम समकित से गिरकर ही, सासादन में आता है ॥३॥
सम्यक् मिथ्या दही गुड़ मिश्रित, भाव मिश्र गुण में आते ।
चौथे अविरत सम्यग्दृष्टि, स्व-पर तत्त्व श्रद्धा लाते ॥
त्रस थावर में विरताविरति, पंचम देश विरत कहते ।
संयम सकल प्रगट हो जाता, उसे प्रमत्तविरत कहते ॥४॥

जहाँ संज्वलन मंद उदय हो, अप्रमत्तविरति होते ।
अष्टम गुण से ही उपशम औ, क्षपक श्रेणी भी चढ़ जाते ॥
कभी पूर्व में प्राप्त हुए ना, वो अपूर्व परिणाम धरे ।
नवमाँ है अनिवृत्तिकरण समकालीन भाव अभेद धरे ॥५॥

दशम सूक्ष्म सांपराय गुण हैं, सूक्ष्म लोभ का उदय रहे ।
पूर्ण रूप से दबे मोह तो, ग्यारहवाँ गुणथान कहे ॥
सकल मोह का क्षय हो जाता, क्षीण मोह द्वादश प्यारा ।
चार घातिया नाश हुए तो, सयोग केवली गुण न्यारा ॥६॥

योग नाश कर चौदहवाँ शुभ, अयोग केवली थान कहा ।
कर्म नष्ट कर सिद्धक्षेत्र में, पहुँच गए है सिद्ध महा ॥
ज्ञाता द्रष्टा रहे जीव तो, राग-द्वेष मिट जाता है ।
स्व सन्मुख दृष्टि जो रखता, मोक्ष परम पद पाता है ॥७॥

समवसृति में प्रभु आपने, इस विध जो उपदेश दिया ।
दिव्यध्वनि सुन लगा मुझे यों, चिदानंद निज देश दिया ॥
हर्ष भाव से पुलकित होकर, प्रभु मैंने की है पूजन ।
पूजा का सम्यक् फल होवे, कटे हमारे भव बंधन ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

-:: घत्ता ::-

जय जय जिनवर जी, अनंतनाथ जी, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

श्री धर्मनाथ जिन पूजन

स्थापना (नरेन्द्र छन्द)

धर्मनाथ जिनवर चरणों में, अपना शीश झुकाता ।
सूरज से भी तेज उजाला, नाथ आपमें पाता ॥
कृपा दृष्टि मिल जाये तो मैं, बिना पंख उड़ सकता ।
मध्यलोक से लोक शिखर तक, क्षण भर में जा सकता ॥
यदि आप मम गृह आये तो, कर्मों से लड़ पाऊँ ।
शाश्वत मुझमें ठहर गये तो, तुम जैसा बन जाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम् ।

द्रव्यार्पण

(तर्ज - पाँचों मेरु असि ....)

शुद्ध ज्ञान का जल भर लाय, धार देत त्रय शांति कराय ।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥
आत्म ध्यान का करूँ उपाय, धर्मनाथ जिनवर गुणगाय ।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

निज स्वभाव चंदन सुखदाय, मन को अतिशय तृप्त कराय ।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥२॥आत्म...

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

सांसारिक पद नहीं सुहाय, उत्तम अक्षय ध्रुव पद पाय ।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥३॥आत्म...

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

शील पुष्प की सुरभि प्रदाय, कामदेव को शीघ्र भगाय।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥४॥आत्म...
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

वंदन तीनों काल जिनाय, क्षुधा रोग अविलंब नशाय।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥५॥आत्म...
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

ज्ञान ज्योति शाश्वत जल जाय, कर्म हवायें बुझा न पाय।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥६॥आत्म...
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

धर्म धूप साधन बन जाय, अष्ट कर्म विध्वंस कराय।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥७॥आत्म...
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

भक्ति भाव से जिन गुणगाय, प्रभु कृपा से शिव फल पाय।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥८॥आत्म...
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

शुभ भावों का अर्घ्य बनाय, पद अनर्घ्य जिनवर दर्शाय।
परम जिनराय, जय-जय नाथ परम सुखदाय ॥९॥आत्म...
ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(सखी छंद)

सर्वार्थसिद्धि तज आये, सुरबाला मंगल गाये।
तेरस वैशाख वदी है, माँ सुव्रता उर हर्षी है ॥१॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णत्रयोदश्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

सुद माघ त्रयोदशि आयी, प्रभु जन्मोत्सव सुखदायी ।
नृप भानुराज हर्षाये, तीर्थंकर सुत को पाये ॥२॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..

जब जन्मोत्सव खुशियाँ थी, तब उल्कापात हुयी थी ।
वैराग्य धरे जिनराजा, इक लाख संग मुनिराजा ॥३॥
ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...

जब पौष पूर्णिमा आयी, प्रभु केवलज्ञान उपायी ।
प्रभु राजे हैं पद्मासन, है दिव्य आपका शासन ॥४॥
ॐ ह्रीं पौषशुक्लपूर्णिमायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...

सुदि ज्येष्ठ चतुर्थी आयी, शिवरमा वरी जिनरायी ।
सूदत्त कूट मन भाया, सम्मेद शिखर सिर नाया ॥५॥
ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लचतुर्थ्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा

धर्मनाथ तीर्थेश के, गुण है नंतानंत ।
गुणमाला कंठे धरे, होता भव का अंत ॥१॥

(चौपाई)

धर्मनाथ जिनवर को वंदूँ , धर्म विधायक विभुवर वंदूँ ।
भानुराज सुत को अभिनंदूँ, मात सुव्रता नंदन वंदूँ ॥२॥

चार ध्यान उपदेशक वंदूँ, धर्मध्यान आराधक वंदूँ ।
शुक्लध्यान के धारक वंदूँ, प्राणिमात्र उपकारक वंदूँ ॥३॥

कूट सुदत्त अधीश्वर वंदूँ, सिद्धालय के वासी वंदूँ ।
कर्म अरिंजय स्वामी वंदूँ, मृत्युंजय अभिनामी वंदूँ ॥४॥

चिन्मय चिदानंद जिन वंदूँ, परमानंद जिनेश्वर वंदूँ ।
परम शांत मूरत अभिवंदूँ, महापूज्य त्रिपुरारि वंदूँ ॥५॥

पंचम गति के दायक वंदूँ, इंद्रिय रहित जिनेश्वर वंदूँ ।
काय रहित निष्कायक वंदूँ, योग रहित योगीश्वर वंदूँ ॥६॥

वेद रहित जिन लिंगी वंदूँ, रहित कषाय जिनेश्वर वंदूँ ।
ज्ञानी परम संयमी वंदूँ, केवलदर्शी जिन को वंदूँ ॥७॥

लेश्यातीत भाव को वंदूँ, भव्यातीत दशा को वंदूँ ।
क्षायिक समकित जिन को वंदूँ, सैनी रहित मार्गणा वंदूँ ॥८॥

सदा अनाहारी प्रभु वंदूँ, ज्ञान शरीरी जिनवर वंदूँ ।
पंद्रहवें तीर्थेश्वर वंदूँ, धर्मनाथ अखिलेश्वर वंदूँ ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

हे धर्म दिवाकर, गुण रत्नाकर, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री शान्तिनाथ जिन पूजन

स्थापना (ज्ञानोदय छन्द)

ऊर्ध्व लोक के अग्रभाग पर, रहते हो त्रिभुवननामी ।
सात राजू दूरी पर स्वामी, दूर रहूँ मैं भवगामी ॥
प्रभु आप और बीच हमारे, आज बहुत ही दूरी है ।
आप वीतरागी मैं रागी, श्रद्धा बंधन डोरी है ॥
वचनों में नहि शक्ति प्रभु जी कैसे आज बुलाऊँ मैं ।
भाव भक्ति मेरी सुन लेना, शांति जिनेश पुकारूँ मैं ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम् ।

द्रव्यार्पण

(ज्ञानोदय छंद)

शुद्धातम का शुद्ध नीर श्रद्धा झारी में भर लाया ।
प्रभु दर्श करते ही मिथ्यातम का अंतिम दिन आया ॥
सारे दर को छोड़ प्रभु जी, आज आपके दर आया ।
शांतिनाथ जिनवर चरणों में, स्वभाव जल पाने आया ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

काल अनादि भवाताप से, दुःख अनंत सहा करता ।
निज चैतन्य सदन में प्रभुवर, क्रोधानल धू-धू जलता ॥
सारे दर को छोड़ प्रभु जी, आज आपके दर आया ।
शांतिनाथ जिनवर चरणों में, शीतलता पाने आया ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं ....।

हीरा मोती माणिक आदि, अक्षत लेकर आया हूँ ।
राग-द्वेष बंधन मिट जाये, यही भावना लाया हूँ ॥
सारे दर को छोड़ प्रभु जी, आज आपके दर आया ।
शांतिनाथ जिन चरणांबुज में, अक्षय पद पाने आया ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

निजानंद पुष्पित बगियाँ में, प्रभु विहार नित करते हो ।
अपनी ही फुलवारी में नित, ब्रह्म रूप रस पीते हो ॥
सारे दर को छोड़ प्रभु जी, आज आपके दर आया ।
शांतिनाथ प्रभु के चरणों में, कामजयी होने आया ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

श्रद्धा रस से भरा हुआ, नैवेद्य समर्पित करता हूँ ।
निजानुभव से तृप्त प्रभु की, वीतरागता वरता हूँ ॥
सारे दर को छोड़ प्रभु जी, आज आपके दर आया ।
शांतिनाथ जिनवर चरणों में, शुचिमय चरु पाने आया ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।
अति विरक्त होकर जिन मेरे, आप निरखते निज निधियाँ ।
रत्नदीप से करूँ आरती, मेरी भी खोलो अखियाँ ॥
सारे दर को छोड़ प्रभु जी, आज आपके दर आया ।
शांतिनाथ प्रभु के चरणों में, परम ज्योति पाने आया ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।
प्रभु आपके सिद्धमहल में, ज्ञान धूप घट जलते हैं ।
अतः कर्म के कीट पतंगे, दूर-दूर ही रहते हैं ॥
सारे दर को छोड़ प्रभु जी, आज आपके दर आया ।
शांतिनाथ प्रभु के चरणों में, शुद्ध धूप पाने आया ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।
मम श्रद्धा मंडप में आओ, मुक्ति का उत्सव कर दो ।
फल लाया हूँ प्रभु चढ़ाने, एक नजर मुझ पर कर दो ॥
सारे दर को छोड़ प्रभु जी, आज आपके दर आया ।
शांतिनाथ प्रभु के चरणों में, मुक्तिरमा वरने आया ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।
बिन श्रद्धा के नाथ हजारों, मैंने अर्घ्य चढ़ाये हैं ।
दिखा दिखाकर इस दुनिया को, धर्मी भी कहलाये हैं ॥
सारे दर को छोड़ प्रभु जी, आज आपके दर आया ।
शांतिनाथ प्रभु के चरणों में, पद अनर्घ्य पाने आया ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(सखी छंद)

भादों वदी सप्तमी आई, कुरुवंश में खुशियाँ छाई ।
छप्पन दिक् देवी आई, माता ऐरा हर्षाई ॥
नृप विश्वसेन अर्चित है, प्रभु के कारण चर्चित है ।
सर्वार्थसिद्धि तज आये, इंद्रों ने रत्न बरसाये ॥१॥

ॐ ह्रीं भाद्रकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...

वदी जेठ चतुर्दशी आई, जन्मे त्रिभुवन जिनराई ।
सब जग में आनंद छाया, सुर गिरि अभिषेक कराया ॥
हस्तिनापुर नगरी प्यारी, प्रभु तीन पदों के धारी ।
अतिशय दश है सुखकारी, जय शांतिनाथ त्रिपुरारि ॥२॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..

प्रभु जाति स्मरण हो आया, वैराग्य सहज मन भाया ।
छह खंड राज को छोड़ा, विष भोगों से मुख मोड़ा ॥
सिद्धार्थ पालकी चढ़के, सु आम्रवनी में पहुँचे ।
लौकांतिक शीश नवाये, मुनि शांतिनाथ गुण गाये ॥३॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...

बैठे नंदी तरु नीचे, फिर ज्ञान गगन में पहुँचे ।
सुदी पौष तिथि दशमी को, उपदेश दिया भविजन को ॥
खिरी समवसरण में वाणी, गणधर गूँथी कल्याणी ।
दश केवलज्ञान के अतिशय, प्रभु शांतिनाथ की जय-जय ॥४॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....

जब जेठ वदी चौदस थी, तब पाई शिव लक्ष्मी थी ।
संग नौ सौ थे मुनिराया, गिरि कूट कुंदप्रभ भाया ॥

प्रभु अष्टम वसुधा पाये, हम भी शिव आस लगाये ।
सम्मेद शिखर की जय-जय, श्री शांतिनाथ की जय-जय ॥५॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा–जिन शासन के दीप हो, प्रभो शांत अवधूत ।
नाम मात्र से शांति हो, पाऊँ शांत स्वरूप ॥१॥

(ज्ञानोदय छंद)

शांति विधायक शांति जिनेश्वर, नर सुरपति से वंदित हैं ।
सोलहवें तीर्थंकर स्वामी, तीन लोक में पूजित हैं ॥
द्वादश कामदेव चक्रीश्वर, पंचम पद के धारी हैं ।
बालपने से अणुव्रत धारी, प्राणी मात्र हितकारी हैं ॥२॥
छह खंडों के अधिपतियों को, शीघ्र आपने जीत लिया ।
चक्र दिखाकर मात्र पुण्य से, चक्री का नहीं मान किया ॥
नव निधि चौदह रत्न प्राप्त कर, धर्मादि पुरुषार्थ किया ।
जाति स्मरण जब हुआ आप को, राज तजा वैराग्य लिया ॥३॥
रत्नत्रय साधन के द्वारा, तुमने जिनपद राज किया ।
चक्रवर्ती की अतुल निधि का, सहज भाव से त्याग किया ॥
मंदरपुर के नृप सुमित्र ने, भक्ति से आहार दिया ।
क्षीरधार मुनि कर में देकर, शिवपथ को पहचान लिया ॥४॥
क्षपक श्रेणी आरूढ़ हुये तब, केवलज्ञान प्रकाश हुआ ।
विचरण करके देश-देश में, मोक्षमार्ग उपदेश दिया ॥
राज्य दशा में चक्ररत्न के, भय से नृप ने नमन किया ।
प्रगट हुई चिद्रूप दशा तो, श्रद्धा से तव शरण लिया ॥५॥

श्रीसम्मेद शिखर पर स्वामी, शुक्लध्यान आसीन हुये ।
कूट कुंदप्रभ पुनीत धरा से, सिद्धक्षेत्र में पहुँच गये ॥
अहो भाग्य है मेरा प्रभुवर, दर्श करूँ दो नयनों से ।
शांति जिनेश्वर का गुण गाऊँ, तन से मन से वचनों से ॥६॥

शांतिनाथ जगदीश्वर स्वामी, मुझको भी ऐसा वर दो ।
अनुकूल प्रतिकूल योग में, समता हो ऐसा कर दो ॥
प्रभु आपके चरण पखारूँ, मिथ्या तिमिर विनाश करूँ ।
तीर्थंकर पद वंदन करके, पंच पाप मल नाश करूँ ॥७॥

शांतिनाथ प्रभु का दर्शन कर, सम्यग्दर्शन प्राप्त करूँ ।
शांति विधाता का सुमिरण कर, सम्यग्ज्ञान प्रकाश वरूँ ॥
शांतिनाथ मूरत अर्चन कर, सम्यग्चारित हृदय धरूँ ।
विघ्न विनाशक चरण चित्त धर, बारंबार प्रणाम करूँ ॥८॥

श्री जिनवर का सुयश गान कर, शाश्वत मुक्तिधाम वरूँ ।
शांति जिनेश मोक्ष पद दाता, परम शांत रस पान करूँ ॥
करुणासागर चरणांबुज का, दर्शन कर भव भार हरूँ ।
प्रभु आपके पथ पर चलकर, भव समुद्र को पार करूँ ॥९॥

दोहा

शांति प्रभु के चरण को, चित् सिंहासन धार ।
श्रद्धा द्वीप उजाल कर, ध्याऊँ बारंबार ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

श्री शांति जिनेशा, भविजन ईशा, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री कुन्थुनाथ जिन पूजन

स्थापना

(अडिल्ल छंद)

कुंथुनाथ जिनराज दया के सिंधु हैं ।
नाथ दिवाकर आप सुधाकर इंदु हैं॥
प्राणीमात्र की रक्षा करते नाथ हैं ।
इसीलिए शत इंद्र झुकाते माथ हैं॥१॥
सिद्धालय में जिनवर आप समा गये ।
निज देहालय में परमेश्वर आ गये॥
प्रभो आपका भक्ति से आह्वान करूँ ।
आकर फिर ना जाना ये ही अरज करूँ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(ज्ञानोदय छंद)

प्रासुक जल अर्पण करने से, शुद्ध बनेंगे सोचा था ।
किंतु अशुभ भावों को हमने, नहीं मिटाना चाहा था॥
जनम मरण से व्याकुल होकर, वचनामृत पाने आये ।
कुंथुनाथ जिनराज शरण में, प्रासुक जल पूजन लाये॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

कभी अतीत के विकल्प करते, कभी अनागत के संकल्प ।
भव आताप बढ़ाते रहते, बीत गया यों काल अनंत॥

सिद्धक्षेत्र की शांति पाने, भवाताप हरने आये ।
कुंथुनाथ जिनराज शरण में, श्रद्धा चंदन ले आये ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

जगत उपाधि पाने हेतु, आधि व्याधि से ग्रसित रहे ।
कुगुरु कुदेव कुधर्म की सेवा, मिथ्यादर्शन गृहीत धरें ॥
इसीलिए अविनाशी बनने, निज वैभव पाने आये ।
कुंथुनाथ जिनराज शरण में, अखंड अक्षत ले आये ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

इंद्रिय मन के विषय मनोहर, मिष्ट जहर जैसे लगते ।
आत्म शील के नाशक हैं सब, दुख उत्पन्न सदा करते ॥
चिन्मय रूप मनोहर पाने, आप्त काम होने आये ।
कुंथुनाथ जिनराज शरण में, पुष्प अचेतन ले आये ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।

तन के कारण किञ्चित् किंतु, मन के हित आहार किया ।
तन की भूख तनिक से मिटती, क्षुधा व्याधि को बढ़ा दिया ॥
क्षुधा रोग उपसर्ग मिटा दो, ज्ञान सुधा पाने आये ।
कुंथुनाथ जिनराज शरण में, ले नैवेद्य चले आये ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।

बाह्य रोशनी से बाहर में, सारा तमस मिटा डाला ।
चेतन गृह में मोह बढ़ाकर, मिथ्यातम से भर डाला ॥
महाबली नृप मोह कर्म का, सर्वनाश करने आये ।
कुंथुनाथ जिनराज शरण में, मणिमय दीपक ले आये ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।

धूप दशांगी चढ़ा चढ़ाकर, धूम्र उड़ाई नभ तल में ।
कर्म शक्ति को बढ़ा बढ़ाकर, भटक रहे है भव-वन में ॥

तप अग्नि में कर्म काठ को नाथ जलाने हैं आये ।
कुंथुनाथ जिनराज शरण में, धूप सुगंधी ले आये ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

कर्तापन से कार्य जगत में, किये बहुत दुख पाया है ।
फल पाने की इच्छा ने ही, आतम को तड़पाया है ॥
जग के फल दुखदायी तजकर, शिवफल पाने हैं आये ।
कुंथुनाथ जिनराज शरण में, शुद्ध मनोहर फल लाये ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

पर द्रव्यों का भोग अभी तक, किया बहुत मैंने स्वामी ।
पर पद की अभिलाषा में ही, जीवन व्यर्थ किया स्वामी ॥
जड़ वैभव को चढ़ा आज, चैतन्य विभव पाने आये ।
कुंथुनाथ जिनराज शरण में, अर्घ्य बनाकर ले आये ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(अडिल्ल छंद)

श्रीमती को सोलह सपने दिखलाये ।
श्रावण वदी दशमी को गर्भ में आये ॥
तीनों पद के धारी प्रभुवर धन्य हैं ।
नगर हस्तिनापुर भी लगता रम्य है ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णदशम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....

सूर्यसेन राजा के घर में जन्म लिया ।
एकम सुदी वैशाख दिवस पावन किया ॥
कामदेव तेरहवें रूप मनहारी ।
पांडु शिला अभिषेक हुआ अतिशयकारी ॥२॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां जन्ममंगलमंडिताय श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्रायअर्घ्यं

जाति स्मरण से प्रभु आप संयम धरा ।
सब संसार असार जाना तप निखरा ॥
विजय पालकी चढ़े चले निर्जन वन में ।
तिलक तरु के नीचे प्रभुवर तप करने ॥३॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां तपोमंगलमंडिताय श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

चैत्र शुक्ला तृतीया घाति नष्ट किया ।
समवसरण को रच कुबेर हर्षित हुआ ॥
शिवपथ बतलाया प्रभो ने ज्ञान दिया ।
दिव्यध्वनि से प्रभु विश्व कल्याण किया ॥४॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लतृतीयायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....

ध्यानाग्नि से अष्ट कर्म को दग्ध किया ।
एकम सुदी वैशाख मुक्ति वरण किया ॥
श्री सम्मेदाचल से जिनवर सिद्ध हुए ।
कूट ज्ञानधर गिरिवर की जय बोल रहे ॥५॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्रायअर्घ्यं

-:: जाप्य ::-

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा

कुंथुनाथ भगवान है, करुणा के अवतार ।
इस असार संसार में, प्रभु भक्ती ही सार ॥१॥

(पद्धरि छंद)

जय कुंथुनाथ हे जगन्नाथ, करुणा के सागर प्राणिनाथ ।
जय कुमति निकंदन कुंथुनाथ, हे कल्मष भंजन कुंथुनाथ ॥२॥

जय सुख वारिधि हे कुंथुनाथ, गुणवंत हितंकर कुंथुनाथ ।
जय शिवरमणी के प्राणनाथ, छठवें चक्रेश्वर कुंथुनाथ ॥३॥

जय श्रीमति नंदन कुंथुनाथ, पितु सूर्यसेन सुत कुंथुनाथ ।
पैंतिस गणधर थे आप नाथ, थे मुख्य स्वयंभू मुनीनाथ ॥४॥

हैं कइ हजार शिष्यों के नाथ, श्रोता नर नारी इंद्रनाथ ।
अष्टादश दोष विमुक्त नाथ, प्रभु नंत चतुष्टय युक्त नाथ ॥५॥

मोहारिजयी श्रीकुंथुनाथ, शत इंद्र नमाते शीश नाथ ।
चिन्मय चिंतामणि आप नाथ, कुन्थ्वादि जीव के दया नाथ ॥६॥

जय कौरव वंशी कुंथुनाथ, अज चिह्न चरण है आप नाथ ।
मैं तव चरणों में नमूँ माथ, मुक्ति तक देना साथ नाथ ॥७॥

प्रभु मोक्षनगर में करें वास, जिनपदवी की बस लगी आस ।
जिनराज दर्श की अभिलाष, वसु कर्म दुष्ट का करूँ नाश ॥८॥

अब हो जाऊँ स्वाधीन नाथ, इसलिए नवाऊँ आज माथ ।
प्रभु सादर सविनय नमन आज, जयमाला अर्पण मुक्ति काज ॥९॥

-:: दोहा ::-

नंत चतुष्टय लीन है, चित् स्वभाव अविकार ।
मुझ पर भी कर दो कृपा, करूँ भवोदधि पार ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

-:: घत्ता ::-

श्री कुंथु जिनेश्वर, हे करुणेश्वर, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री अरनाथ जिन पूजन

स्थापना

(ज्ञानोदय छंद)

अरहनाथ के चरण कमल को, निशदिन बारंबार प्रणाम ।
निष्कलंक निश्चल निष्कामी, निजानंद निष्कल गुणधाम ॥
जग आकर्षण छोड़ सभी मैं, आया जिनवर द्वार प्रभो ।
पुण्योदय से आज मिले हो, कर देना उद्धार विभो ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(तर्ज - नंदीश्वर श्री जिन ....)

जल मल का करता नाश, जल वो ले आया ।
हो कर्म कलंक विनाश, आश लिये आया ॥
अरनाथ जिनेश महान, चरण शरण आया ।
हो स्व-पर भेद विज्ञान, श्रद्धा उर लाया ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

चंदन है जग विख्यात, तन आतप हारी ।
मन का मेटो संताप, भव व्याधि घेरी ॥२॥ अर...

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

नश्वर तन केअनुकूल, बहुविध कर्म करे ।
शाश्वत आतम को भूल, रूप अनेक धरे ॥३॥ अर...

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

यह पुष्पांजलि सुखकार, शील स्वभाव जगे ।
भव सिंधु के उस पार, मेरी नाव लगे ॥४॥ अर...
ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।
यह चरू करूँ मैं भेंट, ऐसा वर देना ।
क्षुध् व्याधि पूर्ण हो नष्ट, ऐसा कर देना ॥५॥ अर...
ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।
सूरज उगते ही प्रात, तम को विनशाये ।
यह दीप समर्पित आज, आतम उजियारे ॥६॥ अर...
ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....
प्रभु आत्म ध्यान की धूप, सम्यक् ज्ञानमयी ।
यह राग-द्वेष दुख रूप, होऊँ कर्मजयी ॥७॥ अर...
ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।
फल चरण चढ़ाऊँ नाथ, शिवफल चाह रखूँ ।
कर्मों का करके नाश, शिवफल को निरखूँ ॥८॥ अर...
ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।
पद मद में हो आसक्त, निज पद को भूला ।
जब हुआ दर्श अनुरक्त, मुक्तिद्वार खुला ॥९॥ अर...
ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(ज्ञानोदय छंद)

मंगल छिन्न स्वप्न सोलह, श्री मात सुमित्रा को आये ।
अपराजित अनुत्तर तजकर, नगर हस्तिनापुर आये ॥
फाल्गुन शुक्ला तृतीया को नृपराज सुदर्शन हर्षाये ।
सुरपति रत्नों को बरसाये, कल्याणक मन को भाये ॥१॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लतृतीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं .

मगसिर शुक्ला चौदश के दिन, तीर्थंकर जग में आये ।
इन्द्र हाथ में स्वर्णिम सुंदर, सहस आठ कलशा लाये ॥
सिद्धक्षेत्र जाने वाले को, पाण्डु शिला पे ले आये ।
कोटी साढ़े बारह बाजे, तरह-तरह के बजवाये ॥२॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लचतुर्दश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्रायअर्घ्यं.

मगसिर सुदि दशमी को स्वामी, मेघ नाश होते देखा ।
वस्त्राभूषण तजे तुरत ही, नश्वर जग से मुख मोड़ा ॥
चक्री पद को त्याग पालकी, वैजयंती में बैठ चले ।
हजार नृप संग तेला करके, अरहनाथ मुनिनाथ बने ॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

कार्तिक सुदि बारस को प्रभु ने, जिनवर की पदवी पायी ।
छ्यालीस गुण प्रकट हुए और क्षायिक नव लब्धि पायी ॥
नाम कर्म की तीर्थंकर शुभ, प्रकृति आज उदय आयी ।
अरहनाथ के जयकारों से, सारी धरती गुँजायी ॥४॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

चैत्र अमावस्या को स्वामी, नाटक कूट निर्वाण लिया ।
एक सहस मुनिनाथ साथ में, सम्मेदाचल धन्य किया ॥
अव्याबाध सुखी होकर प्रभु, देह रहित स्वाधीन हुये ।
पंचमगति को पाने हेतु, तव चरणों में लीन हुये ॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा –अरहनाथ भगवान को, मैं पूजूँ धर ध्यान ।
आप भक्ति की शक्ति से, करूँ आत्म-कल्याण ॥१॥

(चाल - शेर)

अरनाथ आपके चरण को नित्य मैं नमूँ ।
धर ध्यान आपका प्रभु भव सिंधु से तरूँ ॥
देवाधिदेव अरहनाथ आपको नमूँ ।
हे सातवें चक्रेश मुनिनाथ को नमूँ ॥२॥
हे वर्तमान तीर्थनाथ आपको नमूँ ।
हो कामदेव चौदहवें जिन आपको नमूँ ॥
सौधर्म इंद्र आपके चरणों में है नमे ।
गणधर मुनीन्द्र आपकी भक्ति में है रमे ॥३॥
जो नित्य प्रभु आपके दर्शन को है पाता ।
वो पाप नाश करके शीघ्र मोक्ष है पाता ॥
हे नाथ भक्ति आपकी मन से करे सदा ।
उसको न विघ्न व्याधियाँ सताती हैं कदा ॥४॥
पूजा करे विनय से अरहनाथ आपकी ।
हो पूर्ण मनोकामना उस भक्त के मन की ॥
शंकादि दोष टारके समदर्श को पाता ।
वो आठ अंग धारता निज ज्ञान को पाता ॥५॥
तेरह प्रकार के चरित्र धार वो लेते ।
शुद्धोपयोगी होय मुनि आत्म को ध्याते ॥
वे ग्रीष्मकाल में गिरि शिखरों पे रहे हैं ।
वर्षा ऋतु में तरु तले परीषह को सहे हैं ॥६॥
हेमंत काल में मुनि बाहर शयन करें ।
द्वादश प्रकार तप तपे मुनि को नमन करें ॥
उपवास वास करते निज में रहें मुनीश ।
चऊँ घाति घात करके पद पा गये हैं ईश ॥७॥

रचना हुई समवसरण सब ताप अघहरा ।
है तीस जिसमें श्रीकुंथु मुख्य गणधरा ॥
हे नाथ आपका सुयश सुना मैं आ गया ।
मैं भी बनूँ परमात्मा ये मन को भा गया ॥८॥

अज्ञान मान वश यदि जो दोष हैं हुये ।
हे नाथ माफ कीजिये तुम हो दया निधे ॥
अरनाथ आपके चरण को नित्य मैं नमूँ ।
धर ध्यान आपका प्रभु भव-सिंधु से तरूँ ॥९॥

दोहा

मीन चिन्ह युत है चरण, वंदन बारम्बार ।
भावों से दर्शन करूँ, हो जाऊँ भव पार ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

हे अरहनाथ जी, मेरी अरजी, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री मल्लिनाथ जिन पूजन

स्थापना

(चौबोला छंद)

बहुत बुलाया मैंने भगवन्, अब मैं ही खुद आऊँगा ।
नहीं सुनाया अब तक तुमको, अब निज व्यथा सुनाऊँगा ॥
सुनकर मेरी व्यथा कथा को, है विश्वास पुकारोगे ।
अनंत दुख से व्याकुल मुझको, भव से पार लगाओगे ॥

मल्लिनाथ है नाम तुम्हारा, दयासिंधु कहलाते हो ।
श्रद्धा से जो भक्त पुकारे, उसके हृदय समाते हो ॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(अडिल्ल छंद)

ज्ञान कलश में शुद्ध नीर निर्मल लिया ।
मिथ्यामल धोने हेतु पद धार किया ॥
मल्लिनाथ जिनवर के दर्शन मैं करूँ ।
पूजन करके जन्म रोग को मैं हरूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

अनंत युग का प्यासा ज्ञान पिपासा है ।
शांति शाश्वत मुझे मिलेगी आशा है ॥
मल्लिनाथ जिनवर के दर्शन मैं करूँ ।
पूजन करके भवाताप को मैं हरूँ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

जन्म मरण की वेदना से रोता हूँ ।
कर्म बंध के भार को मैं ढोता हूँ ॥
मल्लिनाथ जिनवर के दर्शन मैं करूँ ।
पूजन करके अक्षय जिनपद को वरूँ ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

पंचेन्द्रिय की अभिलाषाएँ भटकाती ।
ब्रह्म रूप में लीन नहीं होने देती ॥

मल्लिनाथ जिनवर के दर्शन मैं करूँ ।
पूजन करके परम ब्रह्म पद में रमूँ ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।
पूर्ण शुद्ध चेतन चिन्मय चिद्रूप हूँ ।
फिर भी जड़ संबंध किया विद्रूप हूँ ॥
मल्लिनाथ जिनवर के दर्शन मैं करूँ ।
पूजन करके समता रस का पान करूँ ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।
दीप भू पर नभ में सूरज तारे हैं ।
अंधकार हरने बेवस बेचारे हैं ॥
मल्लिनाथ जिनवर के दर्शन मैं करूँ ।
पूजन करके ज्ञान दीप उर में धरूँ ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।
कर्म सदा मेरी बुद्धि को भ्रष्ट करें ।
धूप चढ़ाऊँ आज सारे कर्म जरें ॥
मल्लिनाथ जिनवर के दर्शन मैं करूँ ।
पूजन करके वसु कर्म को नष्ट करूँ ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं .... ।
इंद्रिय सुख के फल हेतु मैं व्याकुल हूँ ।
प्रभु दर्श पा, शिव फल पाने आकुल हूँ ॥
मल्लिनाथ जिनवर के दर्शन मैं करूँ ।
पूजन करके मोक्ष महापद मैं वरूँ ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं .... ।
अर्घ्य अर्पण कर निज गुण में लीन रहूँ ।
जिन समान ही शीघ्र नाथ अरिहंत बनूँ ॥

मल्लिनाथ जिनवर के दर्शन मैं करूँ ।
पूजन करके मुक्तिवधू को मैं वरूँ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(तर्ज - कर लो जिनवर का गुणगान....)

देव मनाये गर्भ कल्याण, आई शुभ की घड़ी।
आई शुभ की घड़ी, देखो मंगल घड़ी.......॥

अपराजित अनुत्तर छोड़ा, मिथिलापुर में आये ।
निद्रा में शुभ स्वप्न देख, माँ प्रभावती सुख पाये॥
सुरपति करें प्रभु गुणगान, चैत्र सुदी एकम है महान ।
कर लो जिनवर का गुणगान, आई शुभ की घड़ी...॥१॥
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लप्रतिपदायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीमल्लिनाथजिन्द्राय अर्घ्यं ....

मगसिर सुदी एकादशमी को कुंभराज गृह आये ।
जन्मोत्सव में मंगल उत्सव, गा अभिषेक कराये॥
देव मनाये जन्म कल्याण, ले गये पाण्डु शिला महान ।
कर लो जिनवर का गुणगान, आई जन्म की घड़ी...॥२॥
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय...

जन्मोत्सव के समय प्रभु ने, विद्युत अस्थिर देखा ।
जयंत पालकी में लेकर, सुर दल शालीवन पहुँचा॥
देव मनाये तप कल्याण, करने चले आत्म कल्याण ।
कर लो जिनवर का गुणगान, आई तप की घड़ी...॥३॥
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय....

अशोक तरु के नीचे प्रभु ने, केवलज्ञान उपाया ।
चार घाति कर्मों का क्षयकर, समवसरण ही भाया॥

देव मनाये ज्ञानकल्याण, प्रभु की ध्वनि खिरी है महान ।
कर लो जिनवर का गुणगान, आई ज्ञान की घड़ी...॥४॥
ॐ ह्रीं पौषकृष्णद्वितीयायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..

फाल्गुन शुक्ला पंचम को अपराह्न समय जब आया ।
सम्मेदाचल संबल कूट से, महा मोक्ष पद पाया॥
देव मनाये मोक्ष कल्याण, पहुँचे जिनवर मुक्तिधाम ।
कर लो जिनवर का गुणगान, आई मोक्ष की घड़ी...॥५॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लपंचम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं.

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय नमो नमः।'

जयमाला

दोहा–मल्लिनाथ जिनराज की, जग में कीर्ति विशाल ।
बाल ब्रह्मचारी प्रभो, नमन करूँ त्रय काल॥१॥

(चौपाई)

वंदन जिन श्री मल्लिनाथा, हम गाये तव गुण की गाथा ।
भेष दिगम्बर तुमने धारा, वीतराग को नमन हमारा॥२॥

प्रभु आप आतम रुचि जागी, बिन उपदेश नाथ वैरागी ।
विद्युत अस्थिर होते देखा, छोड़ दिया जग वैभव लेखा॥३॥

जय श्री मल्लिनाथ हमारे, लाखों भविजन तुमने तारे ।
जय-जय मुक्तिरमा पति देवा, सौ-सौ इंद्र करे तुम सेवा॥४॥

जय आनंद निधान जिनेशा, हरो अमंगल दोष अशेषा ।
बाल ब्रह्मचारी जिनराई, मुक्तिरमा से प्रीत लगाई॥५॥

कुमार वय में दीक्षा धारी, द्रव्य भाव हिंसा परिहारी ।
मोह मल्ल को नाश किया है, निज आतम को जान लिया है॥६॥

प्रभु सोलह कारण आराधे, तीर्थ प्रवर्तन सब सुख भासे ।
मास पूर्व ही योग निरोधा, योग रहित हो शिव को साधा ॥७॥

गणधर हुए अठाइस सारे, उन्हें त्रियोग से नमन हमारे ।
मैं संयम की पाऊँ नैया, शिवपथ के हो आप खिवैया ॥८॥

स्वानुभूति तरणी गंभीरा, आये मोक्षपुरी के तीरा ।
जिनवर काटे कर्म जंजीरा, चउ गतियों की नाशी पीरा ॥९॥

मैं भी ऐसा जीवन पाऊँ, निकट आपके शीश झुकाऊँ ।
जपूँ सदैव प्रभु दिन रैना, जागे मेरी पुण्य सुसेना ॥१०॥

महान जिन श्री मल्लिनाथा, नष्ट किया वसुविधि का खाता ।
जिनवर मुक्तिपुरी के वासी, उसी पंथ का मैं प्रत्याशी ॥११॥

प्रभुवर आत्म भवन में आये, अनंत सुख के उपवन पाये ।
मल्लिनाथ पद शीश नवाये, प्रभु समान जिन पद हम पायें ॥१२॥

दोहा

कलश चिह्न लख चरण में, इंद्र करें जयकार ।
संबल मल्लीनाथ दो, हो जाऊँ भव पार ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

हे मल्लि जिनेश्वर, मेरे ईश्वर, भव-भव का संताप हरो।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री मुनिसुव्रत जिन पूजन

स्थापना

(ज्ञानोदय छंद)

हे मुनिसुव्रत मेरे भगवन्, सिद्धालय के वासी हो ।
आह्वान करूँ आओ जिनवर, मम हृदय कमल विश्वासी हो ॥
भावों के पीले पुष्पों से, बुला रहा हूँ आ जाओ ।
कर्म शत्रु भी शांत हुए हैं, शीघ्र हृदय में बस जाओ ॥१॥

मैं हूँ भक्त आपका सच्चा, आप मेरे सच्चे भगवान ।
मेरी दुनिया छोटी सी है, रखना मेरा भगवन् ध्यान ॥
हृदयांगन में करूँ प्रतीक्षा, बोलो ना कब आओगे ।
आशा है विश्वास पूर्ण है, नाथ मेरे गृह आओगे ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

द्रव्यार्पण

(हरिगीतिका छंद)

जग में जनम लेकर अनंतों, बार मैं मरता रहा ।
जब आपका वैभव लखा तो, देखता ही मैं रहा ॥
हे नाथ मुनिसुव्रत हमारे, पूर्ण व्रत कर दीजिये ।
सब कष्ट बाधायें मिटा भव-सिंधु पार उतारिये ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

स्पर्शित किया चंदन बहुत पर, ताप मिट पाया नहीं ।
गंगाम्बु मुक्ताहार शीतल, काम कुछ आया नहीं ॥२॥ हे...

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

नश्वर सुखों की कामना में, शिवभवन ना पा सका।
पर भाव में अटका रुला हूँ, आत्म पद ना पा सका ॥३॥ हे...
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।
यह चाह विषयों की मिटा दो, पुष्प अर्पण है प्रभो।
दुष्कर्म का नेता यही है, काम को नाशो प्रभो ॥४॥ हे...
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।
चिरकाल से जड़ वस्तुओं में, स्वाद आया है प्रभो।
निजज्ञान रस का स्वाद अब तक, जान ना पाया प्रभो ॥५॥ हे...
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।
दीपक शिखा से तम मिटेगा, भ्रम रहा मेरा प्रभो।
तमहारिणी वो ज्ञान छैनी, दूर तम करती विभो ॥६॥ हे...
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।
प्रभु आपके ही ज्ञान घट में, ध्यान धूप सुगंध हैं।
मम पास धूप, सुगंध बिन है, गंध आप अनूप हैं ॥७॥ हे...
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।
चिर काल से इंद्रिय सुखों के, फल रहा मैं चाहता।
प्रभु दर्श जो मैंने किया निज, आत्म सुख फल चाहता ॥८॥ हे...
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।
निज आत्म वैभव का अतिशय, नाथ बतला दीजिये।
मम अर्घ को स्वीकार लो प्रभु, ज्ञानधार बहाइये ॥९॥ हे...
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(सखी छंद)

प्रभु आनत दिवि से आये, औ राजगृहि में आये।
कृष्णा श्रावण द्वितीया दिन, माँ पद्मा उर आये जिन ॥

छप्पन कुमारियाँ आई, अंतःपुर बजे बधाई ।
माँ स्वप्न देख हर्षायें, नृपराज सुमित्र सुनायें ॥१॥
ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय..
वैशाख वदी तिथि आई, बारस जन्मे जिनराई ।
अभिषेक किया मेरू पर, बस अर्ध निमिष में जाकर ॥
जो जन्म मरण से डरते, वे प्रभु की पूजा करते ।
मैं जामन मरण मिटाऊँ, जन्मोत्सव आज मनाऊँ ॥२॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय ...
वैशाख वदी दशमी थी, प्रभु जाति स्मृति हुई थी ।
जब केशलोंच कर लीना, सुर क्षीरोदधि में दीना ॥
तेला कर दीक्षा धारी, थे संग सहस मुनिराई ।
इंद्राणी चौक बनाया, दीक्षा कल्याण मनाया ॥३॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय ...
जब प्रभु रहे छद्मस्था, तब मौन रहे भगवंता ।
वैशाख वदी तिथि नवमी, हो गये पूर्ण प्रभु ज्ञानी ॥
चरणों में कमल रचे हैं, जब प्रभु विहार करें हैं ।
गुणथान सयोगी पाया, ज्ञानोत्सव देव मनाया ॥४॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय ....
फाल्गुन कृष्णा बारस को, प्रभु पाये सिद्धालय को ।
ज्यों है कपूर उड़ जाता, त्यों प्रभु तन भी उड़ जाता ॥
प्रभु सम्मेदाचल आये, निज आतम ध्यान लगाये ।
हम भी शुभ अर्घ्य चढ़ायें, औ मुक्तिरमा को पायें ॥५॥
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णद्वादश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय..

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा –सूरज से नीरज खिले, और स्वाति से सीप ।
भव्य कमल तुम से खिले, आओ हृदय समीप ॥१॥

(ज्ञानोदय छंद)

जय-जय मुनिसुव्रत तीर्थंकर, भक्ति सुमन चढ़ाता हूँ ।
है विशाल तव यशगाथा मैं, पूर्ण नहीं कह सकता हूँ ॥
शरण आपकी जो आता है, कर्मों का ग्रह मिट जाता ।
जन्म मरण के दुःखों से वह, पल में छुटकारा पाता ॥२॥

प्रभु स्वयं में आप विराजे, जान रहे हो सभी जहान ।
भव्य जनों के कष्ट मिटाते, सदा प्रभु जी आप महान ॥
गर्भ जन्म तप ज्ञान हुए हैं, राजगृही में शुभ कल्याण ।
ऊर्ध्व मध्य पाताल लोक में, गूँजा प्रभु का यश-जयगान ॥३॥

रत्नत्रय आभूषण पहने, जड़ आभूषण का क्या काम ।
दोष अठारा रहित हुए है, वस्त्र शस्त्र का लेश न नाम ॥
तीन लोक के स्वयं मुकुट हो, स्वर्ण मुकुट का क्या है काम ।
नाथ त्रिलोकी कहलाते हो, फिर भी रहते हो निज धाम ॥४॥

भक्त निहारे प्रभु आपको, आप निहारे अपनी ओर ।
आप हुए निर्मोही स्वामी, अनंत गुण का कहीं न छोर ॥
धन्य आपकी वीतरागता, नहीं भक्त को कुछ देते ।
फिर भी भक्त शरण में आकर, सब कुछ तुमसे पा लेते ॥५॥

प्रभु आपके वचन श्रवण कर, आत्म ज्ञान को पाते हैं ।
रत्नत्रय धारण कर साधक, शिव पथ में लग जाते हैं ॥
चक्री इंद्रादिक के वैभव, पुण्य सातिशय से मिलते ।
नहीं चाहते किंतु पुण्य को, ज्ञानी निज में ही रहते ॥६॥

काल अनंता बीत गया है, मोह शनीचर सता रहा ।
लाखों को प्रभु पार किया है, भक्त हृदय यह बता रहा ॥
नाथ आपकी महिमा को मैं, अल्पबुद्धि कैसे गाऊँ ।
यही भावना भाता हूँ निज का, निज में दर्शन पाऊँ ॥७॥

दोहा—प्रभो भक्त मैं आपका, दुख से हूँ संयुक्त ।
एक नजर कर दो प्रभो, होऊँ दुख से मुक्त ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

मुनिसुव्रत स्वामी, हो जगनामी, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री नमिनाथ जिन पूजन

स्थापना (नरेन्द्र छन्द)

नमिनाथ प्रभु नमन करूँ मैं, मन मेरा हर्षाया ।
चरण कमल की पूजन करने, भाव हृदय में आया ॥
चरण पखारूँ भक्ति भाव से, भव्य भावना भाऊँ ।
दृढ़ वैराग्य जगा अंतर में, सिद्धालय में जाऊँ ॥१॥
जिन भक्ती से प्रेरित होकर, नाथ शरण में आया ।
मेरे जिनवर तुमको निज गृह, आज बुलाने आया ॥
श्रद्धा गुण युत मम मंदिर में, शाश्वत नाथ समाना ।
निकट रहूँगा सदा आपके, नमिनाथ प्रभु आना ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधि-करणम् ।

द्रव्यार्पण

(ज्ञानोदय छंद)

आतम कर्मों से मलीन है इसको धोने आया हूँ ।
प्रभो ! आपकी वाणी को श्रद्धा से पीने आया हूँ॥
सुधा नीर लेकर आया प्रभु जन्म जरा मृत नाश करो ।
नमिनाथ प्रभु दर्शन देकर, ज्ञान वेदी पर वास करो॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

जड़ द्रव्यों की चिंता में ही जीवन चिता बनाई है ।
शीत द्रव्य का लेप किया पर शांति आप में पाई है॥
बावन चंदन ले आया हूँ भवाताप प्रभु नाश करो ।
नमिनाथ प्रभु दर्शन देकर, ज्ञान वेदी पर वास करो॥२॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं ....।

आयु पल-पल घटती रहती मृत्यु से भय भारी है ।
अक्षयपुर का वासी होकर नश्वर का अभिलाषी है॥
अतः आज भावों से अक्षत लाया हूँ भव नाश करो ।
नमिनाथ प्रभु दर्शन देकर, ज्ञान वेदी पर वास करो॥३॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

निज स्वभाव की गंध मिली ना, पुष्प सुगंधी लाये हैं ।
तन के सुंदर आकर्षण में नरकों के दुख पाये हैं॥
नाथ मुझे निष्काम बना दो कामबाण का नाश करो ।
नमिनाथ प्रभु दर्शन देकर, ज्ञान वेदी पर वास करो॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ....।

रसना की लोलुपता में ही शुद्धि का ना ध्यान रखा ।
स्वातम रस का स्वाद लिया ना व्रत संयम से दूर रहा॥

निराहार जिन आप स्वभावी क्षुधा रोग मम नाश करो ।
नमिनाथ प्रभु दर्शन देकर, ज्ञान वेदी पर वास करो ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ....।

पर के दोष दिखे हैं लेकिन निज के दोष न दिख पाये ।
अंतर में है घना अँधेरा सत्य स्वरूप न दिख पाये ॥
ज्ञान दीप प्रगटाओ स्वामी, मिथ्यातम का नाश करो ।
नमिनाथ प्रभु दर्शन देकर, ज्ञान वेदी पर वास करो ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं ....।

ये कर्म बहुत दुख देते हैं कर्मों को दोष दिया करता ।
स्वयं नहीं पुरुषार्थ जगाया भाव शुद्ध भी ना करता ॥
धूप समर्पित करता हूँ अब, दुर्भावों का नाश करो ।
नमिनाथ प्रभु दर्शन देकर, ज्ञान वेदी पर वास करो ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ....।

भाव शुभाशुभ जब करता हूँ पुण्य-पाप फल पाता हूँ ।
कर्म उदय में जब आते हैं व्याकुल हो फल सहता हूँ ॥
मोक्ष निवासी जिनवर मेरे, कर्म फलों का नाश करो ।
नमिनाथ प्रभु दर्शन देकर, ज्ञान वेदी पर वास करो ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ....।

सारे पद जग के झूठे हैं शाश्वत ना मिट जाते हैं ।
शिवपद ही मन को भाया प्रभु तुम सा कहीं न पाते हैं ॥
मद का काम नहीं शिवपथ में मम मद पूर्ण विनाश करो ।
नमिनाथ प्रभु दर्शन देकर, ज्ञान वेदी पर वास करो ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ....।

पंचकल्याणक

(ज्ञानोदय छंद)

विजयराज फल स्वप्न कहे, अपराजित तजकर प्रभु आये ।
आश्विन कृष्णा द्वितीया के दिन, माता वप्रा उर आये ॥
मिथिलापुर नगरी में प्रतिदिन, नूतन मंगल गान करें ।
धन्य गर्भ कल्याण देवियाँ, मना-मनाकर नृत्य करें ॥१॥

ॐ ह्रीं आश्विनकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय ..

आषाढ़ वदी दशमी तिथि को जिनबाल धरा पर जन्म लिये ।
चार प्रकार सुरों के गृह में वाद्य बजे, घट नीर लिये ॥
माया पुत्र रचा इंद्राणी, माँ की गोद सुला आई ।
बाल प्रभु को निरख-निरख कर, पाण्डु शिला पर ले आई ॥२॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णदशम्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...

जन्म दिवस के दिन प्रभुवर को, जाति स्मरण हुआ शुभ ज्ञान ।
उत्तर कुरु पालकी बैठे, अंतर में निज आत्म विमान ॥
द्वादश भावन भाई प्रभु ने, किया चैत्रवन में निज ध्यान ।
एक सहस नृप ने दीक्षा ली, जय-जय जय दीक्षा कल्याण ॥३॥

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....

मगसिर सुदी एकादशमी को, कर्म घातिया नाश किया ।
समवसरण में भव्यों के हित, प्रभुवर ने उपदेश दिया ॥
मैंने भी सत्पथ पहिचाना, आतम का उद्धार किया ।
परम ज्ञान कल्याण महोत्सव, आरति करके नमन किया ॥४॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

वैशाख वदी चौदस को धारा, प्रभु ने प्रतिमा योग महान ।
अंतिम शुक्लध्यान के द्वारा, पद पाया अनुपम निर्वाण ॥

कूट मित्रधर से जिनवर ने, मुक्तिरमा से मैत्री की ।
इसीलिए सम्मेदाचल में, भव्य जनों ने यात्रा की ॥५॥
ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा – वंदनीय प्रभु आप हैं, नमिनाथ मुनीनाथ ।
गुण मुक्ता जयमाल है, आत्मसिद्धि के काज ॥१॥

(चाल - शेर)

जय-जय श्री नमिनाथ आप देव हैं महान ।
त्रय ज्ञान धार जन्म लिया है दया निधान ॥
इक्कीसवें तीर्थेश प्रभु आपको नमन ।
मुझको भी करो पार प्रभु नाशिये करम ॥२॥
जाति स्मरण हुआ प्रभु वैराग्य हो गया ।
तन से ममत्व छोड़ केशलोंच भी किया ॥
श्री दत्तराज नृप ने आहार दे दिया ।
पय धार देके पाप का संहार कर लिया ॥३॥
प्रभु शिष्य न धरे न चतुर्मास ही करे ।
छद्मस्थ दशा मौन में विहार जो करें ॥
जब घातिया को घात प्रभु केवली हुये ।
नव लब्धियों को पाय ज्ञान के रवि हुये ॥४॥
धरती पे ना चले अधर में ही गमन किया ।
प्रभु भव्य के उद्धार को विहार है किया ॥
प्रभु आपके सर्वांग से जो देशना खिरी ।
गणधर कृपा हुई हमें जिनवाणी है मिली ॥५॥

आतम स्वरूप शुद्ध है निश्चय स्वरूप से ।
वसु कर्म मल मलीन है व्यवहार रूप से॥
प्रभु आपने ही वस्तु तत्त्व ज्ञान कराया ।
प्रभु आपने ही मोक्ष का ये पंथ बताया॥६॥
प्रभु सर्व कर्म नाश मुक्तिधाम पा लिया ।
इंद्र ने भी हर्ष से उत्सव मना लिया॥
अग्नि कुमार देव ने संस्कार रचाया ।
भक्ति से भस्म को तभी मस्तक पे लगाया॥७॥
प्रभु नील कमल चिह्नित है चरण आपके ।
मैं कर्म मल को धो सकूँ तव दर्श को पाके॥
नमिनाथ तीर्थनाथ की मैं वंदना करूँ ।
शीघ्र मोक्ष को वरूँ मैं बंध ना करूँ॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

श्री नमि जिन स्वामी, हो जगनामी, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

श्री नेमिनाथ जिन पूजन

स्थापना

(नरेन्द्र छंद)

आयेंगे प्रभु नेमिनाथ जी, ऐसा मन यह कहता ।
देव दुंदुभी बजा रहे हैं, ऐसा मुझको लगता॥
मंद सुगंध बयारें चलती, यह संदेशा देती ।
गगन मार्ग से प्रभो आ रहे, श्रद्धा इंगित करती॥१॥

मन मंदिर में दीप जलाया, प्रभु आपके स्वागत में ।
पलक पावड़े बिछा रखे हैं, प्रभु आपके आने में॥
नेमिनाथ जिन आप ज्ञान में, नहीं किसी को लाते ।
किंतु भक्ति वश भक्तों के मन, प्रभुवर आप समाते॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

द्रव्यार्पण

(नरेन्द्र छंद)

जन्म मरण से पीड़ित होकर, निज आतम तड़पाया ।
तत्त्व ज्ञान से प्यास बुझाने, नाथ शरण में आया॥
नेमिनाथ तीर्थंकर स्वामी, चेतन गृह में आना ।
जन्म जरा मृत्यु से स्वामी, मुझको आज छुड़ाना॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

अहंकार से दग्ध हुआ हूँ , अंतर में ही जलता ।
कृपा दृष्टि जब हुई प्रभु की, उसी कृपा पर पलता॥
नेमिनाथ तीर्थंकर स्वामी, चेतन गृह में आना ।
भवाताप में झुलस रहा हूँ, मुझको आन बचाना॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं ....।

उज्ज्वल धवल भवन के वासी, धवल आपका जीवन ।
नश्वर से संबंध नहीं प्रभु, रहते हो निज उपवन॥
नेमिनाथ तीर्थंकर स्वामी, चेतन गृह में आना ।
अक्षय पद का पथ नहीं जाना, मुझको नाथ बताना॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ....।

भक्ति भाव के पुष्प मनोहर, श्री चरणों में अर्पित ।
इंद्रिय मन की विषय वासना, प्रभुवर आज विसर्जित ॥
नेमिनाथ तीर्थंकर स्वामी, चेतन गृह में आना ।
संयम से सुरभित हो जीवन, निज का दर्श दिखाना ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।
क्षुधा रोग को दूर करो प्रभु, यही हृदय को भाया ।
करुणा सागर सरल स्वभावी, वैद्य समझकर आया ॥
नेमिनाथ तीर्थंकर स्वामी, चेतन गृह में आना ।
समता रस का पान कराकर, क्षुधा व्याधि को हरना ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।
प्रभु भक्ति से भेदज्ञान का, अंतर दीप जलाऊँ ।
निज को निज, पर को पर जानूँ, ज्ञान कला प्रगटाऊँ ॥
नेमिनाथ तीर्थंकर स्वामी, चेतन गृह में आना ।
ज्ञानमहल में घना अँधेरा, केवल ज्योति जगाना ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।
मोह बली के कारण जग में, छाया घोर अँधेरा ।
किंतु आपने मोह बली को, निज शक्ति से घेरा ॥
नेमिनाथ तीर्थंकर स्वामी, चेतन गृह में आना ।
कर्मों की आँधी से स्वामी, मुझको आप बचाना ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं .... ।
प्रभु आपकी भक्ति तरु पर, शाश्वत शिवफल फलता ।
पंच परावर्तन मिटता है, स्वतंत्रता को पाता ॥
नेमिनाथ तीर्थंकर स्वामी, चेतन गृह में आना ।
कर्म फलों का सर्व नाशकर, जीवन सफल बनाना ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं .... ।

कर्म शक्ति को क्षय करने प्रभु, चरण शरण में आया ।
ध्रुव अनर्घ पद पाने का अब, अपूर्व अवसर आया ॥
नेमिनाथ तीर्थंकर स्वामी, चेतन गृह में आना ।
एक अकेला भटक रहा हूँ, शिवपथ मुझे दिखाना ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं .... ।

पंचकल्याणक

(तर्ज - भक्ति बेकरार है, आनंद अपार है ....)

खुशियाँ अपरंपार हैं, आनंद अपार है ।
देखो आज शौरीपुर में हो रही जय-जयकार है ॥
कार्तिक शुक्ला षष्ठी के दिन, शिवादेवी उर आये जी ।
अपराजित विमान से आये, सुर नर मंगल गाये जी ॥
जग का तारण हार है, गर्भ कल्याणक सार है ।
देखो आज शौरीपुर में हो रही जय -जयकार है ॥१॥
ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...
श्रावण शुक्ला षष्ठी के दिन, शौरीपुर में जनमे जी ।
समुद्र विजय नृप के आँगन में, देव नृत्य कर हरषे जी ॥
जन्म कल्याणक सार है, अभिषेक की धार है ।
देखो आज पांडु शिला पे हो रही जय-जयकार है ॥२॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...
पशु बंधन को देख प्रभु जी, करुणा उर में आई जी ।
राजमति तज वन में जाकर, जिन दीक्षा को पाई जी ॥
तप कल्याणक सार है, दीक्षा से भवपार है ।
देखो सहस्र आम्र वन में, हो रही जय-जयकार है ॥
यह तिथि महा सुखकार है, मेरा भी उद्धार है ।
देखो सहस्र आम्र वन में हो रही जय-जयकार है ॥३॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....

आश्विन शुक्ला एकम को, प्रभु केवलज्ञान उपाया जी ।
ऊर्जयंत पर समवसरण में, दर्शन कर सुख पाया जी ॥
ज्ञान कल्याणक सार है, शिवनगरी का द्वार हैं ।
देखो प्रभु के समवसरण में हो रही जय-जयकार हैं ॥४॥

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लप्रतिपदायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय ..

आषाढ़ सुदी सप्तम को स्वामी, वसु विध कर्म नशाया जी ।
श्री गिरनार उच्च पर्वत से, मोक्ष महा पद पाया जी ॥
मोक्ष कल्याणक सार है, सर्व कर्म की हार है ।
देखो श्री गिरनार गिरि पर देव करें जयकार हैं ॥५॥

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..

-:: जाप्य ::-

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

(त्रिभंगी छंद)

त्रिभुवन के नायक, आतम ज्ञायक, प्रभु चिंतन में खो जाऊँ ।
अर्घ्यों से वंदन, नाशूँ बंधन, मोक्षपुरी में बस जाऊँ ॥१॥
हम शीश नवाये, प्रभु गुण गाये, हे नेमीश्वर विपद हरो ।
शुभ आश लगाये, आनंद पाये, हमको निज पद माहिं धरो ॥२॥

(ज्ञानोदय छंद)

जय जय नेमिनाथ तीर्थंकर, बालब्रह्मचारी भगवान ।
हे तीर्थेश परम उपकारी, करुणासागर दया निधान ॥३॥
नृप समुद्र के सुत हो प्यारे, शिवा देवी माँ के नंदन ।
शौरीपुर में आनंद छाया, धरा हो गई ज्यों चंदन ॥४॥
बचपन से ही प्रभु आपने, अणुव्रत सा आचरण किया ।
बाल क्रियायें देख देखकर, यादव कुल में हर्ष हुआ ॥५॥

नारायण श्री कृष्ण देव ने, प्रभु का नाता जोड़ दिया ।
राजुल से परिणय करने को, जूनागढ़ रथ मोड़ दिया ॥६॥
जीवों की सुन करुण पुकारें, प्रभु के उर वैराग्य हुआ ।
पशु बंधन को मुक्त किया कंगन तोड़ा निज भान हुआ ॥७॥
राजुल ने तब देख लिया स्वामी ने रथ क्यों मोड़ लिया ।
मुझसे आतम प्रीत तोड़ मुक्ति से नाता जोड़ लिया ॥८॥
धिक् धिक् है संसार यहाँ औ, विषयभोग को है धिक्कार ।
इंद्रिय सुख की ज्वाला में ही, धू धू कर जलता संसार ॥९॥
जग की नश्वरता का प्रभु ने, किया चिंतवन बारंबार ।
वस्त्राभूषण त्याग दिये औ, दूर किये है सभी विकार ॥१०॥
मोह शत्रु को नाश किया औ, पहुँच गये स्वामी गिरनार ।
भवसागर के आप किनारे, भवि जीवों के हैं आधार ॥११॥
इंद्रिय सुख के कारण मैंने, नाथ आज तक पूजा की ।
आत्म स्वरूप लखा नहीं मैंने, भव सागर की वृद्धि की ॥१२॥
माना आप नहीं पर कर्ता, आत्म तत्त्व के ज्ञाता हो ।
भक्तों को कुछ ना देते निज सम भगवान बनाते हो ॥१३॥
सर्वदर्शी हैं आप किंतु नहीं तुमको देख सके कोई ।
ज्ञाता हो हम सब ही के नहीं जान सके तुमको कोई ॥१४॥
वंदनीय है स्वयं आप पर को नहीं वंदन करें मुनीश ।
ऐसे त्रिभुवन तीर्थनाथ को कर प्रणाम धरकर पद शीश ॥१५॥

दोहा – मंगल उत्तम शरण हैं, नेमिनाथ भगवान ।
भाव 'पूर्ण' प्रभु भक्ति से, होता दुख अवसान ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

श्री नेमि जिनेश्वर, दया अधीश्वर, भव-भव का संताप हरो।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री पार्श्वनाथ जिन पूजन

स्थापना

(नरेन्द्र छंद)

हे पार्श्वनाथ आनंदधाम प्रभु, आज वंदना करते।
बाल ब्रह्मचारी जगतारी, नाथ अर्चना करते॥
तीन लोक में ढोल बजाकर, देव दुंदुभी गाते।
मोही जन को जगा जगाकर, शुभ संदेशा लाते॥

आज मेरे उर आँगन में प्रभु, उत्सव जैसा लगता।
त्रिभुवन के स्वामी आयेंगे, निश्चित ही मन कहता॥
इसीलिए सम्यक् रत्नों के, मैंने चौक पुराये।
श्रद्धा गृह के प्रमुख द्वार पर, तोरण हार सजाये॥

प्रभु प्रतीक्षा में रत्नों के, जगमग दीप जलाये।
पद प्रक्षालन हेतु स्वर्ण के, थाल यहाँ ले आये॥

दोहा –आओ पारसनाथ जी, आओ आओ नाथ।
हृदयांगन सूना पड़ा, द्वार खड़ा नत माथ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

द्रव्यार्पण

(गीता छंद)

क्षीरोदधि सम क्षीर जल मैं, ला नहीं सकता प्रभो ।
हे क्षीरसागर नाथ तुम हो, क्षारसागर मैं प्रभो ॥
श्री पार्श्वनाथ जिनेश मेरे, जन्म रोग नशाइये ।
आवागमन से हूँ व्यथित, उद्धार मेरा कीजिये ॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

भवताप से मैं जल रहा हूँ, और जलता जा रहा ।
क्या हो गया मुझको स्वयं को, और छलता जा रहा ॥
श्री पार्श्वनाथ जिनेश मेरे, भवाताप नशाइये ।
आवागमन से हूँ व्यथित, उद्धार मेरा कीजिये ॥२॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।

सब नाशवान पदार्थ को मैं, स्थिर बनाना चाहता ।
शाश्वत अनूपम तत्त्व हूँ मैं, शब्द से ही जानता ॥
श्री पार्श्वनाथ जिनेश मेरे, दान अक्षय दीजिये ।
आवागमन से हूँ व्यथित, उद्धार मेरा कीजिये ॥३॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।

भोगे अनेकों भोग फिर भी, चाह यह जाती नहीं ।
यह वासना की आग जिनवर, अब सही जाती नहीं ॥
श्री पार्श्वनाथ जिनेश मेरे, ब्रह्म पदवी दीजिये ।
आवागमन से हूँ व्यथित, उद्धार मेरा कीजिये ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।

बीता अनंता काल फिर भी, कर्म धारा बह रही ।
औ ज्ञान धारा को प्रभूवर, जानता ही मैं नहीं ॥

श्री पार्श्वनाथ जिनेश मेरे, ज्ञान धार बहाइये ।
आवागमन से हूँ व्यथित, उद्धार मेरा कीजिये ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।
दीपक जले सूरज उगे पर, मोह तम मिटता नहीं ।
बाहर उजाला तेज भीतर में उजाला है नहीं ॥
श्री पार्श्वनाथ जिनेश मुझमें, ज्ञान दीप जलाइये ।
आवागमन से हूँ व्यथित, उद्धार मेरा कीजिये ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।
भव राग से रागी हुआ मैं, द्वेष से द्वेषी हुआ ।
पर आप सा सान्निध्य पाकर, क्यों नहीं ज्ञानी हुआ ॥
श्री पार्श्वनाथ जिनेश मेरे, अष्ट कर्म निवारिये ।
आवागमन से हूँ व्यथित, उद्धार मेरा कीजिये ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं .... ।
प्रभु बीज कर्मों का जला दो, उग नहीं सकता कभी ।
मेरा मिलन मुझसे करा दो, फिर न आना हो कभी ॥
श्री पार्श्वनाथ जिनेश मुझको, मिष्ट शिवफल दीजिये ।
आवागमन से हूँ व्यथित, उद्धार मेरा कीजिये ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं .... ।
निज आत्म वैभव खो चुका हूँ, क्या चढ़ाऊँ अर्घ्य मैं ।
प्रभु आपका ही हो चुका हूँ, आ गया हूँ शर्ण में ॥
श्री पार्श्वनाथ जिनेश मुझको, लीजिए अपनाइये ।
आवागमन से हूँ व्यथित, उद्धार मेरा कीजिये ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं .... ।

पंचकल्याणक

(सखी छंद)

वैशाख कृष्ण दिन पावन, द्वितीया तिथि है मन भावन ।
गर्भस्थ बाल जिन आभा, से हुई नगर में शोभा ॥
पितु अश्वसेन हर्षित हैं, सारा परिवार मुदित है ।
प्रभु प्राणत स्वर्ग विहाये, छप्पन देवी गुण गाये ॥१॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

वदी पौष ग्यारसी आई, शुभ जन्म लिया जिनराई ।
ऐरावत गज ले आये, निज गोद इंद्र बैठाये ॥
प्रभु बनकर आये सूरज, जग तरसे पाने पद रज ।
वाराणसी नगरी प्यारी, प्रभु जन-जन के मनहारी ॥२॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं .. ।

जन्मोत्सव खुशियाँ छाई, तब जाति स्मृति हो आई ।
वैराग्य सहज मन भाया, लौकांतिक ने गुण गाया ॥
विमलाभ पालकी चढ़के, अश्वत्थ वनी सुर पहुँचे ।
जिन दीक्षा है सुखकारी, भवि जीवों को हितकारी ॥३॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं .. ।

जब कमठ क्रोध बरसाये, प्रभु समता नीर बहाये ।
सब विनश गई शठ माया, कर जोड़ शरण वह आया ॥
प्रभु तन मन हुआ नगन है, शिव-वधु की लगी लगन है ।
वदी चैत्र चतुर्थी आई, प्रभु ज्ञान ज्योति प्रगटाई ॥४॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं .... ।

श्रावण शुक्ला दिन आया, शुभ मुकुट सप्तमी भाया ।
स्वर्णभद्र कूट प्रभु आये, अष्टम वसुधा को पाये ॥

छत्तीस संग मुनिराया, शिव गये सिद्ध पद पाया ।
बोलो पार्श्व प्रभु की जय-जय,सम्मेदशिखर की जय-जय ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं
जाप्य
'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा—कामधेनु चिंतामणी, हे पारस भगवान ।
कल्पवृक्ष से भी अधिक, पारसनाथ महान ॥१॥
पार्श्वनाथ वंदूँ सदा, चिदानंद छलकाय ।
चरण शरण हूँ आपकी, सहज मुक्ति प्रगटाय ॥२॥
(ज्ञानोदय छंद)
परम श्रेष्ठ पावन परमेष्ठी, पार्श्वनाथ को वंदन है ।
माता वामा देवी के सुत, अश्वसेन के नंदन हैं॥
कर्मजयी हो कामजयी उपसर्ग-विजेता कहलाये ।
परम पूज्य परमेश्वर हो शिवमार्ग विधाता बन आये ॥३॥
नगर बनारस है अति सुंदर, अश्वसेन नृप परम उदार ।
तीर्थंकर बालक को पाकर, भू पर छाया हर्ष अपार ॥
देव कल्याणक मना रहे पर, निज में आप समाये थे ।
भोगों को स्वीकार किया ना, कामबली भी हारे थे ॥४॥
अल्प आयु में पंच महाव्रत, धरे स्वयंभू दीक्षा ली ।
चार मास छद्मस्थ मौन रह, आतम निधि को प्रगटा ली ॥
तभी कमठ ने पूर्व वैर वश, पूर्व भवों का स्मरण किया ।
आँधी तूफाँ झंझाओं से, प्रभो आपको कष्ट दिया ॥५॥
घोर उपद्रव जल अग्नि से, महा विघ्न करने आया ।
जल से भर आई धरती पर, किञ्चित् नहीं डिगा पाया ॥

आत्म गुफा में लीन रहे प्रभु, तन उपसर्ग सहे भारी ।
इसीलिए भू पर गूँजी जय, पारस प्रभु अतिशयकारी ॥६॥
वैर किया नौ भव तक भारी, आखिर माया विनश गयी ।
ध्यान सूर्य की किरणों से शठ, कमठ अमा भी हार गयी ॥
प्रभो आपने तन चेतन का, भेद ज्ञान जो पाया हैं ।
इसीलिए शठ की माया को, पल भर में विनशाया हैं ॥७॥
पूर्व जन्म के उपकारी को, कृतज्ञ होकर जान लिया ।
पद्मावती और धरण इंद्र ने, आ विघ्नों को दूर किया ॥
साम्य भाव धर प्रभू आपने, कर्मों पर जय पाई है ।
इसीलिए श्री पार्श्व प्रभू की, अतिशय महिमा गाई है ॥८॥
क्रोध अग्नि में जलते हैं जो, भव-भव में दुख पाते हैं ।
वैर निरंतर जो रखते हैं, निज को ही तड़फाते हैं ॥
भेद ज्ञान कर निज आतम के, आश्रय में जो आते हैं ।
सर्व कर्म का क्षय करके वे, शिवरमणी को पाते हैं ॥९॥
हे जिनवर उपदेश आपका, श्रवण करूँ आचरण करूँ ।
क्षमा भाव की महा शक्ति से क्रोध शत्रु को नष्ट करूँ ॥
मार्ग आपने जो बतलाया, मेरे मन को भाया है ।
मुझको भी भव से पार करो, यह भक्त शरण में आया है ॥१०॥
श्री सम्मेदाचल से स्वामी, मोक्ष महापद है पाया ।
चरण चिह्न का दर्शन करके, शिवपद पाने मैं आया ॥
पार्श्व तीर्थकर सर्व प्रियंकर, श्री चरणों में सिर नाया ।
दिव्य शक्ति को संचित करने, आप शरण में हूँ आया ॥११॥

दोहा—परं ज्योति परमातमा, पार्श्वनाथ जिनराज ।
वंदौ परमानंद मय, आत्मशुद्धि के काज ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं .... ।

घत्ता

जय-जय तीर्थंकर, पार्श्व जिनेश्वर, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री महावीर जिन पूजन

स्थापना (नरेन्द्र छन्द)

महावीर प्रभु दर्श दिखाना, दर्शन करने आया ।
हृदय विराजो अतिवीर प्रभो, पूजन करने आया ॥
चरण शरण में अरजी लाया, निज सम मुझे बनाना ।
प्रभु कृपा कर कष्ट मिटाकर, सारे बंध छुड़ाना ॥१॥
शक्ति नहीं है मुझमें भगवन्, अनंत शक्ती देना ।
तव गुणगण को जान सकूँ प्रभु, इतनी भक्ती देना ॥
कर्म शत्रु के नाश हेतु प्रभु, नाम आपका ध्याऊँ ।
ज्ञान वेदी पर वीर प्रभु को, सविनय आज बिठाऊँ ॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

द्रव्यार्पण

(तर्ज - माता तू दया करके ....)

श्रद्धा की वापी से, भक्ति जल भर लाया ।
समकित कलशा लेकर, प्रभु चरण शरण आया ॥
आनंद रस छलका दो, जग दाह मिटे स्वामी ।
प्रभु वीर दरश देना, शरणा दो अभिरामी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं .... ।

चंदन से अति शीतल, प्रभु की पद रज धूलि ।
नहीं चरणन स्पर्श किये, यह भारी भूल हुई ॥
प्रभु शांति जल देना, भवताप मिटे स्वामी ।
प्रभु वीर दरश देना, शरणा दो अभिरामी ॥२॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं .... ।
क्षणभंगुर वैभव है, भव का वर्द्धन करता ।
मैं राग किया करता, प्रतिपल उलझा रहता ॥
प्रभु अक्ष अगोचर हो, अक्षय पद दो स्वामी ।
प्रभु वीर दरश देना, शरणा दो अभिरामी ॥३॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् .... ।
जब मानसरोवर में, शत दल सुरभित होता ।
रस में फँसकर मधुकर, निज प्राण गँवा देता ॥
प्रभु पद पंकज अलि बन, गुण गान करूँ स्वामी ।
प्रभु वीर दरश देना, शरणा दो अभिरामी ॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं .... ।
इस कर्म असाता ने, चिरकाल सताया है ।
जितना उपचार किया, तृष्णा को बढ़ाया है ॥
निज दोष समझ आया, यह व्याधि हरो स्वामी ।
प्रभु वीर दरश देना, शरणा दो अभिरामी ॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं .... ।
मेरे चेतन गृह में, घनघोर अँधेरा है ।
नहीं सूझ रहा आतम, मिथ्यातम घेरा है ॥
रत्नत्रय दीप जला, निज ज्ञान जगे स्वामी ।
प्रभु वीर दरश देना, शरणा दो अभिरामी ॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं .... ।

उपयोग भटकता है, कैसे निज में लाऊँ ।
औरों को समझाऊँ, पर खुद न समझ पाऊँ ॥
प्रभु ध्यान धूप पाकर, सब कर्म नशें स्वामी ।
प्रभु वीर दरश देना, शरणा दो अभिरामी ॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं .... ।

कर्मों के फल खाकर, बेहोश हुआ जग में ।
जब से प्रभु दर्श किया, निज दर्श हुआ निज में ॥
चऊ गति के भ्रमण मिटा, शिव फल पाऊँ स्वामी ।
प्रभु वीर दरश देना, शरणा दो अभिरामी ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं .... ।

पर को देखा मैंने, निज को ही ना परखा ।
अब सुख अनंत पाने, संबंध तजूँ पर का ॥
ज्ञायक पद पा जाऊँ, हो शक्ति प्रगट स्वामी ।
प्रभु वीर दरश देना, शरणा दो अभिरामी ॥९॥
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं .... ।

पंचकल्याणक

(तर्ज - बाजे कुंडलपुर में बधाई ....)

आषाढ़ सुदी छठ आई, कि स्वर्ग से जिन आये महावीर जी ।
माँ प्रियकारिणी हर्षाई, कि गर्भ में प्रभु आये महावीर जी ॥
हैं चौबीसवें तीर्थंकर, कि सुर नर गुण गाये महावीर जी ।
माँ ने सोलह सपने देखे, कि त्रिभुवन के नाथ पाये महावीर जी ॥
बाजे कुंडलपुर में बधाई, कि गर्भ में वीर आये महावीर ॥१॥
ॐ ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....

धन्य घड़ी जन्म की आई, कि ज्ञान धन बरसाये महावीर जी ।
तिहुँलोक में आनंद छाया, कि सुख की बहार लाये महावीर जी ॥

अभिषेक करे मेरु पर, कि क्षीर जल भर लाये महावीर जी ।
हम जन्म कल्याणक मनाये, कि चैतसुदी तेरस आये महावीर जी ॥
बाजे कुंडलपुर में बधाई, कि अँगना में वीर आये महावीर ॥२॥
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....

मगसिर वदी दशमी आई, प्रभु वैराग्य हुआ महावीर जी ।
चंद्राभा पालकी लेकर, सुरपति वन आ गये महावीर जी ॥
प्रभु ! सिद्ध नमः कहते ही, जिन दीक्षा धारी महावीर जी ।
हो गए स्वयंभू स्वामी, परम जग उपकारी महावीर जी ॥
बाजे आतम में शहनाई, कि निज गृह वीर आये महावीर ॥३॥
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...

ऋजुकूल सरित तट तिष्ठे, वैशाख सुदि दशमी है महावीर जी ।
प्रभु शुक्ल ध्यान के धारी, घाति चउ नाश किये हैं महावीर जी ॥
हुई समवसरण शुभ रचना, भविक जन हितकारी महावीर जी ।
बिन इच्छा ध्वनि खिरी है, कि प्रभु की अमृतवाणी महावीर जी ॥
बाजे समवसरण शहनाई, कि गगन में वीर आये महावीर ॥४॥
ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....

जब कार्तिक अमावस आई, कि दीपावली आई महावीर जी ।
घड़ी स्वाति नखत की आई, कि प्रभु मुक्ति पाई महावीर जी ॥
प्रभु पूर्ण परम पद पाये, कि अष्टम भू पाये महावीर जी ।
सब जय बोले धरती पर, कब निर्वाण पाये, महावीर जी ॥
बाजे आत्म नगर शहनाई, कि वीर प्रभु मोक्ष पाये महावीर ॥५॥
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय...

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय नमो नमः ।'

जयमाला

दोहा

बाल ब्रह्मचारी प्रभु, महावीर जिननाथ ।
गुण वर्णन कैसे कहूँ, अतः धरूँ पद माथ ॥१॥

(तर्ज - स्रग्विणी छंद)

जय महावीर अतिवीर पद को नमूँ ।
सन्मति नाथ दाता सुवीर को नमूँ ॥
वंदना मैं करूँ वीर तीर्थंकरा ।
आ गया हूँ शरण दीजिये आसरा ॥२॥

वर्द्धमानेश सिद्धार्थ सुत को नमूँ ।
मात त्रिशला के नंदन को मन से नमूँ ॥३॥वंदना...

है पुरुरवा से जीवन कहानी शुरू ।
भव धरे अनगिनत कैसे गिनती करूँ ॥४॥वंदना...

पुण्योदय से भरत सुत मारीचि हुये ।
भाव मिथ्यात्व के वश भटकते रहे ॥५॥वंदना...

बन गये अर्ध चक्री त्रिपृष्ठ पती ।
भव भ्रमण ही किया नहीं सुधरी मति ॥६॥वंदना...

भाव अज्ञान में कर्म बंधन किया ।
चार गति में रुला क्रूर सिंह बन गया ॥७॥वंदना...

पुण्य से ऋद्धि चारण मुनी मिल गये ।
देशना पाके अश्रु नयन भर गये ॥८॥वंदना...

मिथ्यातम हट गया दीप सम्यक् जला ।
श्री गुरु की शरण से ही बंधन टला ॥९॥वंदना...

फिर प्रथम स्वर्ग में सिंहकेतु हुये।
देव फिर विद्याधर से मुनिव्रत लिये ॥१०॥वंदना...

स्वर्ग सप्तम से राजा हरिषेण हुये।
फिर महाशुक्र से राजपुत्र हुये ॥११॥वंदना...

स्वर्ग द्वादश गये नंद राजा हुये।
दीक्षा लेकर तीर्थंकर की सत्ता लिये ॥१२॥वंदना...

सोलवें स्वर्ग से माँ को सपने दिये।
माता त्रिशला के नैन सितारे हुये ॥१३॥वंदना...

धन की वृद्धि से श्री वर्द्धमान हुये।
मेरु पर्वत दबाया तो वीर हुये ॥१४॥वंदना...

मुनि संजय विजय मन में शंकित हुये।
देखकर बाल जिन को निःशंकित हुये ॥१५॥वंदना...

सन्मति नाम तत्क्षण रखा मुनिवरा।
दृष्टि सम्यक् करो हे मेरे महावीरा ॥१६॥वंदना...

देव संगम परीक्षा को विषधर बना।
उसके फण पर चढ़े नाथ ताली बजा ॥१७॥वंदना...

धन्य हो वीर स्वामी चरण में नमा।
दास हूँ आपका मुझको कर दो क्षमा ॥१८॥वंदना...

एक हाथी मदोन्मत्त अवश हो रहा।
वीर को देखकर शांत ही हो गया ॥१९॥वंदना...

तब अतिवीर कहने लगे जन सभी।
पाँच ही नाम सार्थक किये नाथ जी ॥२०॥वंदना...

तीस ही वर्ष में तप धरा आपने।
रुद्र का विघ्न जिनवर सहा आपने ॥२१॥वंदना...
वर्ष बारह प्रभु मौन की साधना ।
घातिया नष्ट हो ज्ञान केवल घना ॥२२॥वंदना...
दिन छ्यासठ हुए देशना ना खिरे।
आये गौतम प्रभु पद में शीश धरे ॥२३॥वंदना...
प्रभु वाणी खिरी जैसे फुलवा झरें।
भव्य जीवों के जिनवाणी कल्मष हरे ॥२४॥वंदना...
तीस ही वर्ष प्रभु ने विहार किया।
आये पावापुरी योग रोध किया ॥२५॥वंदना...
कर्म संपूर्ण को नाश कर सुख लिया।
मुक्तिकांता वरी लक्ष्य को पा लिया ॥२६॥वंदना...
है परम पूज्य पावापुरी की धरा।
नाथ निर्वाण पाया है पुण्य धरा ॥२७॥वंदना...
दीप माला हुई ज्ञान ज्योति जली।
जैसे जन्मांध को रोशनी है मिली ॥२८॥वंदना...
सारे जग में दीवाली मनाई गई।
मोक्षलक्ष्मी मिले भावना की गई ॥२९॥वंदना...
आत्म गुण हेतु हे नाथ पूजा करूँ।
एक भव में ही मैं नाथ मुक्ति वरूँ ॥३०॥वंदना...

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

अंतिम तीर्थेशा, वीर जिनेशा, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

जाप्य

'ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपंचकल्याणकसमन्वितवृषभादिवीरान्तेभ्यो नमो नमः।'

समुच्चय जयमाला

दोहा

जो भी गाता है सदा, प्रभुवर का गुणगान ।
प्रभु सम वह गुणवान बन, पा जाये निर्वाण ॥१॥

(ज्ञानोदय छंद)

जय-जय धर्मतीर्थ के नायक, चौबिस तीर्थंकर स्वामी ।
वर्तमान भवि जन हितकारी, नमन करूँ त्रिभुवन नामी ॥
आदिनाथ से वीर प्रभु तक, मन वच तन से वंदन है ।
सिद्धालय के वासी को मम, श्रद्धा से अभिनंदन है ॥२॥

प्रथम देव आदीश्वर जिन हैं, आदि ब्रह्म विधि नाशक हैं ।
विश्व विज्ञ हो विश्व सुलोचन, अनेकांत के शासक हैं ॥
आतम जेता अजितनाथ हो, शिवरमणी का वरण किया ।
शत्रु-मित्र में समता रखकर, निज आतम में रमण किया ॥३॥

विषय भोग तृष्णा मय व्याधि, से पीड़ित संसारी हैं ।
काम असंभव संभव करते, संभव जिन अविकारी हैं ॥
लोकालोक प्रकाशी जिन, आनंद सिंधु में न्हवन किया ।
अभिनंदन जिन संपद देना, अतः चरण में नमन किया ॥४॥

दुर्नय तिमिर निवारण कारण, दिव्यध्वनि अति प्यारी है ।
सुमति जिनेश्वर सुमति दाता, तव पद में बलिहारी है ॥
पद्मप्रभ अरुणाभा वाले, सकल तत्त्व के ज्ञायक हो ।
मात पिता सम जन हितकारी, सदुपदेश के दायक हो ॥५॥

कर्म पाश में बंधा हुआ हूँ, हे जिनवर निर्बंध करो ।
पर प्रपंच में पड़ा हुआ हूँ, सुपार्श्व जिन निर्द्वन्द करो ॥

कोटिक सूर्य चन्द्र लज्जित हैं, हे ज्योतिर्मय जगदीश्वर ।
ललित कूट से मोक्ष पधारे, ध्याते हैं सुर नर गणधर ॥६॥

सुविधिनाथ नौवें तीर्थंकर, पुष्पदंत सुखकारी हैं ।
सुविधि बताते विधि नशाने, तव वंदन दुखहारी है ॥
गंगा जल चंदन नहीं शीतल, नहीं चांदनी शीतल है ।
शीतल जिन के वचन सुशीतल, प्रभु सुशोभित भूतल है ॥७॥

श्रेयस पद की चाह मुझे है, चेतन श्री का वरण करूँ ।
चाह यही है सिद्ध बनूँ मैं, बार-बार पद नमन करूँ ॥
विघ्न विनाशक वागीश्वर श्री, वासुपूज्य प्रणिपात करूँ ।
चंपापुर से मुक्तिगामी, तव पद में दिन रात रहूँ ॥८॥

विमलनाथ जिनवर निर्मल हो, निर्बल को संबल देते ।
इसीलिए चरणों में आकर, भक्त सदा जय-जय करते ॥
अनंत सार्थक नाम आपका, नंत चतुष्टय धारी हैं ।
पार किया लाखों को तुमने, आज हमारी बारी है ॥९॥

धर्मतीर्थ को किया प्रसारित, धर्म्यध्यान को समझाया ।
शुक्लध्यान से मोक्ष मिलेगा, समवसरण में बतलाया ॥
तीनों पद के धारी जिनवर, शांतिनाथ शांतिदाता ।
परम शांत रस वर्षा करते, भक्ति से नत है माथा ॥१०॥

कुंथुनाथ षट्काया रक्षक, मेरी भी रक्षा करिये ।
कृपा सिंधु कर्मों के हंता, मुझको भी निज सम करिये ॥
अरहनाथ अखिलेश्वर मेरे, राग जला कर मिटा दिया ।
नाश करो मेरे भव का भी, मन में तुमको बिठा लिया ॥११॥

बाल ब्रह्मचारी जिनदेवा, मोह मल्ल का नाश किया ।
विषयों को विष लखा आपने, निज पद में ही वास किया ॥

प्रथम बने मुनि स्वयं आप फिर मुनिव्रत का उपदेश दिया ।
अतःनाम सार्थक मुनिसुव्रत, मोह शनि का नाश किया ॥१२॥

नमि जिनवर के चरण पखारूँ, वीतराग छवि को ध्याऊँ ।
नमूँ वीतरागी जिनवर को, राग-द्वेष ना उर लाऊँ ॥
नीलमणि सम दीप्तिमान हैं, दयासिंधु जिनवर प्यारे ।
गिरनारी शिवनार वरी प्रभु, मेरा वंदन स्वीकारे ॥१३॥

पार्श्वनाथ पावन परमेश्वर, सबके मन को भाते हो ।
भाव भक्ति से जो भी ध्यावे, श्रद्धालय में आते हो ॥
वर्धमान जिन वीर सन्मति, महावीर अतिवीर प्रभो ।
अंतिम तीर्थंकर उपकारी, पावापुरि निर्वाण विभो ॥१४॥

इंद्रिय सुख की नहीं कामना, लक्ष्य यही शिव पाना है ।
घबराया हूँ कर्म फलों से, चौबीसी रज पाना है ॥
सांसारिक सुख नहीं चाहिए, शिव सुख की ही अभिलाषा ।
यही विनय है अंतर्यामी, 'पूर्ण' कीजिये मम आशा ॥१५॥

दोहा

चौबीसों तीर्थेश का, है अनंत उपकार ।
भाव सहित पूजा करूँ, पाऊँ सौख्य अपार ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो जयमालापूर्णार्घ्यं ....।

घत्ता

प्रभुवर को पूजे, शिव सुख सूझे, भव-भव का संताप हरो ।
नित पूज रचाऊँ, ध्यान लगाऊँ, 'विद्यासागर पूर्ण' करो ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

गुरुपूजाएँ

सप्तर्षि-पूजा

कविवर मनरंगलाल

छप्पय

प्रथम नाम सुरमन्यु दुतिय श्रीमन्यु ऋषीश्वर ।
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथो वर ॥
पंचम श्री जयवान विनयलालस षष्ठम भनि ।
सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्र-धाम गनि ॥
ये सातों चारण-ऋद्धि-धर, करूँ तास पद थापना ।
मैं पूजूँ मन वच काय करि, जो सुख चाहूँ आपना ॥

ॐ ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वराः! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।
ॐ ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वराः! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।
ॐ ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वराः! अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

अष्टक (हरिगीतिका छंद)

शुभतीर्थ उद्भव-जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायकैं ।
भव-तृषाकन्द-निकन्द-कारण, शुद्धघट भरवायकैं ॥
मन्वादि चारण-ऋद्धिधारक, मुनिन की पूजा करूँ ।
[1]ता करें पातक हरें, सारे, सकल आनन्द विस्तरूँ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखण्ड कदलीनन्द केशर, मन्द मन्द घिसायकै ।
तसु गन्ध प्रसरित दिग-दिगन्तर, भर कटोरी लायकै ॥ मन्वादि०

ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाठान्तर १. जे किये

अतिधवल अक्षत खण्डवर्जित, मिष्ट राजनभोग के ।
कलधौत-थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभ उपयोग के ॥ मन्वादि०
ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्योऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

बहुवर्ण सुवरणसुमन आछे, अमल कमल गुलाब के ।
केतकी चम्पा चारु मरुआ, चुने निज-कर चाव के ॥ मन्वादि०
ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्यः पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान नाना भाँति चातुर, रचित शुद्ध नये नये ।
सदमिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरट के थारा लये ॥ मन्वादि०
ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कलधौत-दीपक जड़ित नाना, भरित गोघृत सार सौं ।
अति ज्वलित जगमग-ज्योति जाकी, तिमिरनाशन हार सौं । मन्वादि०
ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

दिक् चक्र गन्धित होत जाकर, धूप दश-अंगी कही ।
सो लाय मन-वच-कायशुद्ध, लगाय कर खेऊँ सही ॥ मन्वादि०
ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट [1]चुष्ट चुनायकैं ।
द्रावडी दाडिम चारु पुंगी, थाल भर भर लायकैं ॥ मन्वादि०
ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

पाठान्तर १. पुष्ट

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना ।
फल ललित आठों द्रव्य-मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥ मन्वादि॰

ॐ ह्रीं श्रीचारणर्द्धिधर-सुरमन्यु-श्रीमन्यु-श्रीनिचय-सर्वसुन्दर-जयवद्-विनयलालस-जयमित्रर्षिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

त्रिभंगी

वन्दूँ ऋषिराजा, धर्म-जहाजा, निज-पर काजा, करत भले ।
करुणा के धारी, गगन-विहारी, दुख-अपहारी भरम दले ॥
काटत जम-फन्दा भवि-जन-वृन्दा, करत अनन्दा चरणन में ।
जो पूजैं ध्यावैं, मंगल गावैं, फेर न आवैं भव-वन में ॥

पद्धरि

जय सुरमनु मुनिराजा महन्त, त्रस-थावर की रक्षा करन्त ।
जय मिथ्या-तम-नाशक पतंग, करुणा-रस-पूरित अंग-अंग ॥१

जय जय श्रीमनु अकलंक रूप, पद-सेव करत नित अमर-भूप ।
जय पंच अक्ष जीते महान, तप तपत देह कंचन-समान ॥२

जय निचय सप्त तत्त्वार्थ भास, तप-रमा तनों तन में प्रकाश ।
जय विषय-रोध सम्बोध भान, परणति के नाशन अचल ध्यान ॥३

जय जयहिं सर्वसुन्दर दयाल, लखि इन्द्रजालवत जगत-जाल ।
जय तृष्णाहारी रमण राम, निज परणति में पायो विराम ॥४

जय आनन्दघन कल्याणरूप, कल्याण करत सबकौ अनूप ।
जय मद-नाशन जयवान देव, निरमद विरचित सब करत सेव ॥५

जय जयहिं विनयलालस अमान, सब शत्रु-मित्र जानत समान ।
जय कृशित काय तप के प्रभाव, छवि-छटा उड़ति आनन्द दाय ॥६

जय मित्र सकल जग के सुमित्र, अनगिनत अधम कीने पवित्र ।
जय चन्द्रवदन राजीव नैन, कबहूँ विकथा बोलत न बैन ॥७
जय सातों मुनिवर एक संग, नित गगन-गमन करते अभंग ।
जय आये मथुरापुर मँझार, तहँ मरी रोग को अति प्रचार ॥८
जय जय तिन चरणनि के प्रसाद, सब मरी देवकृत भई वाद ।
जय लोक करे निर्भय समस्त, हम नमत सदा नित जोड़ हस्त ॥९
जय ग्रीषम-ऋतु परवत मँझार, नित करत अतापन योगसार ।
जय तृषा-परीषह करत जेर, कहुँ रंच चलत नहिं मन-सुमेर ॥१०
जय मूल अठाइस गुणन धार, तप उग्र तपत आनन्दकार ।
जय वर्षा-ऋतु में वृक्ष-तीर, तहँ अति शीतल झेलत समीर ॥११
जय शीत-काल चौपट मँझार, कै नदी-सरोवर-तट-विचार ।
जय निवसत ध्यानारूढ़ होय, रंचक नहि मटकत रोम कोय ॥१२
जय मृतकासन वज्रासनीय, गोदूहन इत्यादिक गनीय ।
जय आसन नाना भाँति धार, उपसर्ग सहत ममता निवार ॥१३
जय जपत तिहारो नाम कोय, लख पुत्र-पौत्र कुल-वृद्धि होय ।
जय भरे लक्ष अतिशय भँडार, दारिद्रतनो दुख होय छार ॥१४
जय चोर अग्नि डाकिन पिशाच, अरु ईति-भीति सब नसत साँच ।
जय तुम सुमरत सुख लहत लोक, सुर असुर नवत पद देत धोक ।१५

छन्द रोला

ये सातों मुनिराज, महातप लछमी धारी ।
परम पूज्य पद धरैं, सकल जग के हितकारी ॥
जो मन वच तन शुद्ध, होय सेवै औ ध्यावै ।
सो जन 'मनरंगलाल', अष्ट ऋद्धिन को पावै ॥

ॐ ह्रीं सुरमन्वादिसप्तर्षिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—नमन करत चरनन परत, अहो गरीब निवाज ।
पंच परावतर्ननि तैं, निरवारो ऋषिराज ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

गुरुपूजा

दोहा

चहुँ गति दुख सागर विषैं, तारन तरन जिहाज ।
रतनत्रय निधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज ॥१॥

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक (हरिगीतिका छंद)

शुचि नीर निरमल क्षीरदधि सम, सुगुरु चरन चढ़ाइया ।
तिहुँ धार तिहुँ गद टार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया ॥
भव भोग तन वैराग धार निहार, शिव तप तपत हैं ।
तिहुँ जगत नाथ अराध साधु सु पूज नित गुन जपत हैं ॥

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

करपूर चंदन सलिल सौं घसि, सुगुरु पद पूजा करौं ।
सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरौं ॥ भव०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

तन्दुल कमोद सुवास उज्जल, सुगुरु पगतर धरत हैं ।
गुनकार औगुन हार स्वामी, वंदना हम करत हैं ॥ भव०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ फूल रास प्रकास परिमल, सुगुरु पायनि परत हों ।
निरवार मार उपाधि स्वामी, सील दिढ़ उर धरत हों ॥ भव०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान मिष्ट सलौन सुन्दर, सुगुरु पायन प्रीत सौं ।
कर छुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजै रीत सौं ॥ भव०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक उदोत सजोत जगमग, सुगुरुपद पूजों सदा ।
तम नाश ज्ञान उजास स्वामी, मोहि मोह न हो कदा ॥ भव०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

बहु अगर आदि सुगंध खेऊँ, सुगुरु पद पद्महिं खरे ।
दुख पुंज काठ जलाय स्वामी, गुण अछय चित में धरे ॥ भव०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं...

भरथाल पूग बदाम बहुविधि, सुगुरुक्रम आगें धरों ।
मंगल महाफल करो स्वामी, जोरकर विनती करों ॥ भव०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं

जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली ।
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहिं तार उतावली ॥ भव०

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

जयमाला

दोहा

कनक-कामिनी विषय वश, दीसै सब संसार ।
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुन भंडार ॥१॥

तीन घाटि नव कोड़ सब, वंदौं सीस नवाय ।
गुण तिहँ अट्ठाईस लौं, कहूं आरती गाय ॥२॥

बेसरी

एक दया पालै मुनिराजा, रागदोष द्वै हरन परं,
तीनों लोक प्रगट सब देखैं, च्यारों आराधननि करं ।
पंच महाव्रत दुद्धर धारैं, छहों दरब जानै सुहितं,
सात भंग वानी मन लावै, पावें आठ रिद्ध उचितं ॥३॥

नवों पदारथ विधि सों भाखैं, बंध दशों चूरन करनं,
ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह व्रत धरनं ।
तेरह भेद काठिया चूरैं, चौदह गुन थानक लखियं,
महाप्रमाद पंचदश नाशे, सोल कषाय सबै नखियं ॥४॥

बंधादिक सत्रह सब चूरैं, ठारह जन्म न मरन मुनं,
एक समय उनईस परीषह, बीस प्ररूपनि में निपुनं ।
भाव उदीक इकीसों जानै, बाइस अभखन त्याग करं,
अहमिंदर तेईसों वंदै, इन्द्र सुरग चौबीस वरं ॥५॥

पच्चीसों भावन नित भावैं, छब्बिस अंग उपंग पढ़ै,
सत्ताईसौं विषय विनाशैं, अट्ठाईसौं गुन सु बढ़ै ।
सीत समय सर [1]चौहटवासी, ग्रीषम गिरिसिर जोगधरं,
वर्षा वृक्षतरैं थिर ठाढ़े, आठ करम हनि सिद्धि वरं ॥६॥

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रः आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं

दोहा–कहों कहाँ लों भेद मैं, बुध थोरी गुनभूर ।
'हेमराज' सेवक हृदय, भक्ति भरी भरपूर ॥७॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

---

१. पाठान्तर चौपटवासी

आचार्य श्री शांतिसागर पूजा

रचयित्री—आर्यिका चंदनामती

पूजन करो रे,
श्री शान्तिसिन्धु आचार्य प्रवर की पूजन करो रे-२ ।
भारत वसुन्धरा ने जब मुनियों के दर्श नहीं पाये ।
सदी बीसवीं में तब श्री चारित्रचक्रवर्ती आये ।।
दक्षिण भारत भोजग्राम ने एक लाल को जन्म दिया ।
उसने ही सबसे पहले मुनिपरंपरा जीवन्त किया ।
मुनिपरंपरा जीवन्त किया ।।
पूजन करो रे,
श्री शान्तिसिन्धु आचार्य प्रवर की पूजन करो रे-२ ।

ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागर! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागर! अत्र तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागर! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

चाल—तीरथ करने चली सती

दीक्षा लेकर बने मुनी, निज कर्मकलंक जलाने को ।
कैसे होते हैं मुनिवर, यह बतला दिया जमाने को ।।
यह बतला दिया जमाने को ।। दीक्षा लेकर...
सागर सदृश गंभीरता, गंगा जल सम शीतल वाणी ।
जीवन में साकार किया, प्रभु कुंदकुंद की जिनवाणी ।।
ऐसे गुरु के पद में आए, हम जलधार चढ़ाने को,
हम जलधार चढ़ाने को ।। दीक्षा लेकर...

ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं..

चंदन का शीतलता गुण भी, तुम आगे मानो व्यर्थ हुआ ।
विषधर का विष भी तुम पर चढ़ कर भक्ति भाव कर उतर गया ।।
हम भी निज शीतलता हेतू लाये गंध चढ़ाने को ।
लाये गंध चढ़ाने को ।। दीक्षा लेकर...
ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय संसारतापविनाशनाय चंदनं...।
विषयवासना के बन्धन, जग को निज वश में करते हैं ।
तुम जैसे मुनिगण तप करके, मोक्षमार्ग को वरते हैं ।
शुभ्र धवल अक्षत ले आये, तुम पद पुंज चढ़ाने को ।
तुम पद पुंज चढ़ाने को ।। दीक्षा लेकर...
ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्... ।
बालविवाह हुआ फिर भी, ब्रह्मचारी जीवन बीता था ।
सत्यवती माँ ने अपनी, ममता से तुमको सींचा था ।।
कामदेव वश करने हेतू, आए पुष्प चढ़ाने को ।
आए पुष्प चढ़ाने को ।। दीक्षा लेकर...
ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं... ।
पैंतिस वर्षों तक दीक्षित जीवन में घोर तपस्या की ।
साढ़े पच्चिस वर्ष तुम्हारे, उपवासों की संख्या थी ।।
मिले हमें भी तपशक्ती, आए नैवेद्य चढ़ाने को ।
आए नैवद्य चढ़ाने को ।। दीक्षा लेकर...
ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय क्षुधारोगविनाशनाय नैवद्यं... ।
दक्षिण से उत्तर में आकर, ज्ञानका दीप जलाया था ।
नग्न दिगम्बर वेष मुनि का, सब जग को दिखलाया था ।।
घृत दीपक ले हम भी आए, मोह अन्धेरा नशाने को ।
मोह अन्धेरा नशाने को ।। दीक्षा लेकर...
ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...

कर्मों को कृश करने वाले, वीर पुरुष कहलाते हैं ।
तुम जैसा सुसमाधिमरण, बिरले साधू कर पाते हैं ।
धूप जलाकर चाह रहे हम, कर्म समूह जलाने को ।
कर्म समूह जलाने को ।। दीक्षा लेकर...

ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय अष्टकर्मदहनाय धूपं...

उत्तम फल की चाह में तुमने, नग्न व्रत को धारा ।
जिनवर के लघु नन्दन बनकर, मोक्षमार्ग को साकारा ।।
फल का थाल चढ़ाने आए, तुम जैसा फल पाने को ।
तुम जैसा फल पाने को ।। दीक्षा लेकर...

ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय मोक्षफलप्राप्तये फलं...

साधु अवस्था धारण कर, क्रम क्रम से श्रेणी बढ़ती है ।
कर्म निर्जरा के बल पर अरिहन्त अवस्था मिलती है ।।
गुरु चरणों में इसीलिए, हम आये अर्घ्य चढ़ाने को ।
हम आये अर्घ्य चढ़ाने को ।। दीक्षा लेकर...

ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं...

शेर छन्द

सागर जहाँ गंभीरता में सुप्रसिद्ध है ।
गुरु शांतिसिन्धु के समक्ष वह भी तुच्छ है ।।
जहाँ शांति का जल सर्वदा कल्लोल करे है ।
उन गुरु चरण में हम भी शांतिधारा करे हैं ।।१।।

शान्तये शान्तिधारा ।

स्याद्वाद के पुष्पों से तव उद्यान खिल रहा ।
तुमसे ही आज मुनिवरों का दर्श मिल रहा ।।
उपकार तुम्हारा न धरा भूल सकेगी ।
खुद पुष्प अंजली से पुष्प वृष्टि करेगी ।।२।।

दिव्यपुष्पाञ्जलिः ।

जयमाला

तर्ज–बाबुल की...

गुरु शांतिसिन्धु की पूजन से, आतम सुख का भण्डार मिले ।
गुरुवर के दर्शन वन्दन से, शाश्वत सुखशांति बहार मिले ।।टेक०

आषाढ़ असित षष्ठी इसवी सन् अट्ठारह सौ बहत्तर में ।
पितु भीमगौंड माँ सत्यवती से जन्म लिया इक बालक ने ।।
शुभ नाम सातगौंडा पाया तब भोज ग्राम के भाग्य खिले ।
गुरुवर के दर्शन वन्दन से, शाश्वत सुखशांति बहार मिले ।।१।।

ईस्वी सन् उन्निस सौ तेरह शुक्ला तेरस शुभ ज्येष्ठ तिथी ।
देवेन्द्रकीर्ति मुनिवर से "उत्तूर" में क्षुल्लक व्रत दीक्षा ली ।।
निज पर कल्याण भावना ले गुरु शांतिसिन्धु शिवद्वार चले ।
गुरुवर के दर्शन वन्दन से, शाश्वत सुखशांति बहार मिले ।।२।।

सन् उन्निस सौ बीस में फिर देवेन्द्रकीर्ति मुनिवर से ही ।
यरनाल पञ्चकल्याणक में श्री शांतिसिन्धु मुनि बने वहीं ।।
उस फाल्गुन शुक्ला चौदश को उनके अन्तर्मन द्वार खुले ।
गुरुवर के दर्शन वंदन से, शाश्वत सुखशांति बहार मिले ।।३।।

अट्ठाइस मूलगुणों में रत मुनिवर की ख्याति फैल रही ।
आचार्य बने वे सर्वप्रथम समडोली धरा पवित्र हुई ।।
गुरुओं के गुरु वे बने स्वयं निज में जब मूलाचार पले ।
गुरुवर के दर्शन वन्दन से, शाश्वत सुखशांति बहार मिले ।।४।।

तव कृपा प्रसाद से ताम्रपट्ट पर धवल ग्रन्थ उत्कीर्ण हुआ ।
तव चरणों में नास्तिक जीवों का अहंकार निर्जीर्ण हुआ ।।
मुनि श्रावक के व्रत ले लेकर तुम वृक्ष में पुष्प हजार खिले ।
गुरुवर के दर्शन वन्दन से, शाश्वत सुखशांति बहार मिले ।।५।।

सन् पचपन कुंथलगिरि पर द्वादश वर्ष सल्लेखना पूर्ण लिया ।
भादों सुदि दुतिया को नश्वर काया को तुमने त्याग दिया ।।
लाखों जनता के नेत्रों से तब अश्रूधार अपार चले ।
गुरुवर के दर्शन वन्दन से, शाश्वत सुखशांति बहार मिले ।।६।।

युगपुरुष ! तेरे उपकारों का बदला न चुकाया जा सकता ।
तेरी श्रेणी में और किसी साधू का त्याग न आ सकता ।।
तू तो तुझमें ही समा गया बस आज तेरी जयकार मिले ।
गुरुवर के दर्शन वन्दन से, शाश्वत सुखशांति बहार मिले ।।७।।

चारित्रचक्रवर्ती गुरु की जयमाल गूंथ कर लाए हैं ।
बीसवीं सदी के प्रथम सूरि के चरण चढ़ाने आए हैं ।।
'चन्दनामती' मुझको भी तुम सम गुण के कुछ संस्कार मिले ।
गुरुवर के दर्शन वन्दन से, शाश्वत सुखशांति बहार मिले ।।८।।

ॐ ह्रूं चारित्रचक्रवर्त्याचार्यश्रीशान्तिसागराय जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति... ।

दोहा

शांतिसिन्धु आचार्य की, पूजन यह सुखकार ।
जो करते श्रद्धा सहित, होते भव से पार ।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

आचार्य श्री विद्यासागर पूजा

रमेशचन्द्र 'अरुण'

श्री विद्यासागर के चरणों में झुका रहा अपना माथा ।
जिनके जीवन की हर चर्या बन पड़ी स्वयं ही नवगाथा ।।
जैनागम का वह सुधा कलश जो बिखराते हैं गली-गली ।
जिनके दर्शन को पाकर के खिलती मुरझाई हृदय कली ।।

ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

सांसारिक विषयों में पड़कर, मैंने अपने को भरमाया।
इस रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार नहीं पाया॥
तब विद्यासिन्धु के जल कण से, भवकालुष धोने आया हूँ।
आना जाना मिट जाय मेरा, यह बन्ध काटने आया हूँ॥

ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध अनल में जल-जल कर, अपना सर्वस्व लुटाया है।
निजशान्त स्वरूप न जान सका, जीवनभर इसे भुलाया है॥
चन्दन सम शीतलता पाने अब, शरण तुम्हारी आया हूँ।
संसार ताप मिट जाय मेरा, चन्दन वन्दन को लाया हूँ॥

ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ को न मैंने जड़ समझा, नहि अक्षय निधि को पहचाना।
अपने तो केवल सपने थे, भ्रम और जगत का भटकाना॥
चरणों में अर्पित अक्षत हैं, अक्षय पद मुझको मिल जावे।
तव ज्ञान-अरुण की किरणों से, यह हृदयकमल भी खिल जावे॥

ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इन विषय भोग की मदिरा पी, मैं बना सदा से मतवाला।
तृष्णा को तृप्त करें जितनी, उतनी बढ़ती इच्छा ज्वाला॥

मैं काम भाव विध्वंस हेत, मन सुमन चढ़ाने आया हूँ ।
यह मदन विजेता बन न सके, यह भाव हृदय में लाया हूँ ॥
ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा ।

इस क्षुधा रोग की व्यथा कथा, भव-भव में कहता आया हूँ ।
अति भक्ष अभक्ष्य भखे फिर भी, मनतृप्त नहीं कर पाया हूँ ॥
नैवेद्य समर्पित करके मैं, तृष्णा की भूख मिटाऊँगा ।
अब और अधिक न भटक सकूँ, यह अन्तर बोध जगाऊँगा ॥
ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं

मोहान्धकार से व्याकुल हो निज को नहीं मैंने पहचाना ।
मैं रागद्वेष में लिप्त रहा, इस हाथ रहा बस पछताना ॥
यह दीप समर्पित है मुनिवर, मेरा तम दूर भगा देना ।
तुम ज्ञान दीप की बाती से, मम अन्तर दीप जला देना ॥
ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

इन अशुभ कर्म ने घेरा है,मैंने अब तक यह माना था ।
बस पाप कर्म तज पुण्य कर्म को,चाह रहा अपनाना था ॥
शुभअशुभ कर्म सब रिपुदल हैं, मैं इन्हें जलाने आया हूँ ।
इसीलिये तव चरणों में अब, धूप चढ़ाने आया हूँ ॥
ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं....

भोगों को इतना भोगा कि, खुद को ही भोग बना डाला ।
साध्य और साधक का अन्तर, मैंने आज मिटा डाला ॥
मैं चिदानन्द में लीन रहूँ, पूजा का यह फल पाना है ।
पाना था जिसके द्वारा वह मिल बैठा मुझे ठिकाना है ॥
ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं..

जग के वैभव को पाकर मैं, निश दिन कैसा अलमस्त रहा ।
चारों गतियों की ठोकर को, खाने में ही अभ्यस्त रहा ॥
मैं हूँ स्वतन्त्र ज्ञाता दृष्टा, मेरा पर से क्या नाता है ।
कैसे अनर्घ पद पा जाऊँ, यह 'अरुण' भावना भाता है ॥
ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०

जयमाला

हे गुरुवर तेरे गुण गाने, अर्पित हैं जीवन के क्षण क्षण ।
अर्चन के सुमन समर्पित हैं, हरषाये जगती के कण कण ॥१॥
कर्नाटक के सदलगा ग्राम में, मुनिवर तुमने जन्म लिया ।
मल्लप्पा पूज्यपिताश्री को, अरु श्रीमति को कृतकृत्य किया ॥२॥
बचपन के इस विद्याधर में, विद्या के सागर उमड़ पड़े ।
मुनिराज देशभूषण से तुम, व्रतब्रह्मचर्य ले निकल पड़े ॥३॥
आचार्य ज्ञानसागर ने सन्, अड़सठ में मुनि पद दे डाला ।
अजमेर नगर में हुआ उदित, मानों रवि तम हरने वाला ॥४॥
परिवार तुम्हारा सबका सब, जिन पथ पर चलने वाला है ।
वह भेद ज्ञान की छैनी से, गिरि कर्म काटने वाला है ॥५॥
तुम स्वयं तीर्थ से पावन हो, तुम हो अपने में समयसार ।
तुम स्याद्वाद के प्रस्तोता, वाणी-वीणा के मधुर तार ॥६॥
तुम कुन्दकुन्द के कुन्दन से, कुन्दन सा जग को कर देने ।
तुम निकल पड़े बस इसीलिए, भटके अटकों को पथ देने ॥७॥
वह मन्द मधुर मुस्कान सदा, चेहरे पर बिखरी रहती है ।
वाणी कल्याणी है अनुपम, करुणा के झरने झरते हैं ॥८॥
तुममें कैसा सम्मोहन है, या है कोई जादू टोना ।
जो दर्श तुम्हारे कर जाता, नहि चाहे कभी विलग होना ॥९॥

इस अल्प उम्र में भी तुमने, साहित्य सृजन अति कर डाला ।
श्री जैन गीत गागर में तुमने, मानो सागर भर डाला ॥१०॥

है शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अनजाना ।
स्वर ताल छन्द मैं क्या जानूँ, केवल भक्ति में रम जाना ॥११॥

भावों की निर्मल सरिता में, अवगाहन करने आया हूँ ।
मेरा सारा दुख दर्द हरो, यह अर्घ भेंटने लाया हूँ ॥१२॥

हे तपोमूर्ति! हे आराधक! हे योगीश्वर! हे महासन्त! ।
है 'अरुण' कामना देख सके, युग-युग तक आगामी बसन्त ॥१३॥

ॐ ह्रूं श्री १०८ आचार्यविद्यासागरमुनीन्द्रायानर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं
पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जिनवाणी स्तुति

माता तू दया करके कर्मों से छुडा लेना
इतनी सी विनय तुमसे, चरणों में जगह देना. टेक

माता आज मैं भटका हूँ, माया के अन्धेरे में;
कोई नहीं मेरा है इस कर्म के रेले में.
कोई नहीं मेरा है तुम धीर बँधा देना. माता० १

जीवन के चौराहे पर मैं सोच रहा कब से,
जाऊँ तो किधर जाऊँ, यह पूछ रहा मन से;
पथ भूल गया हूँ मैं, तुम राह दिखा देना. माता० २

लाखों को उबारा है, मुझको भी उबारो तुम,
मँझधार में है नैया, उसको भी तिरा दो तुम;
मँझधार में अटका हूँ, उस पार लगा देना. माता० ३

स्वाध्याय-पाठ

तत्त्वार्थसूत्रम्

आचार्यगृद्धपिच्छविरचितम्

मोक्ष-मार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्म-भूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्व-तत्त्वानां वन्दे तद्गुण-लब्धये ॥

स्रग्धरा

त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्कं नवपदसहितं जीव-षट्काय-लेश्याः,
पञ्चान्ये चास्तिकाया व्रत-समिति-गति-ज्ञान-चारित्र-भेदाः ।
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः,
प्रत्येति श्रद्धधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः ॥१॥

[1]सिद्धे जयप्पसिद्धे चउव्विहाराहणाफलं पत्ते ।
वंदित्ता अरहंते वोच्छं आराहणा कमसो ॥२॥

[1]उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं ।
दंसण-णाण-चरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ॥३॥

प्रथमोऽध्यायः

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥१॥ तत्त्वार्थ-श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥२॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥ जीवाजीवास्रव-बन्ध-संवर-निर्जरा-मोक्षास्तत्त्वम् ॥४॥ नाम-स्थापना-द्रव्य-भावतस्तन्न्यासः ॥५॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥६॥ निर्देश-स्वामित्व-साधनाधिकरण-स्थिति-विधानतः

१. ये दो गाथाएँ भगवती आराधना ग्रन्थ के मङ्गलाचरण की है।

॥७॥ सत्संख्या-क्षेत्र-स्पर्शन-कालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानि ज्ञानम् ॥९॥ तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्षम् ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥१३॥ तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम् ॥१४॥ अवग्रहेहावाय-धारणाः ॥१५॥ बहु-बहुविध-क्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेक-द्वादशभेदम् ॥२०॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥२१॥ क्षयोपशम-निमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥२२॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधि-मनःपर्यययोः ॥२५॥ मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्व-पर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३०॥ मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद् यदृच्छोपलब्धे-रुन्मत्तवत् ॥३२॥ नैगम-संग्रह-व्यवहारर्जुसूत्र-शब्द-समभिरूढैवंभूता नयाः ॥३३॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

द्वितीयोऽध्यायः

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिक-पारिणामिकौ च ॥१॥ द्विनवाष्टादशैक-विंशति-त्रिभेदा यथाक्रमम् ॥२॥ सम्यक्त्व-चारित्रे ॥३॥ ज्ञान-दर्शन-दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणि च ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्व-चारित्र-संयमासंयमाश्च ॥५॥ गति-कषाय-लिङ्ग-मिथ्या-दर्शनाज्ञाना-संयतासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः ॥६॥ जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥७॥ उपयोगो लक्षणम् ॥८॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥९॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्कामनस्काः ॥११॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥१२॥ पृथिव्यप्तेजोवायु-वनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥१४॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥१५॥ द्विविधानि ॥१६॥ निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥१७॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥१८॥ स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुःश्रोत्राणि ॥१९॥ स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-शब्दास्तदर्थाः ॥२०॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥२१॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥ कृमिपिपीलिका-भ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥२३॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥२४॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥२५॥ अनुश्रेणि गतिः ॥२६॥ अविग्रहा जीवस्य ॥२७॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥२८॥

एकसमयाविग्रहा ॥२९॥ एकं द्वौ त्रीन् वानाहारकः ॥३०॥ सम्मूर्च्छनगर्भोपपादा जन्म ॥३१॥ सचित्त-शीत-संवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥३२॥ जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः ॥३३॥ देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥ शेषाणां सम्मूर्च्छनम् ॥३५॥ औदारिक-वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि शरीराणि ॥३६॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥३८॥ अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतीघाते ॥४०॥ अनादि-सम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्याचतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥ गर्भसम्मूर्च्छनजमाद्यम् ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥४६॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥ नारकसम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिक-चरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥५३॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

तृतीयोऽध्यायः

रत्न-शर्करा-वालुका-पङ्क-धूम-तमो-महातमःप्रभा भूमयो घनाम्बुवाताकाश-प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥१॥ तासु त्रिंशत्-पञ्चविंशति-पञ्चदश-दश-त्रि-पञ्चोनैक-नरक-शत-सहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥२॥ नारका नित्याशुभतर-लेश्या-परिणाम-देह-वेदना-विक्रियाः ॥३॥

परस्परोदीरित-दुःखाः ॥४॥ संक्लिष्टासुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥ तेष्वेक-त्रि-सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-त्रयस्त्रिंशत्-सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ॥६॥ जम्बूद्वीप-लवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्व-पूर्व-परिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥९॥ भरत-हैमवत-हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्-महाहिमवन्-निषध-नील-रुक्मि-शिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥११॥ हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत-हेममयाः ॥१२॥ मणि-विचित्र-पार्श्वा उपरि मूले च तुल्य-विस्ताराः ॥१३॥ पद्म-महापद्म-तिगिञ्छ-केसरि-महापुण्डरीक-पुण्डरीका ह्रदा-स्तेषामुपरि ॥१४॥ प्रथमो योजन-सहस्रायामस्तदर्द्ध-विष्कम्भो ह्रदः ॥१५॥ दशयोजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥१७॥ तद्-द्विगुण-द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः॥१९॥ गङ्गासिन्धु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकान्ता-सीतासीतोदा-नारी-नरकान्ता-सुवर्णरूप्यकूला-रक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥२१॥ शेषास्त्वपरगाः ॥२२॥ चतुर्दशनदी-सहस्र-परिवृता गङ्गा-सिन्ध्वादयो नद्यः ॥२३॥ भरतः षड्विंश-पञ्चयोजन-शत-विस्तारः षट्

चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥२४॥ तद्द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥२५॥ उत्तरा दक्षिण-तुल्याः ॥२६॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्-समयाभ्या-मुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥२७॥ ताभ्यामपरा भूमयो-ऽवस्थिताः ॥२८॥ एक-द्वि-त्रि-पल्योपम-स्थितयो हैमवतक-हारिवर्षकदैवकुरवकाः ॥२९॥ तथोत्तराः ॥३०॥ विदेहेषु संख्येयकालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥३२॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ् मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योप-मान्तर्मुहूर्ते ॥३८॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥३९॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

चतुर्थोऽध्यायः

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥२॥ दशाष्ट-पञ्च-द्वादश-विकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥३॥ इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशपारिषदात्मरक्षलोकपालानीक-प्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः ॥४॥ त्रायस्त्रिंश-लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥५॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥६॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-मनःप्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः ॥९॥ भवन-वासिनोऽसुर-नाग-विद्युत्सुपर्णाग्निवात-स्तनितोदधि-द्वीप-

दिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यन्तराः किन्नर-किंपुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः ॥११॥ ज्योतिष्काः सूर्या-चन्द्रमसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च ॥१२॥ मेरु-प्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥ तत्कृतः कालविभागः ॥१४॥ बहिरवस्थिताः ॥१५॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मैशान - सानत्कुमार - माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर-लान्तव-कापिष्ठ-शुक्र - महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत-प्राणतयो-रारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्ता-पराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥ स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-विशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिकाः ॥२०॥ गति-शरीर-परिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥२१॥ पीत-पद्म-शुक्ल-लेश्या द्वि-त्रि-शेषेषु ॥२२॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः ॥२४॥ सारस्वता-दित्यवह्न्यरुण-गर्दतोय-तुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥२५॥ विजयादिषु द्विचरमाः ॥२६॥ औपपादिक-मनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ॥२७॥ स्थितिरसुर-नाग-सुपर्ण-द्वीप-शेषाणां सागरोपम-त्रिपल्योपमार्ध-हीन-मिता ॥२८॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके ॥२९॥ सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ॥३०॥ त्रि-सप्त-नवैकादश-त्रयोदश-पञ्चदशभिरधिकानि तु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥ अपरा

पल्योपममधिकम् ॥३३॥ परतः परतः पूर्वा पूर्वानन्तरा ॥३४॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥३५॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥३६॥ भवनेषु च ॥३७॥ व्यन्तराणां च ॥३८॥ परा पल्योपममधिकम् ॥३९॥ ज्योतिष्काणां च ॥४०॥ तदष्टभागोऽपरा ॥४१॥ लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥४२॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

पंचमोऽध्यायः

अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥१॥ द्रव्याणि ॥२॥ जीवाश्च ॥३॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥५॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥६॥ निष्क्रियाणि च ॥७॥ असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम् ॥८॥ आकाशस्यानन्ताः ॥९॥ संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥१०॥ नाणोः ॥११॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥१२॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥१४॥ असंख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥१५॥ प्रदेशसंहारविसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥ गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ॥१७॥ आकाशस्यावगाहः ॥१८॥ शरीर-वाङ्-मनःप्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥१९॥ सुख-दुःख-जीवित-मरणोपग्रहाश्च ॥२०॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥२१॥ वर्तना-परिणाम-क्रियाः परत्वापरत्वे च

कालस्य ॥२२॥ स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायातपो-द्योतवन्तश्च ।२४। अणवः स्कन्धाश्च ॥२५॥ भेद-सङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदादणुः ॥२७॥ भेदसङ्घाताभ्यां चाक्षुषः॥२८॥ सद् द्रव्यलक्षणम् ॥२९॥ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत् ॥३०॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥३२॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥३३॥ न जघन्यगुणानाम् ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥३५॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥३६॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥३७॥ गुण-पर्ययवद् द्रव्यम् ॥३८॥ कालश्च ॥३९॥ सोऽनन्तसमयः ॥४०॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥४१॥ तद्भावः परिणामः ॥४२॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

षष्ठोऽध्यायः

कायवाङ्मनःकर्म योगः ॥१॥ स आस्रवः ॥२॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥३॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ॥४॥ इन्द्रिय-कषायाव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुःपञ्च-पञ्चविंशतिसंख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥५॥ तीव्र-मन्द-ज्ञाताज्ञात-भावाधिकरण-वीर्य-विशेषेभ्यस्त-द्विशेषः ॥६॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥७॥ आद्यं संरम्भ-समारम्भारम्भ-योग - कृत - कारितानुमत - कषायविशेषै-

स्त्रिस्त्रि-स्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥८॥ निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा द्विचतुर्द्वि-त्रि-भेदाः परम् ॥९॥ तत्प्रदोष-निह्नव-मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥१०॥ दुःख-शोक-तापाक्रन्दन-वध-परिदेवनान्यात्म-परोभय-स्थान्यसद्वेद्यस्य ॥११॥ भूतव्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादि-योगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥ केवलिश्रुत-संघधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥१३॥ कषायोदयात्तीव्र-परिणामश्चारित्रमोहस्य ॥१४॥ बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥१५॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥१६॥ अल्पारम्भ-परिग्रहत्वं मानुषस्य ॥१७॥ स्वभाव-मार्दवं च ॥१८॥ निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥१९॥ सरागसंयम-संयमासंयमाकामनिर्जरा-बालतपांसि दैवस्य ॥२०॥ सम्यक्त्वं च ॥२१॥ योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥२३॥ दर्शनविशुद्धि-र्विनयसंपन्नता शीलव्रतेष्वनतिचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोग-संवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्त्यकरण-मर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्ग-प्रभावना-प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥२४॥ परात्म-निन्दा-प्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥ तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥२६॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥२७॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

सप्तमोऽध्यायः

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥१॥ देश-सर्वतोऽणुमहती ॥२॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥३॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादान-निक्षेपण-समित्यालोकितपान-भोजनानि पञ्च ॥४॥ क्रोध-लोभ-भीरुत्व-हास्य-प्रत्याख्यानान्यनु-वीचिभाषणं च पञ्च ॥५॥ शून्यागार-विमोचितावास-परोपरोधाकरण-भैक्ष्यशुद्धि-सधर्मा-विसंवादाः पञ्च ॥६॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहराङ्ग-निरीक्षण-पूर्वरतानुस्मरण-वृष्येष्टरस-स्वशरीरसंस्कार-त्यागाः पञ्च ॥७॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेष-वर्जनानि पञ्च ॥८॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥९॥ दुःखमेव वा ॥१०॥ मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ्यानि च सत्त्व-गुणाधिक-क्लिश्य-मानाविनेयेषु ॥११॥ जगत्काय-स्वभावौ वा संवेग-वैराग्यार्थम् ॥१२॥ प्रमत्तयोगात्प्राण-व्यपरोपणं हिंसा ॥१३॥ असदभिधान-मनृतम् ॥१४॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥१५॥ मैथुनमब्रह्म ॥१६॥ मूर्छा परिग्रहः ॥१७॥ निःशल्यो व्रती ॥१८॥ अगार्यनगारश्च ॥१९॥ अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदण्डविरति-सामायिक-प्रोषधोपवासोपभोग-परिभोग-परिमाणातिथि-संविभागव्रत-सम्पन्नश्च ॥२१॥ मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता ॥२२॥ शङ्का-काङ्क्षा-विचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतिचाराः

॥२३॥ व्रतशीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम् ॥२४॥
बन्धवधच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥२५॥
मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्र-
भेदाः ॥२६॥ स्तेनप्रयोग-तदाहृतादान-विरुद्धराज्यातिक्रम-
हीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥२७॥ परविवाह-
करणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडाकाम-
तीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥ क्षेत्रवास्तु-हिरण्यसुवर्ण-धनधान्य-
दासीदास-कुप्यप्रमाणातिक्रमाः ॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्-
व्यतिक्रम-क्षेत्रवृद्धि-स्मृत्यन्तराधानानि ॥३०॥ आनयन-
प्रेष्यप्रयोग-शब्द-रूपानुपात-पुद्गलक्षेपाः ॥३१॥ कन्दर्प-
कौत्कुच्य - मौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोग - परिभोगा-
नर्थक्यानि ॥३२॥ योगदुष्प्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि
॥३३॥ अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादान-संस्तरोपक्रमणा-
नादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥ सचित्तसम्बन्धसम्मिश्रा-
भिषवदुष्पक्वाहाराः ॥३५॥ सचित्तनिक्षेपापिधान-
परव्यपदेशमात्सर्य्यकालातिक्रमाः ॥३६॥ जीवित-
मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि ॥३७॥
अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ॥३८॥ विधि-द्रव्य-दातृ-
पात्र-विशेषात्तद्विशेषः ॥३९॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अष्टमोऽध्यायः

मिथ्यादर्शनाविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्धहेतवः ॥१॥ सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥२॥ प्रकृति-स्थित्यनुभव-प्रदेशास्तद्विधयः ॥३॥ आद्यो ज्ञान-दर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीयायुर्नाम-गोत्रान्तरायाः ।४। पञ्च-नव-द्व्यष्टाविंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद्-द्वि-पञ्च-भेदा यथाक्रमम् ॥५॥ मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानाम् ॥६॥ चक्षुरचक्षुरवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला-स्त्यानगृद्धयश्च ॥७॥ सदसद्वेद्ये ॥८॥ दर्शन-चारित्र-मोहनीयाकषाय-कषाय-वेदनीयाख्यास्त्रि-द्वि-नव-षोडश-भेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्यकषाय-कषायौ हास्य-रत्यरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुन्नपुंसकवेदा अनन्तानु-बन्ध्यप्रत्याख्यान- प्रत्याख्यान - संज्वलन -विकल्पाश्चैकशः क्रोध-मान-माया-लोभाः ॥९॥ नारक-तैर्यग्योन-मानुष-दैवानि ॥१०॥ गति-जाति-शरीराङ्गोपाङ्ग-निर्माण-बन्धन-सङ्घात - संस्थान - संहनन -स्पर्शरस-गन्धवर्णानुपूर्व्यागुरु-लघूपघात-परघातातपोद्योतोच्छ्वास-विहायोगतयः प्रत्येक-शरीर-त्रस-सुभग - सुस्वर-शुभ-सूक्ष्म-पर्याप्ति-स्थिरादेय-यशःकीर्ति-सेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥११॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥१२॥ दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणाम् ॥१३॥ आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम-

कोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥१४॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥१५॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥१६॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥१७॥ अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥१८॥ नामगोत्रयोरष्टौ ॥१९॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥२०॥ विपाकोऽनुभवः ॥२१॥ स यथानाम ॥२२॥ ततश्च निर्जरा ॥२३॥ नामप्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात् सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥२४॥ सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥२५॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥२६॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

नवमोऽध्यायः

आस्रवनिरोधः संवरः ॥१॥ स गुप्ति-समिति-धर्मानुप्रेक्षा-परिषहजय-चारित्रैः ॥२॥ तपसा निर्जरा च ॥३॥ सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ॥४॥ ईर्या-भाषैषणादान-निक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥५॥ उत्तम-क्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तपस्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि धर्मः ॥६॥ अनित्याशरण-संसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रव-संवर-निर्जरा-लोक-बोधिदुर्लभ-धर्मस्वाख्यातत्त्वानुचिन्तन-मनुप्रेक्षाः ॥७॥ मार्गाच्यवन-निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥८॥ क्षुत्पिपासा-शीतोष्ण-दंशमशक-नाग्न्यारति-स्त्री-चर्या-निषद्या-शय्याक्रोश-वध-याचनालाभ-रोग-तृणस्पर्श-मल-सत्कार-पुरस्कार-प्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥९॥ सूक्ष्मसाम्परायछद्मस्थ-वीतरागयोश्चतुर्दश ॥१०॥

एकादश जिने ॥११॥ बादर-साम्पराये सर्वे ॥१२॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥१३॥ दर्शन-मोहान्तरराययो-रदर्शनालाभौ ॥१४॥ चारित्रमोहे नाग्न्यारति-स्त्री-निषद्याक्रोश-याचना-सत्कारपुरस्काराः ॥१५॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतेः ॥१७॥ सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्म-साम्परायययथाख्यातमिति चारित्रम् ॥१८॥ अनशनाव-मौदर्य-वृत्तिपरिसंख्यान-रसपरित्याग-विविक्त-शय्यासन-कायक्लेशा बाह्यं तपः ॥१९॥ प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्त्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग-ध्यानान्युत्तरम् ॥२०॥ नव-चतुर्दश-पञ्च-द्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥२१॥ आलोचन - प्रतिक्रमण - तदुभय - विवेक - व्युत्सर्ग - तपश्छेद-परिहारोपस्थापनाः ॥२२॥ ज्ञान-दर्शन-चारित्रोपचाराः ॥२३॥ आचार्योपाध्याय-तपस्वि-शैक्ष्य-ग्लान-गण-कुल-संघ-साधु-मनोज्ञानाम् ॥२४॥ वाचना-पृच्छनानुप्रेक्षाम्नाय-धर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ॥२६॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ॥२७॥ आर्त्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि ॥२८॥ परे मोक्षहेतू ॥२९॥ आर्त्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥३०॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥३१॥ वेदनायाश्च ॥३२॥ निदानं च ॥३३॥ तदविरत-देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम् ॥३४॥ हिंसानृत-स्तेय-विषय-संरक्षणेभ्यो

रौद्रमविरत-देशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापायविपाक-संस्थान-विचयाय धर्म्यम् ॥३६॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥ परे केवलिनः ॥३८॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्क-सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-व्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥३९॥ त्र्येक-योगकाययोगायोगानाम् ॥४०॥ एकाश्रये सवितर्कवीचारे पूर्वे ॥४१॥ अवीचारं द्वितीयम् ॥४२॥ वितर्कः श्रुतम् ॥४३॥ वीचारोऽर्थ-व्यञ्जन-योग-सङ्क्रान्तिः ॥४४॥ सम्यग्दृष्टि - श्रावक - विरतानन्तवियोजक - दर्शनमोह-क्षपकोपशमकोपशान्तमोह - क्षपक - क्षीणमोह - जिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जराः ॥४५॥ पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातका निर्ग्रन्थाः ॥४६॥ संयम-श्रुत-प्रतिसेवना-तीर्थ-लिङ्ग-लेश्योपपाद-स्थान-विकल्पतः साध्याः ॥४७॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे नवमोध्यायः ॥९॥

दशमोऽध्यायः

मोहक्षयाज्ज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच्च केवलम् ॥१॥ बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्नकर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः ॥२॥ औपशमिकादि-भव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवल-सम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्ध-च्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥६॥ आविद्धकुलालचक्रवद्-व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥७॥

धर्मास्तिकायाभावात् ॥८॥ क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्र-प्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥९॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

कोटिशतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।
पञ्चाशदष्टौ च सहस्रसंख्यमेतच्छ्रुतं पञ्चपदं नमामि ॥१॥

अरहंत-भासियत्थं, गणहरदेवेहिं गंथियं सव्वं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवहिं सिरसा ॥२॥

अक्षर-मात्र-पद-स्वरहीनं, व्यञ्जन-सन्धि-विवर्जित-रेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं, को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥३॥

दशाध्याये परिच्छिन्ने, तत्त्वार्थे पठिते सति ।
फलं स्यादुपवासस्य, भाषितं मुनिपुङ्गवैः ॥४॥

तत्त्वार्थ-सूत्रकर्तारं, गृद्धपिच्छोपलक्षितम् ।
वन्दे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामि-मुनीश्वरम् ॥५॥

जं सक्कइ तं कीरइ, जं पुण सक्कइ तहेव सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो, पावइ अजरामरं ठाणं ॥६॥

तवयरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीवदयाकरणं ।
अंते समाहिमरणं, चउविह-दुक्खं णिवारेइ ॥७॥

॥ इति तत्त्वार्थसूत्रम् ॥

श्रीजिनसहस्रनाम-स्तोत्रम्

भगवज्जिनसेनाचार्यविरचितम्

प्रस्तावना

अनुष्टुप्छन्दः

स्वयंभुवे [1]नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मनैव तथोद्भूत-वृत्तयेऽचिन्त्य-वृत्तये ।।१।।

नमस्ते जगतां पत्ये लक्ष्मी-भर्त्रे [2]नमो नमः ।
विदांवर! नमस्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर! ।।२।।

[3]काम-शत्रुहणं देवमामनन्ति मनीषिणः ।
[4]त्वामानमत्सुरेण्मौलि-भा-मालाभ्यर्चित-क्रमम् ।।३।।

[5]ध्यान द्रुघण - निर्भिन्न - घन - घाति - महातरुः ।
अनन्त - भव - सन्तान - जयादासी[6]रनन्तजित् ।।४।।

त्रैलोक्य - निर्जयावाप्त - [7]दुर्दर्पमतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजं विजित्यासीज्जिन! मृत्युञ्जयो भवान् ।।५।।

विधूताशेष-संसार-बन्धनो भव्य-बान्धवः ।
त्रिपुरारिस्त्व[8]मीशोऽसि जन्म-मृत्यु-जरान्तकृत् ।।६।।

त्रिकाल-विषयाशेष-तत्त्व-भेदात्त्रिधोत्थितम् ।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रि-नेत्रोऽसि त्वमीशितः ।।७।।

त्वामन्धकान्तकं प्राहुर्मोहान्धासुर-मर्दनात् ।
अर्धं ते नारयो यस्मादर्ध-नारीश्वरोऽस्यतः ।।८।।

---

१. नमस्तुभ्यं संपा- २. नमोऽस्तु ते ३. कर्म- ४. त्वामानुमः सुरेण्मौलिस्रग्मालाऽभ्य- ५. ध्यानदुर्घण ६. दनन्तजित् ७. दुर्दम्य ८. मेवासि

शिवः शिव-पदाध्यासाद् दुरितारि-हरो हरः ।
शङ्करः कृतशं लोके शंभवस्त्वं [1]भवन्सुखे ।।९।।
वृषभोऽसि [2]जगज्ज्येष्ठः पुरुः पुरु-गुणोदयैः ।
नाभेयो नाभि-संभूतेरिक्ष्वाकु-कुल-नन्दनः ।।१०।।
त्वमेकः पुरुष-स्कन्धस्त्वं द्वे लोकस्य लोचने ।
त्वं त्रिधा बुद्ध-सन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रि-ज्ञान-धारकः ।।११।।
चतुःशरण-माङ्गल्य-मूर्तिस्त्वं चतुरस्र-धीः ।
पञ्च-ब्रह्ममयो देव! पावनस्त्वं पुनीहि माम् ।।१२।।
[3]स्वर्गावतरणे तुभ्यं सद्योजातात्मने नमः ।
जन्माभिषेक-वामाय वामदेव! नमोऽस्तु ते ।।१३।।
[4]सुनिष्क्रान्तावघोराय [5]परं प्रशममीयुषे ।
केवल-ज्ञान-संसिद्धावीशानाय नमोऽस्तु ते ।।१४।।
पुरस्तत्पुरुषत्वेन [6]विमुक्ति - पद - भागिने ।
नमस्तत्पुरुषावस्थां भाविनीं तेऽद्य बिभ्रते ।।१५।।
ज्ञानावरण - निर्ह्रासान्नमस्तेऽनन्त - चक्षुषे ।
दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्तेऽ[7]नन्त - दृश्वने ।।१६।।
नमो दर्शन-मोहघ्ने क्षायिकामल-दृष्टये ।
नमश्चारित्र-मोहघ्ने विरागाय महौजसे ।।१७।।
नमस्तेऽनन्त-वीर्याय नमोऽनन्त-सुखात्मने ।
नमस्तेऽनन्त-लोकाय [8]लोकालोकावलोकिने ।।१८।।

---

१. भवत्सुखः २. जगच्छ्रेष्ठः ३. स्वर्गावतारिणे ४. सन्नि- ५. पदं परममीयुषे ६. विमुक्त ७. ऽनन्तदर्शिने/विश्वदृश्वने ८. लोकालोकविलोकिने

नमस्तेऽनन्त-दानाय नमस्तेऽनन्त-लब्धये ।
नमस्तेऽनन्त-भोगाय नमोऽनन्तोपभोगिने ॥१९॥

नमः परम-योगाय नमस्तुभ्यमयोनये ।
नमः परम-पूताय नमस्ते परमर्षये ॥२०॥

नमः परम-विद्याय नमः पर-मतच्छिदे ।
नमः परम-तत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ॥२१॥

नमः परम-रूपाय नमः परम-तेजसे ।
नमः परम-मार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥२२॥

[१]परमर्द्धिजुषे धाम्ने परम-ज्योतिषे नमः ।
नमः पारे-तमःप्राप्त-धाम्ने परतरात्मने ॥२३॥

नमः क्षीण-कलङ्काय क्षीण-बन्ध ! नमोऽस्तु ते ।
नमस्ते क्षीण-मोहाय क्षीण-दोषाय ते नमः ॥२४॥

नमः सुगतये तुभ्यं शोभनां गतिमीयुषे ।
नमस्तेऽतीन्द्रिय-ज्ञान-सुखायानिन्द्रियात्मने ॥२५॥

काय-बन्धन-निर्मोक्षादकायाय नमोऽस्तु ते ।
नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ॥२६॥

अवेदाय नमस्तुभ्य[२]मकषायाय ते नमः ।
नमः परम-योगीन्द्र-वन्दिताङ्घ्रि-द्वयाय ते ॥२७॥

नमः परम-विज्ञान ! नमः परम-संयम !
नमः परम-दृग्दृष्ट-परमार्थाय तायिने ॥२८॥

---

१. परमं भेयुषे नमः २. मकषायात्मने नमः

नमस्तुभ्यमलेश्याय [1]शुक्ललेश्यांशक-स्पृशे ।
नमो भव्येतरावस्था-व्यतीताय विमोक्षिणे ॥२९॥

संज्ञ्यसंज्ञि-द्वयावस्था-व्यतिरिक्तामलात्मने ।
नमस्ते वीत-संज्ञाय नमः क्षायिक-दृष्टये ॥३०॥

अनाहाराय तृप्ताय नमः परम-भाजुषे ।
व्यतीताशेष-दोषाय भवाब्धेः पारमीयुषे ॥३१॥

अजराय नमस्तुभ्यं नमस्ते [2]स्तादजन्मने ।
अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलयाक्षरात्मने ॥३२॥

अलमास्तां गुण-स्तोत्रमनन्तास्तावका गुणाः ।
त्वां नाम-स्मृतिमात्रेण पर्युपासिसिषामहे ॥३३॥

एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्या परमया सुधीः ।
पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्रं पाप-शान्तये ॥३४॥

इति जिनसहस्रनामस्तोत्रप्रस्तावना

प्रथमशतकम्

प्रसिद्धाष्ट-सहस्रेद्ध-लक्षणं त्वां गिरां पतिम् ।
नाम्नामष्ट-सहस्रेण तोष्टुमोऽभीष्ट-सिद्धये ॥१॥

श्रीमान् स्वयंभूर्वृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः ।
स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥२॥

विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः ।
विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनश्वरः ॥३॥

१. शुद्ध २. वीतजन्मने/ऽतीतजन्मने

विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः ।
विश्वव्यापी [1]विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ।।४।।

विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः ।
विश्वदृग्विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ।।५।।

जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः ।
अनन्तजिदचिन्त्यात्मा भव्य-बन्धुरबन्धनः ।।६।।

युगादि-पुरुषो ब्रह्मा पञ्च-ब्रह्ममयः शिवः ।
परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ।।७।।

स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्म-योनिरयोनिजः ।
[2]मोहारिर्विजयी जेता धर्म-चक्री दयाध्वजः ।।८।।

प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः ।
ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ।।९।।

सिद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।
सिद्धसिद्धान्तविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ।।१०।।

सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोऽ[3]जर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ।।११।।

विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ।।१२।।

इति श्रीमदादिशतम्

---

१. विधुर्वेधाः २. मोहारिविजयी ३. यज्यो

द्वितीयशतकम्

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।
पूतात्मा परम-ज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥१॥
श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥२॥
अनन्त-दीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः ।
मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥३॥
निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः ।
अचल-स्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥४॥
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्याय-शास्त्रकृत् ।
शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्म-तीर्थकृत् ॥५॥
वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतु-र्वृषायुधः ।
वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥६॥
हिरण्य-नाभिर्भूतात्मा भूतभृद् भूतभावनः ।
प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥७॥
हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोऽभवः ।
स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः ॥८॥
सर्वादिः [१]सर्वदिक्सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित् सर्वलोकजित् ॥९॥
सुगतिः सुश्रुतः [२]सुश्रुत् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः ।
विश्रुतो विश्वतःपादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥१०॥

१. सर्वदृक् २. सुश्रुक्

सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
भूत-भव्य-भवद्भर्ता विश्व-विद्या-महेश्वरः ॥११॥

इति दिव्यादिशतम्

तृतीयशतकम्

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः प्रष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठ-धीः ।
स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठोऽणिष्ठो गरिष्ठ-गीः ॥१॥

[१]विश्वभृद् विश्वसृड् विश्वेड् विश्वभुग्विश्व-नायकः ।
[२]विश्वासीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ॥२॥

विभावो विभयो वीरो विशोको [३]विजरो जरन् ।
विरागो विरतोऽसङ्गो विविक्तो वीत-मत्सरः ॥३॥

विनेय - जनता - बन्धुर्विलीनाशेष - कल्मषः ।
वियोगो योगविद्विद्वान् विधाता सुविधिः सुधीः ॥४॥

क्षान्तिभाक् पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक् सलिलात्मकः ।
वायु-मूर्तिरसङ्गात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधक् ॥५॥

सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्राम-पूजितः ।
ऋत्विग्यज्ञ-पति[४]र्यज्यो यज्ञाङ्गममृतं हविः ॥६॥

व्योम-मूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः ।
सोम-मूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्य-मूर्तिर्महाप्रभः ॥७॥

मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्र-मूर्तिरनन्तगः ।
स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वन्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥८॥

---

१. विश्वमुड् २. विश्वाशी- ३. विजरोऽजरन ४. याज्यो

कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृत-क्रतुः ।
नित्यो मृत्युञ्जयोऽमृत्युरमृतात्मामृतोद्भवः ॥९॥

ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्म-संभवः ।
महाब्रह्म-पतिर्ब्रह्मेड् महाब्रह्म-पदेश्वरः ॥१०॥

सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञान-धर्म-दम-प्रभुः ।
प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराण-पुरुषोत्तमः ॥११॥

इति स्थविष्ठादिशतम्

चतुर्थ-शतकम्

महाशोक-ध्वजोऽशोकः कः स्रष्टा पद्म-विष्टरः ।
पद्मेशः पद्म-संभूतिः पद्म-नाभिरनुत्तरः ॥१॥

पद्म-योनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।
स्तवनार्हो हृषीकेशो जित-जेयः कृत-क्रियः ॥२॥

गणाधिपो गण-ज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः ।
गुणाकरो गुणाम्भोधिर्गुणज्ञो [१]गुणनायकः ॥३॥

गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्य-गीर्गुणः ।
शरण्यः पुण्य-वाक्पूतो वरेण्यः पुण्य-नायकः ॥४॥

अगण्यः पुण्य-धीर्गुण्यः पुण्यकृत्पुण्य-शासनः ।
धर्मारामो गुण-ग्रामः पुण्यापुण्य-निरोधकः ॥५॥

पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीत-कल्मषः ।
निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥६॥

---

१. गण

निर्निमेषो निराहारो निष्क्रियो निरुपप्लवः ।
निष्कलङ्को निरस्तैना निर्धूतागा निरास्रवः ॥७॥

विशालो विपुल-ज्योतिरतुलोऽचिन्त्य-वैभवः ।
सुसंवृतः सुगुप्तात्मा [1]सुभुत्सुनय-तत्त्ववित् ॥८॥

एक-विद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः ।
धीशो विद्यानिधिः साक्षी [2]विनेता विहतान्तकः ॥९॥

पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः ।
त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ॥१०॥

कविः पुराण-पुरुषो वर्षीयानृषभः पुरुः ।
प्रतिष्ठा-[3]प्रसवो हेतुर्भुवनैक-पितामहः ॥११॥

इति महादिशतम्

पञ्चमशतकम्

श्रीवृक्ष-लक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः ।
निरक्षः पुण्डरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥१॥

सिद्धिदः सिद्ध-संकल्पः सिद्धात्मा सिद्धसाधनः ।
बुद्ध-बोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्धिकः ॥२॥

वेदाङ्गो वेदविद्वेद्यो जात-रूपो विदांवरः ।
वेद-वेद्यः स्व-संवेद्यो विवेदो वदतांवरः ॥३॥

अनादि-निधनो व्यक्तो व्यक्तवाग् व्यक्त-शासनः ।
युगादिकृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥४॥

१. सुभृत्- २. विजेता ३. प्रभवो

अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक् ।
अनिन्द्रियोऽहमिन्द्राच्र्यो महेन्द्र-महितो महान् ।।५।।

उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भव-तारकः ।
अगाह्यो गहनं गुह्यं परार्ध्यः परमेश्वरः ।।६।।

अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धिः समग्रधीः ।
प्राग्र्यः प्राग्रहरोऽभ्यग्रः प्रत्यग्रोऽग्र्योऽग्रिमोऽग्रजः।।७।।

महातपा महातेजा महोदर्को महोदयः ।
महायशा महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ।।८।।

महाधैर्यो महावीर्यो महासंपन्महाबलः ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ।।९।।

महामतिर्महानीतिर्महाक्षान्तिर्महादयः ।
महाप्राज्ञो महाभागो महानन्दो महाकविः ।।१०।।

महामहा महाकीर्तिर्महाकान्तिर्महावपुः ।
महादानो महाज्ञानो [१]महायोगो महागुणः ।।११।।

महामहपतिः प्राप्त-महाकल्याण-पञ्चकः ।
महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ।।१२।।

इति श्रीवृक्षादिशतम्

---

१. महायोगी

षष्ठशतकम्

महामुनिर्महामौनी [1]महाध्यानो महादमः ।
महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥१॥
महाव्रत-पतिर्मह्यो महाकान्ति-धरोऽधिपः ।
महामैत्री-मयोऽमेयो महोपायो महोमयः ॥२॥
महाकारुणिको मन्ता महामन्त्रो महायतिः ।
महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः ॥३॥
[2]महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् ।
महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदयः ॥४॥
महाक्लेशाङ्कुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।
महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥५॥
महाभवाब्धि-संतारी महामोहाद्रि-सूदनः ।
महागुणाकरः क्षान्तो महायोगीश्वरः शमी ॥६॥
महाध्यानपतिर्ध्यात-[3]महाधर्मा महाव्रतः ।
महाकर्मारिहात्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥७॥
सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः ।
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥८॥
सर्व-योगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः ।
दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥९॥
प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः ।
प्रक्षीण-बन्धः कामारिः क्षेमकृत् क्षेमशासनः ॥१०॥

---

१. महाध्यानी २. महायज्ञधारी ३.महाधर्मो

प्रणवः [1]प्रणयः प्राणः प्राणदः [2]प्राणतेश्वरः ।
प्रमाणं [3]प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥११॥

आनन्दो नन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः ।
कामहा कामदः काम्यः काम-धेनुररिञ्जयः ॥१२॥

इति महामुन्यादिशतम्

सप्तमशतकम्

[4]असंस्कृत-सुसंस्कारः [5]प्राकृतो वैकृतान्तकृत् ।
अन्तकृत्कान्तगुः कान्तश्चिन्तामणिरभीष्टदः ॥१॥

अजितो जित-कामारिरमितोऽमित-शासनः ।
जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितान्तकः ॥२॥

जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभि-स्वनः ।
महेन्द्र-वन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ॥३॥

नाभेयो [6]नाभिजोऽजातः सुव्रतो मनुरुत्तमः ।
अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोऽधिगुरुः सुगीः ॥४॥

सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः ।
विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥५॥

क्षेमी क्षेमङ्करोऽक्षय्यः क्षेम-धर्म-पतिः क्षमी ।
अग्राह्यो ज्ञान-निग्राह्यो ध्यान-गम्यो निरुत्तरः ॥६॥

सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥७॥

---

१. प्रणतः २. प्रणतेश्वरः ३. प्रणधिर्दक्षो ४. असंस्कृतः सुसंस्कारः ५. असंस्कृत-सुसंस्कारोऽप्राकृतो ६. नाभिजो जातसुव्रतो

सत्यात्मा सत्य-विज्ञानः सत्य-वाक्सत्य-शासनः ।
सत्याशीः सत्य-सन्धानः सत्यः सत्य-परायणः ॥८॥

स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः ।
[1]अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥९॥

सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।
सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥१०॥

सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् ।
सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता लोकाध्यक्षो दमेश्वरः ॥११॥

इति असंस्कृतादिशतम्

अष्टमशतकम्

बृहद्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदार-धीः ।
मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ॥१॥

नैक-रूपो नयोत्तुङ्गो नैकात्मा नैक-धर्मकृत् ।
अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृत-लक्षणः ॥२॥

ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः ।
पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेम-गर्भः सुदर्शनः ॥३॥

लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो द्रढीयानिन ईशिता ।
मनोहरो [2]मनोज्ञाङ्गो धीरो गम्भीर-शासनः ॥४॥

धर्म-यूपो दया-यागो धर्म-नेमिर्मुनीश्वरः ।
धर्म-चक्रायुधो देवः कर्महा धर्म-घोषणः ॥५॥

---

१. अणु २. मनोज्ञार्हो

अमोघवागमोघाज्ञो निर्ममोऽमोघ-शासनः ।
सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥६॥

सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः ।
अलेपो निष्कलङ्कात्मा वीतरागो गत-स्पृहः ॥७॥

वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः ।
प्रशान्तोऽनन्त-धामर्षिर्मङ्गलं मलहानघः ॥८॥

अनीदृगुपमाभूतो दिष्टिर्दैवमगोचरः ।
अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैक-तत्त्वदृक् ॥९॥

अध्यात्मगम्योऽगम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः ।
सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकाल-विषयार्थदृक् ॥१०॥

शङ्करः शंवदो दान्तो दमी क्षान्ति-परायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः [1]परात्परः ॥११॥

त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रि-[2]जगन्मङ्गलोऽदयः ।
त्रिजगत्पति - पूज्याङ्घ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥१२॥

इति बृहदादिशतम्

नवमशतकम्

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोक-धाता दृढ-व्रतः ।
सर्व-लोकातिगः पूज्यः सर्व-लोकैक-सारथिः ॥१॥

पुराणः पुरुषः पूर्वः कृत-पूर्वाङ्ग-विस्तरः ।
आदि-देवः पुराणाद्यः पुरु-देवोऽधिदेवता ॥२॥

---

१. परापरः २. जगन्मङ्गलोदयः

युगमुख्यो युग-ज्येष्ठो युगादि-स्थिति-देशकः ।
कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥३॥

कल्याणप्रकृति[1]र्दीप-कल्याणात्मा विकल्मषः ।
विकलङ्कः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥४॥

देव-देवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ॥५॥

चराचर-गुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढ-गोचरः ।
सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलन-सप्रभः ॥६॥

आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।
सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्य-कोटि-सम-प्रभः ॥७॥

तपनीय-निभस्तुङ्गो बालार्काभोऽनल-प्रभः ।
संध्याभ्र-बभ्रुर्हेमाभस्तप्त-चामीकरच्छविः ॥८॥

निष्टप्त-कनकच्छायः कनत्काञ्चन-सन्निभः ।
हिरण्य-वर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भ-निभ-प्रभः ॥९॥

द्युम्नाभो [2]जात-रूपाभस्तप्त-जाम्बूनद-द्युतिः ।
सुधौत-कलधौत-श्रीः प्रदीप्तो हाटक-द्युतिः ॥१०॥

शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः ।
शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥११॥

शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः ।
शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्तिमान् कामितप्रदः ॥१२॥

---

१. दीप्त- २. जातरूपाभो दीप्त-

[1]श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
[2]सुस्थिरः [3]स्थावरः स्थास्नुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः ॥१३॥

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम्

दशमाष्टोत्तरशतम्

दिग्वासा [4]वातरसनो निर्ग्रन्थेशो [5]दिगम्बरः ।
निष्किञ्चनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥१॥

तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शील-सागरः ।
तेजोमयोऽमित-ज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोऽपहः ॥२॥

जगच्चूडा-मणिर्दीप्तः शंवान्विघ्न-विनायकः ।
कलिघ्नः कर्म-शत्रुघ्नो लोकालोक-प्रकाशकः ॥३॥

अनिद्रालुरतन्द्रालुर्जागरूकः प्रमामयः ।
लक्ष्मी-पतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजा-हितः ॥४॥

मुमुक्षुर्बन्धमोक्षज्ञो जिताक्षो जित-मन्मथः ।
प्रशान्त-रस-शैलूषो भव्य-पेटक-नायकः ॥५॥

मूल-कर्त्ताखिल-ज्योतिर्मलघ्नो मूल-कारणः ।
आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥६॥

प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्व-भाववित् ।
सुतनुस्तनु-निर्मुक्तः सुगतो हत-दुर्नयः ॥७॥

श्रीशः श्री-श्रित-पादाब्जो वीत-भीरभयङ्करः ।
उत्सन्न-दोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोक-वत्सलः ॥८॥

---

१. श्रियांनिधि- २. सुस्थितः ३. स्थविरः ४. वातरशनो ५. निरम्बरः

लोकोत्तरो लोक-पतिर्लोक-चक्षुरपार-धीः ।
धीर-धीर्बुद्ध-सन्मार्गः शुद्धः सूनृत-पूतवाक् ।।९।।

प्रज्ञा-पारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः ।
भदन्तो भद्रकृद् भद्रः कल्प-वृक्षो वर-प्रदः ।।१०।।

समुन्मूलित-कर्मारिः कर्म-काष्ठाशुशुक्षणिः ।
कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेय-विचक्षणः ।।११।।

अनन्त - शक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारि - स्त्रिलोचनः ।
त्रि-नेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवल-ज्ञान-वीक्षणः ।।१२।।

समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दया-निधिः ।
सूक्ष्मदर्शी जितानङ्गः कृपालुर्धर्म-देशकः ।।१३।।

शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्य-राशिरनामयः ।
धर्मपालो जगत्पालो धर्म-साम्राज्य-नायकः ।।१४।।

इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम्

उपसंहार

धाम्नांपते ! तवामूनि नामान्यागम-कोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ।।१।।

गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः ।
स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्ट-फलं भजेत् ।।२।।

त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक् ।
त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ।।३।।

त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्वि-रूपोपयोगभाक् ।
त्वं त्रिरूपैक-मुक्त्यङ्गं स्वोत्थानन्त-चतुष्टयः ।।४।।

त्वं पञ्च-ब्रह्म-तत्त्वात्मा पञ्च-कल्याण-नायकः ।
षड्भेद-भाव-तत्त्वज्ञस्त्वं सप्त-नय-सङ्ग्रहः ॥५॥

दिव्याष्ट-गुण-मूर्तिस्त्वं नव-केवल-लब्धिकः ।
दशावतार-निर्द्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ! ॥६॥

युष्मन्नामावली - दृब्ध - विलसत्स्तोत्र - मालया ।
भवन्तं [1]परिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥७॥

इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः ।
यः [2]सत्पाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याण-भाजनम् ॥८॥

ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमान् पठतु पुण्यधीः ।
पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥९॥

स्तुतिः पुण्यगुणोत्कीर्तिः स्तोता भव्यः प्रसन्नधीः ।
निष्ठितार्थो भवान् स्तुत्यः फलं नैःश्रेयसं सुखम् ॥१०॥

स्तुत्वेति मघवा देवं चराचर-जगद्गुरुम् ।
ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥११॥

शार्दूलविक्रीडितम्

यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित्,
ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्याता स्वयं कस्यचित् ।
यो नन्तॄन् नयते नमस्कृतिमलं नन्तव्य-पक्षेक्षणः,
स श्रीमान् जगतां त्रयस्य च गुरुर्देवः पुरुः पावनः ॥१२॥

तं देवं त्रिदशाधिपार्चित-पदं घाति-क्षयानन्तरं,
प्रोत्थानन्त-चतुष्टयं जिनमिनं भव्याब्जिनीनामिनम् ।

---

१. वरिवस्यामः २. संपाठं

मान-स्तम्भ-विलोकनानत-जगन्मान्यं त्रिलोकी-पतिं,
प्राप्ताचिन्त्य-बहिर्विभूतिमनघं भक्त्या प्रवन्दामहे ।।१३।।

इति श्रीमज्जिनसहस्रनामस्तोत्रम्

श्रीआदिनाथाय नमः

भक्तामरस्तोत्रम्

श्रीमन्मानतुङ्गाचार्य-विरचितम्

वसन्ततिलका

भक्तामर - प्रणतमौलि - मणिप्रभाणा-
मुद्द्योतकं दलित-पापतमो-वितानम् ।
सम्यक्प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
वालम्बनं [१]भवजले पततां जनानाम् ।।१।।

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभिः सुरलोकनाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय - चित्त - हरैरुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ।।२।।

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपाद[२]पीठ !
स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगत - त्रपोऽहम् ।
बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ।।३।।

वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र ! शशाङ्ककान्तान्,
कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।

१. भवनिधौ २. पीठं

कल्पान्त - कालपवनोद्धत - नक्र - चक्रं,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥४॥

सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश!
कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्याऽत्मवीर्यमविचार्य [१]मृगी मृगेन्द्रं,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहास-धाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्रचारुकलिका - निकरैकहेतु ॥६॥

त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं,
पापं क्षणात् क्षय-मुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्त - लोक - मलिनीलमशेषमाशु,
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥७॥

मत्वेति नाथ! तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनुधियाऽपि तव [२]प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु,
मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूद-बिन्दुः ॥८॥

आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्त-दोषं,
त्वत्सङ्कथाऽपि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥९॥

---

१. मृगो २. प्रसादात्

नात्यद्भुतं भुवन-भूषण! भूतनाथ!
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति? ॥१०॥

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पयः शशिकरद्युति-दुग्धसिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क इच्छेत्? ॥११॥

यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,
निर्मापितस्त्रिभुवनैक - ललामभूत!
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्रहारि,
निःशेष - निर्जित - जगत्त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलङ्क-मलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम् ॥१३॥

सम्पूर्ण - मण्डल - शशाङ्क - कलाकलाप-
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर! नाथमेकं,
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥१४॥

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि-
र्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् ।

कल्पान्त - काल - मरुता चलिताचलेन,
किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ? ॥१५॥

निर्धूम-[1]वर्तिरपवर्जित- तैलपूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ॥१६॥

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदर - निरुद्ध - महाप्रभावः,
सूर्यातिशायि-महिमाऽसि मुनीन्द्र ! लोके ॥१७॥

नित्योदयं दलित- मोह- महान्धकारं,
गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्प-कान्ति,
विद्योतयज्जगदपूर्व - शशाङ्क - बिम्बम् ॥१८॥

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा ?
युष्मन्मुखेन्दु-दलितेषु तमःसु नाथ ! ।
निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके,
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभार-नम्रैः ॥१९॥

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
[2]तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं,
[3]नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥

---

१. वर्तिरपि २. तेजो महामणिषु ३. काचोद्भवेषु न तथैव विकासकत्वम्

मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ! भवान्तरेऽपि ॥२१॥

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्त्ररश्मिं,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥

त्वामामनन्ति मुनयः परमं [1]पुमांस-
मादित्यवर्णममलं तमसः [2]पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र! पन्थाः ॥२३॥

त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं,
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदित - योगमनेकमेकं,
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥२४॥

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्-
त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्रय-शङ्करत्वात् ।
धातासि धीर! शिवमार्गविधेर्विधानाद्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन्! पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥

---

१. पवित्र- २. परस्तात्

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति - हराय नाथ!
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।
तुभ्यं [1]नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन! भवोदधि-शोषणाय ।।२६।।

को विस्मयोऽत्र यदि नामगुणैरशेषै-
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश! ।
दोषैरुपात्त - विविधाश्रय - जात - गर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ।।२७।।

उच्चैरशोकतरुसंश्रित- मुन्मयूख-
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त - तमोवितानं,
बिम्बं रवेरिव पयोधर - पार्श्ववर्ति ।।२८।।

सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं,
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्त्ररश्मेः ।।२९।।

कुन्दावदात - चलचामर - चारु - शोभं,
विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम् ।
उद्यच्छशाङ्क - शुचिनिर्झर - वारिधार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ।।३०।।

छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकर[2]प्रतापम् ।

१. नमस्त्रिजगती २. प्रभावम्

मुक्ताफल - प्रकर - जाल - विवृद्ध-शोभं,
प्रख्यापयत् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥३१॥

गम्भीरतार - रव - पूरित - दिग्विभाग-
स्त्रैलोक्यलोक - [१]शुभसङ्गम - [२]भूतिदक्षः ।
सद्धर्मराजजय - घोषण- घोषकः सन्,
खे दुन्दुभि[३]र्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥

मन्दार - सुन्दर - नमेरु - सुपारिजात-
सन्तानकादि - कुसुमोत्कर-वृष्टिरुद्घा ।
गन्धोदबिन्दुशुभ - मन्दमरुत्प्रपाता[४],
दिव्या दिवः पतति ते [५]वचसां ततिर्वा ॥३३॥

[६]शुम्भत्प्रभा-वलय-भूरि-विभा विभोस्ते,
[७]लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्दिवाकर-निरन्तर - भूरि - [८]संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम[९]सौम्या ॥३४॥

स्वर्गापवर्ग- गममार्ग- विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म-तत्त्व-कथनैक- पटुस्त्रिलोक्याः ।
दिव्यध्वनि-र्भवति ते विशदार्थसर्व-
भाषा-स्वभाव-परिणाम-[१०]गुणैः प्रयोज्यः ॥३५॥

उन्निद्रहेमनवपङ्कज - [११]पुञ्जकान्ति,
पर्युल्लसन्नखमयूख - शिखाभिरामौ ।

---

१. सुख/शिव २. भूरिदक्षः ३. र्नदति ४. प्रयाता ५. वयसां ६. चञ्चत्प्रभा ७. लोकत्रयद्युतिमतां ८. संख्यां ९. सौम्याम् १०. गुणप्रयोज्यः ११. पुञ्जकान्ती

पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्रधत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ।।३६।।

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र !
धर्मोपदेशनविधौ न [1]तथा परस्य ।
यादृक् प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि ।।३७।।

श्च्योतन्मदाविल- विलोल - कपोलमूल-
मत्तभ्रमद्भ्रमर - नाद - विवृद्ध - कोपम् ।
ऐरावताभमिभ[2]मुद्धतमापतन्तं,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ।।३८।।

भिन्नेभकुम्भ-गलदुज्ज्वल - शोणिताक्त-
मुक्ताफल- प्रकर - भूषित - भूमिभागः ।
बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ।।३९।।

कल्पान्तकाल - पवनोद्धत - वह्निकल्पं,
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् ।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं,
त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ।।४०।।

रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कण्ठ-नीलं,
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम् ।
आक्रामति [3]क्रमयुगेण निरस्तशङ्क-
स्त्वन्नाम - [4]नागदमनी हृदि यस्य पुंसः ।।४१।।

---

१. तथापरस्य २. मुत्कट ३. क्रमयुगेन ४. नागदमनो

वल्गत्तुरङ्ग - गजगर्जित - भीमनाद-
माजौ बलं बलवता[१]मरि-भूपतीनाम् ।
उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं,
त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ।।४२।।

कुन्ताग्रभिन्न- गजशोणित- वारिवाह-
वेगावतार- तरणातुर- योधभीमे ।
युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षा-
स्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ।।४३।।

अम्भोनिधौ क्षुभितभीषण - नक्र-[२]चक्र-
पाठीनपीठ-भयदोल्वण- वाडवाग्नौ ।
रङ्गत्तरङ्ग - शिखरस्थित - यानपात्रा-
स्त्रासं विहाय [३]भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ।।४४।।

उद्भूतभीषण - जलोदर - भार[४]भुग्नाः,
शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः ।
त्वत्पादपङ्कजरजोऽमृत - दिग्धदेहा,
[५]मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ।।४५।।

आपादकण्ठमुरुशृङ्खल - वेष्टिताङ्गा,
गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः ।
त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ।।४६।।

मत्तद्विपेन्द्र - मृगराज - दवानलाहि-
संग्राम-वारिधि - महोदर - बन्धनोत्थम् ।

१. मपि २. चक्रे ३. तव संस्मरणाद् ४. भग्नाः ५. सद्यो

[1]तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
[2]यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ।।४७।।

स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र! गुणैर्निबद्धां,
भक्त्या मया [3]विविधवर्ण-विचित्रपुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं,
तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ।।४८।।

महावीराष्टक-स्तोत्रम्

कविवर भागचन्द्र

शिखरिणी छन्द

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः,
समं भान्ति ध्रौव्य-व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिताः ।
जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन-परो भानुरिव यो,
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ।।१।।

अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्द-रहितं,
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला,
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ।।२।।

नमन्नाकेन्द्राली-मुकुट-मणि-भा-जाल-जटिलं,
लसत्पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनुभृताम् ।
भवज्ज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि,
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ।।३।।

---

१. तस्य प्रणाश- २. यस्तेऽनिशं ३. रुचिर-

यदर्चा-भावेन प्रमुदित-मना दर्दुर इह,
क्षणादासीत्स्वर्गी गुण-गण-समृद्धः सुख-निधिः।
लभन्ते सद्भक्ताः शिव-सुख-समाजं किमु तदा,
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥४॥

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत- तनुर्ज्ञान- निवहो,
विचित्रात्माप्येको नृपति-वर-सिद्धार्थ-तनयः।
अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोऽद्भुत-गति-
र्महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥५॥

यदीया वाग्गङ्गा विविध-नय-कल्लोल-विमला,
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति।
इदानीमप्येषा बुध-जन-मरालैः परिचिता,
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥६॥

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवन-जयी काम-सुभटः,
कुमारावस्थायामपि निज-बलाद्येन विजितः।
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशम-पद-राज्याय स जिनो,
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥७॥

महामोहातङ्क - प्रशमन - पराकस्मिक - भिषङ्,
निरापेक्षो बन्धुर्विदित-महिमा मङ्गलकरः।
शरण्यः साधूनां भव-भय-भृतामुत्तमगुणो,
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ॥८॥

अनुष्टुपूछन्दः

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतम् ।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥९॥

छहढाला

(कविवर दौलतरामजी कृत)

मंगलाचरण (सोरठा)

तीन भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता ।
शिवस्वरूप शिवकार, नमहुँ त्रियोग सम्हारिकै ॥

पहली ढाल

चौपई (१५ मात्रा)

जे त्रिभुवन में जीव अनन्त, सुख चाहैं दुख तैं भयवन्त ।
तातैं दुखहारी सुखकार, कहैं सीख गुरु करुणा धार ॥१॥

ताहि सुनो भवि मन थिर आन, जो चाहो अपनो कल्याण ।
मोह-महामद पियो अनादि, भूल आप को भरमत वादि ॥२॥

तास भ्रमण की है बहु कथा, पै कछु कहूँ कही मुनि यथा ।
काल अनन्त निगोद मँझार, बीत्यो एकेन्द्री तन धार ॥३॥

एक स्वास में अठदश बार, जन्म्यो मर्यो भर्यो दुखभार ।
निकसि भूमि जल पावक भयो, पवन प्रत्येक वनस्पति थयो ॥४॥

दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणी, त्यों पर्याय लही त्रसतणी ।
लट पिपील अलि आदि शरीर, धर-धर मर्यो सही बहुपीर ॥५॥

कबहूँ पंचेन्द्रिय पशु भयो, मन बिन निपट अज्ञानी थयो ।
सिंहादिक सैनी ह्वै क्रूर, निबल पशु हति खाये भूर ॥६॥

कबहूँ आप भयो बलहीन, सबलनि करि खायो अति दीन ।
छेदन भेदन भूख पियास, भारवहन हिम आतप त्रास ॥७॥

वधबन्धन आदिक दुख घने, कोटि जीभ तैं जात न भने ।
अति संक्लेश भाव तैं मर्यो, घोर श्वभ्रसागर में पर्यो ॥८॥

तहाँ भूमि परसत दुख इसो, बिच्छू सहस डसैं नहि तिसो ।
तहाँ राधश्रोणित वाहिनी, कृमिकुल कलित देहदाहिनी ॥९॥
सेमर तरु दल जुत असिपत्र, असि ज्यौं देह विदारैं तत्र ।
मेरुसमान लोह गलि जाय, ऐसी शीत उष्णता थाय ॥१०॥
तिल-तिल करैं देह के खण्ड, असुर भिड़ावैं दुष्ट प्रचण्ड ।
सिंधुनीरतैं प्यास न जाय, तो पण एक न बूँद लहाय ॥११॥
तीन लोक को नाज जु खाय, मिटै न भूख कणा न लहाय ।
ये दुख बहु सागर लौं सहै, करमजोग तैं नरगति लहै ॥१२॥
जननी उदर वस्यौ नव मास, अंग-सकुचतैं पाई त्रास ।
निकसत जे दुख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर ॥१३॥
बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणी रत रह्यो ।
अर्धमृतक सम बूढ़ापनो, कैसे रूप लखै आपनो ॥१४॥
कभी अकामनिर्जरा करै, भवनत्रिक में सुरतन धरै ।
विषयचाह-दावानल दह्यो, मरत विलाप करत दुख सह्यो ॥१५॥
जो विमानवासी हूँ थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुख पाय ।
तहँतैं चय थावर-तन धरै, यों परिवर्तन पूरे करै ॥१६॥

दूसरी ढाल

(पद्धरि छन्द)

ऐसे मिथ्यादृगज्ञानचरण, वश भ्रमत भरत दुख जन्ममरण ।
तातैं इनको तजिये सुजान, सुन तिन संक्षेप कहूँ बखान ॥१॥
जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधैं तिन माहि विपर्ययत्व ।
चेतन को है उपयोगरूप, विनमूरत चिन्मूरत अनूप ॥२॥

पुद्‌गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतैं न्यारी है जीव चाल ।
ताकों न जान विपरीत मान, करि करै देह में निज पिछान ॥३॥

मैं सुखी दुखी मैं रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव ।
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन ॥४॥

तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान ।
रागादि प्रगट जे दुःख दैन, तिन ही को सेवत गिनत चैन ॥५॥

शुभ-अशुभ बंध के फल मँझार, रति अरति करै निजपद विसार ।
आतमहित हेतु विरागज्ञान, ते लखै आपको कष्टदान ॥६॥

रोकी न चाह निज शक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय ।
याही प्रतीतिजुत कछुक ज्ञान, सो दुखदायक अज्ञान जान ॥७॥

इन जुत विषयनि में जो प्रवृत्त, ताको जानों मिथ्याचरित्त ।
यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अब जे गृहीत सुनिये सुतेह ॥८॥

जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव, पोषै चिर दर्शनमोह एव ।
अन्तर रागादिक धरैं जेह, बाहर धन अम्बरतैं सनेह ॥९॥

धारैं कुलिंग लहि महत भाव, ते कुगुरु जन्मजल उपल नाव ।
जे रागद्वेष मल करि मलीन, वनिता गदादिजुत चिह्न चीन ॥१०॥

ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव, शठ करत न तिन भवभ्रमण छेव ।
रागादि भावहिंसा समेत, दर्वित त्रस थावर मरण खेत ॥११॥

जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुधर्म, तिन सरधै जीव लहै अशर्म ।
याकूँ गृहीत मिथ्यात्व जान, अब सुन गृहीत जो है अज्ञान ॥१२॥

एकान्तवाद दूषित समस्त, विषयादिक पोषक अप्रशस्त ।
कपिलादि-रचित श्रुत को अभ्यास, सो है कुबोध बहु देन त्रास ॥१३॥

जो ख्याति लाभ पूजादि चाह, धरि करन विविधविध देहदाह।
आतम-अनात्म के ज्ञानहीन, जे जे करनी तन करन छीन ॥१४॥

ते सब मिथ्याचारित्र त्याग, अब आतम के हित पन्थ लाग।
जगजालभ्रमण को देहु त्याग, अब दौलत निज आतम सुपाग ॥१५॥

तीसरी ढाल

(नरेन्द्र/जोगीरासा छन्द)

आतम को हित है सुख सो सुख, आकुलता बिन कहिये ।
आकुलता शिव माँहि न तातैं, शिवमग लाग्यौ चहिये ॥
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरन शिव - मग सो दुविध विचारो ।
जो सत्यारथ - रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो ॥१॥

परद्रव्यन तैं भिन्न आप में, रुचि सम्यक्त्व भला है ।
आपरूप को जानपनो सो, सम्यग्ज्ञान कला है ॥
आपरूप में लीन रहे थिर, सम्यक् चारित सोई ।
अब व्यवहार मोक्ष-मग सुनिये, हेतु नियत को होई ॥२॥

जीव अजीव तत्त्व अरु आस्रव, बन्ध रु संवर जानो ।
निर्जर मोक्ष कहे जिन तिन को, ज्यों का त्यों सरधानो ॥
है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप बखानो ।
तिनको सुन सामान्य-विशेषैं, दृढ़ प्रतीति उर आनो ॥३॥

बहिरातम अन्तर - आतम, परमातम जीव त्रिधा है ।
देह - जीव को एक गिनै, बहिरातम तत्त्व मुधा है ॥
उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के, अन्तर आतम ज्ञानी ।
द्विविध संग बिन शुधउपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी ॥४॥

मध्यम अन्तर आतम हैं जे, देशव्रती अनगारी ।
जघन कहे अविरत समदृष्टि, तीनों शिव-मगचारी ॥

सकल-निकल परमातम द्वैविध, तिन में घाति निवारी ।
श्री अरहंत सकल परमातम, लोकालोक निहारी ॥५॥
ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्म-मल वर्जित सिद्ध महन्ता ।
ते हैं निकल अमल परमातम, भोगें शर्म अनन्ता ॥
बहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तर-आतम हूजै ।
परमातम को ध्याय निरन्तर, जो निज आनन्द पूजै ॥६॥
चेतनता बिन सो अजीव हैं, पंच भेद ताके हैं ।
पुद्‌गल पंच वरन रस गन्ध दो, फरस वसू जाके हैं ॥
जिय पुद्‌गल को चलन सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी ।
तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन बिन मूर्ति निरूपी ॥७॥
सकल द्रव्य को वास जास में, सो आकाश पिछानो ।
नियत वर्तना निशि-दिन सो, व्यवहार काल परिमानो ॥
यों अजीव अब आस्रव सुनिये, मन-वच-काय त्रियोगा ।
मिथ्या अविरति अरु कषाय, परमाद सहित उपयोगा ॥८॥
ये ही आतम के दुख कारण, तातैं इनको तजिये ।
जीव प्रदेश बँधे-विधि सौं, सो बन्धन कबहुँ न सजिये ॥
शम-दम तैं जो कर्म न आवैं, सो संवर आदरिये ।
तप-बल तैं विधि झरन निर्जरा, ताहि सदा आचरिये ॥९॥
सकल कर्म तैं रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी ।
इहि विधि जो सरधा तत्त्वन की, सो समकित व्योहारी ॥
देव जिनेन्द्र, गुरु परिग्रह बिन, धर्म दयाजुत सारो ।
यहू मान समकित को कारण, अष्ट अंगजुत धारो ॥१०॥
वसु मद टारि निवारि त्रिशठता, षट् अनायतन त्यागो ।
शंकादिक वसु दोष बिना, संवेगादिक चित पागो ॥

अष्ट अंग अरु दोष पचीसों, अब संक्षेप हु कहिये ।
बिन जाने तैं दोष-गुनन को, कैसे तजिये गहिये ।।११।।

जिन-वच में शंका न धारि वृष, भव-सुख-वांछा भानै ।
मुनि-तन मलिन न देख घिनावैं, तत्त्व कुतत्त्व पिछानै ।।
निज-गुण अरु पर-औगुण ढांकै, वा निज धर्म बढ़ावै ।
कामादिक कर वृषतैं चिगते, निजपर को सु दिढ़ावै ।।१२।।

धर्मी सों गौ-वच्छ प्रीति सम, कर जिन-धर्म दिपावै ।
इन गुन तैं विपरीत दोष वसु, तिनको सतत खिपावै ।।
पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय तो न मद ठानै ।
मद न रूप को, मद न ज्ञानको, धनबल को मद भानै ।।१३।।

तप को मद न मद जु प्रभुता को, करै न सो निज जानै ।
मद धारै तो यहि दोष वसु, समकित को मल ठानै ।।
कुगुरु कुदेव कुवृष सेवक की, नहिं प्रशंस उचरै है ।
जिनमुनि जिनश्रुतबिन कुगुरुरादिक तिन्हैं न नमन करै है ।।१४।।

दोष-रहित गुण-सहित सुधी जे, सम्यग्दर्श सजे हैं ।
चरितमोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजे हैं ।।
गेही पै, गृह में न रचे ज्यों, जल तैं भिन्न कमल है ।
नगर-नारि को प्यार यथा, कादे में हेम अमल है ।।१५।।

प्रथम नरक बिन षट् भू ज्योतिष, वान भवन षँढ नारी ।
थावर विकलत्रय पशु में नहि, उपजत समकित धारी ।।
तीन लोक तिहुँ काल माँहि नहि, दर्शन सम सुखकारी ।
सकल धरम को मूल यही, इस बिन करनी दुखकारी ।।१६।।

मोक्षमहल की परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान-चरित्रा ।
सम्यक्ता न लहै सो दर्शन, धारौ भव्य पवित्रा ।।

‘दौल’ समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै ।
यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहि होवै ।।१७।।

चौथी ढाल

दोहा

सम्यक श्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यग्ज्ञान ।
स्वपर अर्थ बहु धर्मजुत, जो प्रगटावन भान ।।१।।

रोला

सम्यक् साथै ज्ञान होय, पै भिन्न अराधौ ।
लक्षण श्रद्धा जान, दुहू में भेद अवाधौ ।।
सम्यक् कारण जान, ज्ञान कारज है सोई ।
युगपद् होते हू, प्रकाश दीपक तैं होई ।।२।।
तास भेद दो हैं परोक्ष, परतछि तिन माँहीं ।
मति श्रुत दोय परोक्ष, अक्ष मन तैं उपजाहीं ।।
अवधिज्ञान मनपर्जय, दो हैं देश प्रतच्छा ।
द्रव्य क्षेत्र परिमाण लिये, जानैं जिय स्वच्छा ।।३।।
सकल द्रव्य के गुन अनन्त, परजाय अनन्ता ।
जानै एकै काल प्रगट, केवलि भगवन्ता ।।
ज्ञान समान न आन, जगत में सुख को कारण ।
इह परमामृत जन्म-जरा-मृतु रोग निवारण ।।४।।
कोटि जन्म तप तपैं, ज्ञान बिन कर्म झरैं जे ।
ज्ञानी के छिन माँहि, गुप्ति तैं सहज टरैं ते ।।
मुनिव्रत धार अनन्त बार, ग्रीवक उपजायो ।
पै निज आतम ज्ञान बिना, सुख लेश न पायो ।।५।।
तातैं जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजै ।
संशय विभ्रम मोह त्याग, आपौ लख लीजै ।।

यह मानुष परजाय, सुकुल सुनिवौ जिनवानी ।
इहविधि गयें न मिले, सुमणि ज्यों उदधि समानी ॥६॥
धन समाज गज बाज, राज तो काज न आवै ।
ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावै ॥
तास ज्ञान को कारण, स्व-पर विवेक बखान्यो ।
कोटि उपाय बनाय, भव्य ताको उर आन्यो ॥७॥
जे पूरब शिव गये, जाहिं अब आगे जैहें ।
सो सब महिमा ज्ञानतनी, मुनिनाथ कहै हैं ॥
विषय चाह दव दाह, जगत जन अरनि दझावै ।
तास उपाय न आन, ज्ञान घनघान बुझावै ॥८॥
पुण्य-पाप फल माँहिं, हरख बिलखौ मत भाई ।
यह पुद्‌गल परजाय, उपजि विनसै थिर थाई ॥
लाख बात की बात, यहै निश्चय उर लावो ।
तोरि सकल जग दन्द फन्द, निज आतम ध्यावो ॥९॥
सम्यग्ज्ञानी होय बहुरि, दृढ़ चारित लीजै ।
एकदेश अरु सकलदेश, तस भेद कहीजै ॥
त्रसहिंसा को त्याग, वृथा थावर न संहारै ।
पर-वधकार कठोर निंद्य, नहिं वयन उचारै ॥१०॥
जल मृतिका बिन और, नाहि कछु गहै अदत्ता ।
निज वनिता बिन सकल, नारि सौं रहै विरत्ता ॥
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै ।
दशदिशि गमन प्रमान ठान, तसु सीम न नाखै ॥११॥
ताहू में फिर ग्राम, गली गृह बाग बजारा ।
गमनागमन प्रमान, ठान अन सकल निवारा ॥

काहू की धन-हानि, किसी जय-हार न चिन्तै ।
देय न सो उपदेश, होय अघ वनिज कृषीतें ॥१२॥

कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै ।
असि धनु हल हिंसोपकरन, नहि दे जस लाधै ॥
राग-द्वेष करतार कथा, कबहूँ न सुनीजै ।
औरहु अनरथदण्ड, हेतु अघ तिन्हैं न कीजै ॥१३॥

धर उर समता भाव, सदा सामायिक करिये ।
परव चतुष्टय माँहि, पाप तजि प्रोषध धरिये ॥
भोग और उपभोग, नियम करि ममत निवारै ।
मुनि को भोजन देय, फेर निज करहि अहारै ॥१४॥

बारह व्रत के अतिचार, पन पन न लगावै ।
मरण समय संन्यास धारि, तसु दोष नशावै ॥
यौं श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावै ।
तहँतैं चय नर जन्म पाय, मुनि ह्वै शिव जावै ॥१५॥

पाँचवीं ढाल
(बारह भावना)

सखी छन्द

मुनि सकलव्रती बड़भागी, भव-भोगन तैं वैरागी ।
वैराग्य उपावन माई, चिन्त्यों अनुप्रेक्षा भाई ॥१॥

इन चिन्तत समरस जागै, जिमि ज्वलन पवन के लागै ।
जब ही जिय आतम जानै, तब ही जिय शिवसुख ठानै ॥२॥

जोवन गृह गो धन नारी, हय गय जन आज्ञाकारी ।
इन्द्रिय भोग छिन थाई, सुरधनु चपला चपलाई ॥३॥

सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि काल दले ते ।
मणि मन्त्र तन्त्र बहु होई, मरते न बचावै कोई ।।४।।

चहुँगति दुख जीव भरे हैं, परिवर्तन पंच करै हैं ।
सब विधि संसार असारा, यामैं सुख नाहि लगारा ।।५।।

शुभ-अशुभ करम फल जेते, भोगे जिय एकहि तेते ।
सुत दारा होय न सीरी, सब स्वारथ के हैं भीरी ।।६।।

जल पय ज्यों जिय तन मेला, पै भिन्न-भिन्न नहि भेला ।
तो प्रगट जुदे धन धामा, क्यों ह्वै इक मिलि सुत रामा ।।७।।

पल रुधिर राध मल थैली, कीकस वसादि तें मैली ।
नव द्वार बहें घिनकारी, अस देह करै किम यारी ।।८।।

जो योगन की चपलाई, तातैं ह्वै आस्रव भाई ।
आस्रव दुखकार घनेरे, बुधिवन्त तिन्हैं निरवेरे ।।९।।

जिन पुण्य-पाप नहि कीना, आतम अनुभव चित दीना ।
तिन ही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके ।।१०।।

निज काल पाय विधि झरना,तासों निज काज न सरना ।
तप करि जो कर्म खपावै, सोई शिवसुख दरसावै ।।११।।

किनहूँ न कर्यो न धरै को, षटद्रव्यमयी न हरै को ।
सो लोक माहि बिन समता, दुख सहै जीव नित भ्रमता ।।१२।।

अन्तिम ग्रीवक लौं की हद, पायो अनन्त बिरियाँ पद ।
पर सम्यग्ज्ञान न लाध्यो, दुर्लभ निज में मुनि साध्यौ ।।१३।।

जे भाव मोह तैं न्यारे, दृग ज्ञान व्रतादिक सारे ।
सो धर्म जबै जिय धारै, तब ही सुख अचल निहारै ।।१४।।

सो धर्म मुनिन करि धरिये, तिनकी करतूति उचरिये ।
ताको सुनिये भवि प्रानी, अपनी अनुभूति पिछानी ॥१५॥

छठी ढाल

(हरिगीतिका)

षट्काय जीव न हनन तैं, सब विधि दरव हिंसा टरी ।
रागादि भाव निवारि तैं, हिंसा न भावित अवतरी ॥
जिनके न लेश मृषा न जल, मृण हू बिना दीयौ गहै ।
अठदश सहस विधि शीलधर चिद्ब्रह्म में नित रमि रहै ॥१॥

अन्तर चतुर्दश भेद बाहिर, संग दशधा तैं टलैं ।
परमाद तजि चउकर मही लखि, समिति ईर्य्या तैं चलैं ॥
जग सुहितकर सब अहितहर, श्रुति सुखद सब संशय हरैं ।
भ्रम-रोग हर जिनके वचन, मुख-चन्द्र तैं अमृत झरैं ॥२॥

छ्यालीस दोष बिना सुकुल, श्रावक तणे घर अशन को ।
लें तप बढ़ावन हेत नहिं तन, पोषते तजि रसन को ॥
शुचि ज्ञान संजम उपकरण, लखि कैं गहैं लखि कैं धरैं ।
निर्जन्तु थान विलोकि तन मल, मूत्र श्लेषम परिहरैं ॥३॥

सम्यक प्रकार निरोधि मन-वच-काय आतम ध्यावते ।
तिन सुथिर-मुद्रा देखि मृगगन, उपल खाज खुजावते ॥
रस रूप गन्ध तथा फरस अरु, शब्द शुभ असुहावने ।
तिन में न राग विरोध, पंचेन्द्रिय जयन पद पावने ॥४॥

समता सम्हारैं थुति उचारैं, वन्दना जिनदेव को ।
नित करैं, श्रुतिरति करैं प्रतिक्रम तजैं तन अहमेव को ॥
जिनके न न्हौन न दन्तधोवन, लेश अम्बर आवरन ।
भू माँहिं पिछली रयनि में, कछु शयन एकाशन करन ॥५॥

इक बार दिन में लें अहार, खड़े अलप निज-पान में ।
कचलोंच करत न डरत परिषह, सों लगे निजध्यान में ॥
अरिमित्र महलमसान कंचनकाँच निन्दन-थुतिकरन ।
अर्घावतारन असि-प्रहारन, में सदा समता धरन ॥६॥
तप तपैं द्वादश, धरैं वृष दश, रतनत्रय सेवैं सदा ।
मुनि साथ में वा एक विचरैं, चहैं नहिं भवसुख कदा ॥
यों है सकलसंजम चरित, सुनिये स्वरूपाचरन अब ।
जिस होत प्रगटै आपनी निधि, मिटै पर की प्रवृत्ति सब ॥७॥
जिन परम पैनी सुबुधि छैनी, डारि अन्तर भेदिया ।
वरणादि अरु रागादितैं, निज भाव को न्यारा किया ॥
निजमाहिं निज के हेतु, निज कर आपको आपै गह्यो ।
गुन गुनी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, मँझार कछु भेद न रह्यो ॥८॥
जहाँ ध्यान ध्याता ध्येय को, न विकल्प वच भेद न जहाँ ।
चिद्भाव कर्म चिदेश करता, चेतना किरिया तहाँ ॥
तीनों अभिन्न अखिन्न शुध, उपयोग की निश्चल दशा ।
प्रगटी, जहाँ दृग-ज्ञान-व्रत, ये तीनधा एकै लशा ॥९॥
परमान-नय-निक्षेप को, न उद्योत अनुभव में दिखै ।
दृग-ज्ञान-सुख-बलमय सदा, नहि आन भाव जु मो विखै ॥
मैं साध्यसाधक मैं अबाधक, कर्म अरु तसु फलनि तैं ।
चितपिण्ड चण्ड अखण्ड सुगुन-करण्ड च्युत पुनि कलनि तैं ॥१०॥
यों चिन्त्य निज में थिर भये,तिन अकथ जो आनन्द लह्यो ।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा, अहमिन्द्र के नाहीं कह्यो ॥
तब ही शुकल ध्यानाग्नि करि चउघाति-विधि-कानन दह्यो ।
सब लख्यो केवलज्ञान करि, भवि लोकको शिवमग कह्यो ॥११॥

पुनि घाति शेष अघाति-विधि छिन माँहिं अष्टम भू बसैं ।
वसु-कर्म विनशै सुगुण वसु, सम्यक्त्व आदिक सब लसैं ॥
संसार खार अपार, पारावार तरि तीरहिं गये ।
अविकार अकल अरूप शुध, चिद्रूप अविनाशी भये ॥१२॥

निज माँहि लोक अलोक, गुण-परजाय प्रतिबिम्बित थये ।
रहि हैं अनन्तानन्त काल, यथा तथा शिव परिणये ॥
धनि धन्य हैं वे जीव नरभव, पाय यह कारज किया ।
तिन ही अनादि भ्रमन पंच प्रकार, तजि वर सुख लिया ॥१३॥

मुख्योपचार दुभेद यौं, बड़भागि रत्नत्रय धरैं ।
अरु धरैंगे ते शिव लहैं, तिन, सुजस-जल जग-मल हरैं ॥
इमि जानि, आलस हानि, साहस ठानि यह सिख आदरो ।
जब लौं न रोग जरा गहै, तब लौं झटिति निज हित करो ॥१४॥

यह राग-आग दहै सदा, तातैं समामृत सेइये ।
चिर भजे विषय-कषाय अब तो, त्याग निजपद बेइये ॥
कहा रच्यो पर-पद में, न तेरो पद यहै, क्यों दुख सहै ।
अब 'दौल' होउ सुखी, स्वपद रचि, दाव मत चूकौ यहै ॥१५॥

दोहा

इक नव वसु इक वर्ष की, तीज शुकल वैशाख ।
कर्‌यो तत्त्व उपदेश यह, लखि 'बुधजन' की भाख ॥१॥

लघुधी तथा प्रमादतैं, शब्द अर्थ की भूल ।
सुधी सुधार पढ़ो सदा, जो पावो भवकूल ॥२॥

भक्तामर स्तोत्र (भाषा)

अनुवादक पं. हेमराज

दोहा—आदिपुरुष आदीश जिन, आदि सुविधि करतार।
धरम-धुरंधर परमगुरु, नमों आदि अवतार ॥

चौपई (१५ मात्रा)

सुर-नत-मुकुट रतन-छवि करैं, अंतर पाप-तिमिर सब हरैं ।
जिनपद वंदों मन वच काय, भव-जल-पतित उधरन-सहाय ॥१॥

श्रुत-पारग इंद्रादिक देव, जाकी थुति कीनी कर सेव ।
शब्द मनोहर अरथ विशाल, तिस प्रभु की वरनों गुन-माल ॥२॥

विबुध-वंद्य-पद मैं मतिहीन, हो निलज्ज थुति-मनसा कीन ।
जल-प्रतिबिंब बुद्ध को गहै, शशि-मंडल बालक ही चहै ॥३॥

गुन-समुद्र तुम गुन अविकार, कहत न सुर-गुरु पावै पार ।
प्रलय-पवन-उद्धत जल-जन्तु, जलधि तिरै को भुज बलवन्तु ॥४॥

सो मैं शक्तिहीन थुति करूँ, भक्ति-भाव-वश कछु नहि डरूँ ।
ज्यों मृगि निज-सुत पालन हेत, मृगपति सन्मुख जाय अचेत ॥५॥

मैं शठ सुधी हँसन को धाम, मुझ तव भक्ति बुलावै राम ।
ज्यों पिक अंब-कली परभाव, मधु-ऋतु मधुर करै आराव ॥६॥

तुम जस जंपत जन छिनमाँहि, जनम जनम के पाप नशाहि ।
ज्यों रवि उगै फटै तत्काल, अलिवत नील निशा-तम-जाल ॥७॥

तव प्रभावतैं कहूँ विचार, होसी यह थुति जन-मन-हार ।
ज्यों जल-कमल पत्रपै परै, मुक्ताफल की द्युति विस्तरै ॥८॥

तुम गुन-महिमा हत-दुख-दोष, सो तो दूर रहो सुख-पोष ।
पाप-विनाशक है तुम नाम, कमल-विकाशी ज्यों रवि-धाम ॥९॥

नहिं अचंभ जो होहिं तुरन्त, तुमसे तुम गुण वरणत सन्त ।
जो अधीन को आप समान, करै न सो निंदित धनवान ॥१०॥

इकटक जन तुमको अविलोय, अवर-विषैं रति करै न सोय ।
को करि क्षीर-जलधि जल पान, क्षार नीर पीवै मतिमान ॥११॥

प्रभु तुम वीतराग गुण-लीन, जिन परमाणु देह तुम कीन ।
हैं तितने ही ते परमाणु, यातैं तुम सम रूप न आनु ॥१२॥

कहाँ तुम मुख अनुपम अविकार, सुर-नर-नाग-नयन-मनहार ।
कहाँ चन्द्र-मण्डल-सकलंक, दिन में ढाक-पत्र सम रंक ॥१३॥

पूरन चन्द्र-ज्योति छविवंत, तुम गुन तीन जगत लंघंत ।
एक नाथ त्रिभुवन आधार, तिन विचरत को करै निवार ॥१४॥

जो सुर-तिय विभ्रम आरम्भ, मन न डिग्यो तुम तो न अचंभ ।
अचल चलावै प्रलय समीर, मेरु-शिखर डगमगै न धीर ॥१५॥

धूमरहित बाती गतनेह, परकाशै त्रिभुवन-घर एह ।
वात-गम्य नाहीं परचण्ड, अपर दीप तुम बलो अखंड ॥१६॥

छिपहु न लुपहु राहु की छांहि, जग परकाशक हो छिनमाँहि ।
घन अनवर्त दाह विनिवार, रवि तैं अधिक धरो गुणसार ॥१७॥

सदा उदित विदलित मनमोह, विघटित मेघ राहु अविरोह ।
तुम मुख-कमल अपूरव चन्द, जगत-विकाशी जोति अमंद ॥१८॥

निश-दिन शशि रवि को नहि काम, तुम मुखचन्द हरै तम घाम ।
जो स्वभावतैं उपजै नाज, सजल मेघ तैं कौनहु काज ॥१९॥

जो सुबोध सोहै तुम माहि, हरि हर आदिक में सो नाहि ।
जो द्युति महा-रतन में होय, काँच-खंड पावै नहि सोय ॥२०॥

नाराचछन्द

सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया ।
स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया ॥
कछू न तोहि देखके जहाँ तुही विशेखिया ।
मनोग चित्त-चोर और भूल हू न पेखिया ॥२१॥

अनेक पुत्रवंतिनी नितंबिनी सपूत हैं ।
न तो समान पुत्र और माततैं प्रसूत हैं ॥
दिशा धरंत तारिका अनेक कोटि को गिनैं ।
दिनेश तेजवंत एक पूर्व ही दिशा जनैं ॥२२॥

पुरान हो पुमान हो पुनीत पुण्यवान हो ।
कहें मुनीश! अंधकार-नाश को सुभान हो ॥
महंत तोहि जानके न होय वश्य कालके ।
न और मोहि मोखपंथ देय तोहि टालके ॥२३॥

अनन्त नित्य चित्त की अगम्य रम्य आदि हो ।
असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो ॥
महेश! कामकेतु योग ईश योग ज्ञान हो ।
अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संतमान हो ॥२४॥

तुही जिनेश! बुद्ध है सुबुद्धि के प्रमानतैं ।
तुही जिनेश! शंकरो जगत्त्रये विधानतैं ॥
तुही विधात है सही सुमोखपंथ धारतैं ।
नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थ के विचारतैं ॥२५॥

नमो करूँ जिनेश! तोहि आपदा निवार हो ।
नमो करूँ सुभूरि-भूमि लोक के सिंगार हो ॥
नमो करूँ भवाब्धि-नीर-राशि-शोष-हेतु हो ।
नमो करूँ महेश! तोहि मोखपंथ देतु हो ॥२६॥

चौपई (१५ मात्रा)

तुम जिन पूरन गुन-गन भरे, दोष गर्वकरि तुम परिहरे ।
और देव-गण आश्रय पाय, स्वप्न न देखे तुम फिर आय ॥२७

तरु अशोक-तल किरन उदार, तुम तन शोभित है अविकार ।
मेघ निकट ज्यों तेज फुरंत, दिनकर दिपै तिमिर निहनंत ॥२८

सिंहासन मणि-किरण-विचित्र, तापर कंचन-वरन पवित्र ।
तुम तन शोभित किरन विथार, ज्यों उदयाचल रवि तम-हार ॥२९

कुंद-पुहुप-सित-चमर ढुरंत, कनक-वरन तुम तन शोभंत ।
ज्यों सुमेरु-तट निर्मल कांति, झरना झरै नीर उमगांति ॥३०

ऊँचे रहैं सूर दुति लोप, तीन छत्र तुम दिपैं अगोप ।
तीन लोक की प्रभुता कहैं, मोती-झारल सों छवि लहैं ॥३१

दुंदुभि-शब्द गहर गंभीर, चहुँ दिशि होय तुम्हारे धीर ।
त्रिभुवन-जन शिव-संगम करै, मानूँ जय जय रव उच्चरै ॥३२

मंद पवन गंधोदक इष्ट, विविध कल्पतरु पुहुप-सुवृष्ट ।
देव करैं विकसित दल सार, मानों द्विज-पंकति अवतार ॥३३

तुम तन-भामंडल जिनचन्द, सब दुतिवंत करत है मन्द ।
कोटि शंख रवि तेज छिपाय, शशि निर्मल निशि करे अछाय ॥३४

स्वर्ग-मोख-मारग-संकेत, परम-धरम उपदेशन हेत ।
दिव्य वचन तुम खिरें अगाध, सब भाषा-गर्भित हित साध ॥३५

दोहा

विकसित-सुवरन-कमल-दुति, नख-दुति मिलि चमकाहिं ।
तुम पद पदवी जहँ धरो, तहँ सुर कमल रचाहिं ॥३६॥
ऐसी महिमा तुम विषै, और धरै नहि कोय ।
सूरज में जो जोत है, नहि तारा-गण होय ॥३७॥

षट्पद

मद-अवलिप्त-कपोल-मूल अलि-कुल झंकारें ।
तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोध उद्धत अति धारैं ॥
काल-वरन विकराल, कालवत सनमुख आवै ।
ऐरावत सो प्रबल सकल जन भय उपजावै ॥
देखि गयंद न भय करै तुम पद-महिमा लीन ।
विपति-रहित संपति-सहित वरतैं भक्त अदीन ॥३८॥

अति मद-मत्त-गयंद कुंभ-थल नखन विदारै ।
मोती रक्त समेत डारि भूतल सिंगारै ॥
बांकी दाढ़ विशाल वदन में रसना लोलै ।
भीम भयानक रूप देख जन थरहर डोलै ॥
ऐसे मृग-पति पग-तलैं जो नर आयो होय ।
शरण गये तुम चरण की बाधा करै न सोय ॥३९॥

प्रलय-पवनकर उठी आग जो तास पटंतर ।
बमैं फुलिंग शिखा उतंग पर जलैं निरंतर ॥
जगत समस्त निगल्ल भस्म करहैगी मानों ।
तडतडाट दव-अनल जोर चहुँ-दिशा उठानों ॥
सो इक छिन में उपशमै नाम-नीर तुम लेत ।
होय सरोवर परिनमै विकसित कमल समेत ॥४०॥

कोकिल-कंठ-समान श्याम-तन क्रोध जलन्ता ।
रक्त-नयन फुंकार मार विष-कण उगलंता ॥
फण को ऊंचा करे वेग ही सन्मुख धाया ।
तब जन होय निशंक देख फणपति को आया ॥
जो चांपै निज पगतलैं व्यापै विष न लगार ।
नाग-दमनि तुम नाम की है जिनके आधार ॥४१॥

जिस रन-माँहि भयानक रव कर रहे तुरंगम ।
घन से गज गरजाहिं मत्त मानों गिरि जंगम ॥
अति कोलाहल माँहिं बात जहँ नाहिं सुनीजै ।
राजन को परचंड, देख बल धीरज छीजै ॥
नाथ तिहारे नामतैं अघ छिनमाँहिं पलाय ।
ज्यों दिनकर परकाशतैं अन्धकार विनशाय ॥४२॥

मारै जहाँ गयंद कुंभ हथियार विदारै ।
उमगै रुधिर प्रवाह वेग जलसम विस्तारै ॥
होय तिरन असमर्थ महाजोधा बलपूरे ।
तिस रन में जिन तोर भक्त जे हैं नर सूरे ॥
दुर्जय अरिकुल जीत के जय पावैं निकलंक ।
तुम पद पंकज मन बसैं ते नर सदा निशंक ॥४३॥

नक्र चक्र मगरादि मच्छकरि भय उपजावै ।
जामैं बड़वा अग्नि दाहतैं नीर जलावै ॥
पार न पावैं जास थाह नहिं लहिये जाकी ।
गरजै अतिगंभीर, लहर की गिनति न ताकी ॥
सुख सों तिरैं समुद्र को, जे तुम गुन सुमराहि ।
लोल कलोलन के शिखर, पार यान ले जाहि ॥४४॥

महा जलोदर रोग, भार पीड़ित नर जे हैं ।
वात पित्त कफ कुष्ट, आदि जो रोग गहै हैं ॥
सोचत रहें उदास, नाहिं जीवन की आशा ।
अति घिनावनी देह, धरैं दुर्गंध निवासा ॥
तुम पद-पंकज-धूल को, जो लावैं निज अंग ।
ते नीरोग शरीर लहि, छिन में होय अनंग ॥४५॥

पांव कंठतें जकर बांध, सांकल अति भारी ।
गाढ़ी बेड़ी पैर माँहि, जिन जांघ बिदारी ॥
भूख प्यास चिंता शरीर दुख जे विललाने ।
सरन नाहिं जिन कोय भूपके बंदीखाने ॥
तुम सुमरत स्वयमेव ही बंधन सब खुल जाहि ।
छिन में ते संपति लहैं, चिंता भय विनसाहि ॥४६॥

महामत्त गजराज और मृगराज दवानल ।
फणपति रण परचंड नीरनिधि रोग महाबल ॥
बंधन ये भय आठ डरपकर मानों नाशै ।
तुम सुमरत छिनमाहिं अभय थानक परकाशै ॥
इस अपार संसार में शरन नाहिं प्रभु कोय ।
यातैं तुम पदभक्त को भक्ति सहाई होय ॥४७॥

यह गुनमाल विशाल नाथ तुम गुनन सँवारी ।
विविध वर्णमय पुहुप गूंथ मैं भक्ति विथारी ॥
जे नर पहिरें कंठ भावना मन में भावें ।
'मानतुंग' ते निजाधीन शिवलक्ष्मी पावैं ॥

दोहा

भाषा भक्तामर कियो, हेमराज हित हेत ।
जे नर पढ़ैं सुभाव सों, ते पावैं शिवखेत ॥४८॥

स्वयम्भू-स्तोत्र (हिन्दी)

पं. द्यानतराय

चौपई (१५ मात्रा)

राजविषै जुगलनि सुख कियो, राज त्याग भुवि शिवपद लियो ।
स्वयम्बोध स्वयम्भू भगवान, वन्दौं आदिनाथ गुणखान ।।१
इन्द्र छीर-सागर-जल लाय, मेरु न्हवाये गाय बजाय ।
मदन-विनाशक सुख करतार, वन्दौं अजित अजित-पदकार ।।२
शुकलध्यान करि करम विनाशि, घाति अघाति सकल दुखराशि ।
लह्यो मुकतिपद सुख अविकार, वन्दौं सम्भव भव-दुख टार ।।३
माता पच्छिम रयन मँझार, सुपने सोलह देखे सार ।
भूप पूछि फल सुनि हरषाय, वन्दौं अभिनन्दन मन लाय ।।४
सब कुवादवादी सरदार, जीते स्याद्वाद-धुनि धार ।
जैन-धरम-परकाशक स्वाम, सुमतिदेव-पद करहुँ प्रनाम ।।५
गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगर-शोभा अधिकाय ।
बरसे रतन पंचदश मास, नमौं पदमप्रभ सुख की रास ।।६
इन्द फनिन्द नरिन्द त्रिकाल, बानी सुनि सुनि होहि खुस्याल ।
द्वादश सभा ज्ञान-दातार, नमों सुपारसनाथ निहार ।।७
सुगुन छियालिस हैं तुम माँहि, दोष अठारह कोऊ नाहि ।
मोह-महातम-नाशक दीप, नमों चन्द्रप्रभ राख समीप ।।८
द्वादशविध तप करम विनाश, तेरह भेद चरित परकाश ।
निज अनिच्छ भवि इच्छक-दान, वन्दौं पहुपदन्त मन आन ।।९
भवि-सुखदाय सुरग तैं आय, दशविध धरम कह्यो जिनराय ।
आप समान सबनि सुख देह, वन्दौं शीतल धर्म-सनेह ।।१०

समता-सुधा कोप-विष-नाश, द्वादशांग वानी परकाश ।
चार संघ-आनन्द-दातार, नमौं श्रियांस जिनेश्वर सार ॥११

रतनत्रय चिर मुकुट विशाल, सोभै कण्ठ सुगुन-मनि-माल ।
मुक्ति-नार-भरता भगवान, वासुपूज्य वन्दौं धर ध्यान ॥१२

परम समाधि-स्वरूप जिनेश, ज्ञानी-ध्यानी हित-उपदेश ।
कर्म नाशि शिव-सुख-विलसन्त, वन्दौं विमलनाथ भगवन्त ॥१३

अन्तर-बाहिर परिगह डारि, परम दिगम्बर-व्रत को धारि ।
सर्व-जीव-हित-राह दिखाय, नमों अनन्त वचन मन लाय ॥१४

सात तत्त्व पंचासतिकाय, अरथ नवों छ-दरब बहु भाय ।
लोक अलोक सकल परकाश, वन्दौं धर्मनाथ अविनाश ॥१५

पंचम चक्रवरति निधि भोग, कामदेव द्वादशम मनोग ।
शान्तिकरन सोलम जिनराय, शान्तिनाथ वन्दौं हरखाय ॥१६

बहु थुति करे हरष नहिं होय, निन्दे दोष गहैं नहिं कोय ।
शीलवान परब्रह्मस्वरूप, वन्दौं, कुन्थुनाथ शिव-भूप ॥१७

द्वादश-गण पूजैं सुखदाय, थुति वन्दना करैं अधिकाय ।
जाकी निज-थुति कबहुँ न होय, वन्दौं अर-जिनवर पद दोय ॥१८

पर-भव रतनत्रय-अनुराग, इह भव ब्याह-समय वैराग ।
बाल-ब्रह्म-पूरन-व्रत-धार, वन्दौं मल्लिनाथ जिनसार ॥१९

बिन उपदेश स्वयं वैराग, थुति लौकान्त करै पग लाग ।
नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहि, वन्दौं मुनिसुव्रत व्रत देहि ॥२०

श्रावक विद्यावन्त निहार, भगति-भाव सौं दियो अहार ।
बरसी रतन-राशि ततकाल, वन्दौं नमि प्रभु दीन-दयाल ॥२१

सब जीवन की बन्दी छोर, राग-द्वेष द्वै बन्धन तोर ।
रजमति तजि शिव-तिय सौं मिले, नेमिनाथ वन्दौं सुखनिले ।।२२

दैत्य कियो उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयो फनिधार ।
गयो कमठ शठ मुख कर श्याम, नमों मेरुसम पारस स्वाम ।।२३

भव-सागर तैं जीव अपार, धरम-पोत में धरे निहार ।
डूबत काढ़े दया विचार, वर्धमान वन्दौं बहु बार ।।२४

दोहा

चौबीसौं पद कमल जुग, वन्दौं मन-वच-काय ।
'द्यानत' पढ़ै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ।।२५।।

निर्वाण-काण्ड (हिन्दी)

भैया भगवतीदास

दोहा

वीतराग वन्दौं सदा, भाव सहित सिर-नाय ।
कहूँ काण्ड निर्वाण की, भाषा सुगम बनाय ।।

चौपई (१५ मात्रा)

अष्टापद आदीश्वर स्वामि, वासुपूज्य चम्पापुरि नामि ।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, वन्दौं भाव-भगति उर धार ।।१।।

चरम तीर्थकर चरम-शरीर, पावापुरि स्वामि महावीर ।
शिखर समेद जिनेसुर बीस, भावसहित वन्दौं निश-दीस ।।२।।

वरदत्तराय रु इन्द मुनिन्द, सायरदत्त आदि गुणवृन्द ।
नगर तारवर मुनि उठकोडि, वन्दौ भावसहित कर जोडि ।।३।।

श्रीगिरनार शिखर विख्यात, कोडि बहत्तर अरु सौ सात ।
सम्बु प्रद्युम्न कुमर द्वै भाय, अनिरुध आदि नमूँ तसु पाय ।।४।।

रामचन्द्र के सुत द्वै वीर, लाडनरिन्द आदि गुणधीर ।
पाँच कोडि मुनि मुक्ति मँझार, पावागिरि वन्दौं निरधार ।।५।।

पाण्डव तीन द्रविड-राजान, आठ कोडि मुनि मुकति पयान ।
श्रीशत्रुंजयगिरि के सीस, भावसहित वन्दौं निश-दीस ।।६।।

जे बलभद्र मुकति में गये, आठ कोडि मुनि औरहु भये ।
श्रीगजपन्थ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूँ तिहुँ काल ।।७।।

राम हणू सुग्रीव सुडील, गव गवाख्य नील महानील ।
कोडि निन्याणव मुक्ति पयान, तुंगीगिरि वन्दौं धरि ध्यान ।।८।।

नंग-अनंग कुमार सुजान, पाँच कोडि अरु अर्ध प्रमान ।
मुक्ति गये सोनागिरि-शीस, ते वन्दौं त्रिभुवनपति ईस ।।९।।

रावण के सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवा-तट सार ।
कोटि पंच अरु लाख पचास, ते वन्दौं धरि परम हुलास ।।१०।।

रेवानदी सिद्धवरकूट, पश्चिम दिशा देह जहँ छूट ।
द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठकोडि वन्दौं भव-पार ।।११।।

बडवानी बडनयर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग ।
इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते वन्दौं भव-सागर-तर्ण ।।१२।।

सुवरणभद्र आदि मुनि चार, पावागिरि-वर-शिखर मँझार ।
चेलना-नदी-तीर के पास, मुक्ति गये वन्दौं नित तास ।।१३।।

फलहोडी बडगाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिरि रूप ।
गुरुदत्तादि मुनीसुर जहाँ, मुक्ति गये वन्दौं नित तहाँ ।।१४।।

बाल महाबाल मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय ।
श्रीअष्टापद मुक्ति मँझार, ते वन्दौं नित सुरत सँभार ।।१५।।

अचलापुर की दिश ईसान, तहाँ मेढगिरि नाम प्रधान ।
साढ़े तीन कोडि मुनिराय, तिनके चरण नमूँ चित लाय ॥१६॥
वंसस्थल वन के ढिग होय, पश्चिम दिशा कुन्थुगिरि सोय।
कुलभूषण दिशिभूषण नाम, तिनके चरणनि करूँ प्रणाम ॥१७॥
जसरथ राजा के सुत कहे, देश कलिंग पाँच सौ लहे।
कोटिशिला मुनि कोडि प्रमान, वन्दन करूँ जोरि जुग पान ॥१८॥
समवसरण श्रीपार्श्व-जिनन्द, रेसिन्दीगिरि नयनानन्द ।
वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते वन्दौं नित धरम-जिहाज ॥१९॥
(मथुरापुर पवित्र उद्यान, जम्बूस्वामी जी निर्वान।
चरम केवली पंचमकाल, ते वन्दौं नित धरम जिहाज ॥)
तीन लोक के तीरथ जहाँ, नित प्रति वन्दन कीजै तहाँ।
मन-वच-कायसहित सिर नाय,वन्दन करहिं भविक गुण गाय॥२०॥
संवत सतरह सौ इकताल, आश्विन सुदि दशमी सुविशाल ।
'भैया' वन्दन करहिं त्रिकाल, जय निर्वाणकाण्ड गुणमाल ॥२१॥

भावनाएँ

वैराग्य भावना

(कविवर भूधरदास)

दोहा

बीज राख फल भोगवै, ज्यों किसान जग माँहि ।
त्यों चक्री नृप सुख करै, धर्म विसारै नाहि ॥१॥

जोगीरासा वा नरेन्द्र छन्द

इह विधि राज करै नरनायक, भोगै पुण्य विशालो ।
सुख सागर में रमत निरंतर, जात न जान्यो कालो ॥
एक दिवस शुभ कर्म-संजोगे क्षेमंकर मुनि वंदे ।
देखि शिरीगुरु के पदपंकज, लोचन अलि आनन्दे ॥२॥

तीन प्रदक्षिण दे शिर नायो, कर पूजा थुति कीनी ।
साधु समीप विनय कर बैठ्यो, चरनन में दिठि दीनी ॥
गुरु उपदेश्यो धर्म-शिरोमणि, सुन राजा वैरागे ।
राज रमा वनितादिक जे रस, ते रस बेरस लागे ॥३॥

मुनि-सूरज कथनी किरणावलि लगत भरम बुधि भागी ।
भव-तन-भोग स्वरूप विचार्यो, परम धरम अनुरागी ॥
इह संसार महावन भीतर, भरमत ओर न आवै ।
जामन मरन जरा दव दाझै जीव महादुख पावै ॥४॥

कबहूँ जाय नरक थिति भुंजै, छेदन भेदन भारी ।
कबहूँ पशु परजाय धरै तहँ वध बंधन भयकारी ॥
सुरगति में परसंपति देखें, राग उदय दुख होई ।
मानुष योनि अनेक विपतिमय, सर्व सुखी नहि कोई ॥५॥

कोई इष्ट-वियोगी बिलखै, कोई अनिष्ट-संयोगी ।
कोई दीन-दरिद्री विगुचै, कोई तन के रोगी ॥
किसही घर कलिहारी नारी, कै बैरी सम भाई ।
किसही के दुख बाहिर दीखें, किसही उर दुचिताई ॥६॥
कोई पुत्र बिना नित झूरै, होय मरै तब रोवै ।
खोटी संतति सों दुख उपजै, क्यों प्राणी सुख सोवै ॥
पुण्य उदय जिनकें तिनकों भी, नाहिं सदा सुख साता ।
यो जगवास जथारथ देखें, सब दीखै दुखदाता ॥७॥
जो संसार विषैं सुख हो तौ, तीर्थङ्कर क्यों त्यागै ।
काहे कों शिव साधन करते, संजमसों अनुरागैं ॥
देह अपावन अथिर घिनावन, यामें सार न कोई ।
सागर के जल सौं शुचि कीजे, तो भी शुद्ध न होई ॥८॥
सात कुधातुमई मल-मूरत, चर्म लपेटी सोहै ।
अंतर देखत या सम जग में, अवर अपावन को है? ॥
नव-मल-द्वार स्रवैं निशि-वासर, नाम लिये घिन आवै ।
व्याधि-उपाधि अनेक जहाँ तहँ, कौन सुधी सुख पावै ॥९॥
पोषत तो दुख दोष करै अति, सोषत सुख उपजावै ।
दुर्जन-देह-स्वभाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावै ॥
राचन-जोग स्वरूप न याको विरचन-जोग सही है ।
यह तन पाय महा तप कीजे यामें सार यही है ॥१०॥
भोग बुरे भव रोग बढ़ावैं, बैरी हैं जग जी के ।
बेरस होहिं विपाक समय अति, सेवत लागैं नीके ॥
वज्र अगिनि विष से विषधर से, ये अधिके दुखदाई ।
धर्म-रतन के चोर चपल अति, दुर्गति-पंथ सहाई ॥११॥

मोह-उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जानै ।
ज्यों कोई जन खाय धतूरा, सो सब कंचन मानै ॥
ज्यों ज्यों भोग संजोग मनोहर, मन-वांछित जन पावै ।
तृष्णा नागिन त्यों-त्यों डंके, लहर जहर की आवै ॥१२॥

मैं चक्रीपद पाय निरंतर, भोगे भोग घनेरे ।
तौ भी तनक भये नहिं पूरन, भोग मनोरथ मेरे ॥
राजसमाज महा अघ-कारण, बैर बढ़ावन-हारा ।
वेश्यासम लछमी अति चंचल, याका कौन पत्यारा ॥१३॥

मोह महा-रिपु बैर विचार्यो, जग-जिय संकट डारे ।
घर-कारागृह वनिता बेड़ी, परिजन जन रखवारे ॥
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप, ये जियके हितकारी ।
ये ही सार असार और सब, यह चक्री चितधारी ॥१४॥

छोड़े चौदह रत्न नवों निधि, अरु छोड़े संग साथी ।
कोटि अठारह घोड़े छोड़े चौरासी लख हाथी ॥
इत्यादिक संपति बहुतेरी जीरण-तृण सम त्यागी ।
नीति-विचार नियोगी सुत कों, राज दियो बड़भागी ॥१५॥

होय निशल्य अनेक नृपति संग, भूषण वसन उतारे ।
श्री गुरु चरण धरी जिनमुद्रा, पंच महाव्रत धारे ॥
धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धनि यह धीरज भारी ।
ऐसी संपत्ति छोड़ बसे वन, तिन पद धोक हमारी ॥१६॥

दोहा

परिग्रहपोट उतार सब, लीनो चारित पंथ ।
निज स्वभाव में थिर भये, वज्रनाभि निरग्रंथ ॥

बारह भावना

कविवर भूधरदास

दोहा–राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार ।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार ॥

दल बल देई देवता, मातपिता परिवार ।
मरती बिरियाँ जीव को, कोई न राखनहार ॥

दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान ।
कहूँ न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान ॥

आप अकेला अवतरै, मरै अकेला होय ।
यूँ कबहूँ इस जीव को, साथी सगा न कोय ॥

जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपनो कोय ।
घर सम्पत्ति पर, प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ॥

दिपै चाम चादरमढ़ी, हाड़ पींजरा देह ।
भीतर या सम जगत में, अवर नहीं घिन-गेह ॥

सोरठा

मोह-नींद के जोर, जगवासी घूमैं सदा ।
कर्म-चोर चहुँ ओर, सरवस लूटैं सुध नहीं ॥

सतगुरु देय जगाय, मोह-नींद जब उपशमैं ।
तब कछु बनहिं उपाय, कर्म-चोर आवत रुकैं ॥

दोहा

ज्ञान-दीप तप-तेल भर, घर शोधै भ्रम छोर ।
या विध बिन निकसैं नहीं, पैठे पूरब चोर ॥

पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच परकार ।
प्रबल पंच इन्द्री-विजय, धार निर्जरा सार ॥

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष-संठान ।
तामें जीव अनादि तैं, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥
धन कन कंचन राजसुख, सबहि सुलभकर जान ।
दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान ॥
जाँचे सुर-तरु देय सुख, चिन्तत चिन्ता-रैन ।
बिन जाँचै बिन चिन्तयें, धर्म सकल सुख दैन ॥

बारह भावना

मंगतराय

दोहा

वंदूँ श्री अरहंत-पद, वीतराग विज्ञान ।
वरणूँ बारह भावना, जग जीवन हित जान ॥१॥

विष्णुपद छन्द

कहाँ गये चक्री जिन जीता, भरत खण्ड सारा ।
कहाँ गये वह राम-रु-लक्ष्मण, जिन रावण मारा ॥
कहाँ कृष्ण रुक्मणि सतभामा, अरु संपति सगरी ।
कहाँ गये वह रंगमहल अरु, सुवरन की नगरी ॥२॥

नहीं रहे वह लोभी कौरव जूझ मरे रन में ।
गये राज तज पांडव वन को, अगनि लगी तन में ॥
मोह-नींद से उठ रे चेतन, तुझे जगावन को ।
हो दयाल उपदेश करैं, गुरु बारह भावन को ॥३॥

१. अथिर भावना

सूरज चाँद छिपै निकलै ऋतु, फिर फिर कर आवै ।
प्यारी आयु ऐसी बीतै, पता नहीं पावै ॥

पर्वत पतित-नदी-सरिता-जल बहकर नहि हटता ।
स्वास चलत यों घटै काठ ज्यों, आरे सों कटता ॥४॥

ओस-बूंद ज्यों गलै धूप में, वा अंजुलि पानी ।
छिन छिन यौवन छीन होत है क्या समझै प्राणी ॥
इंद्रजाल आकाश नगर सम जग-संपति सारी ।
अथिर रूप संसार विचारो सब नर अरु नारी ॥५॥

२. अशरण भावना

काल सिंह ने मृग - चेतन को घेरा भव वन में ।
नहीं बचावनहारा कोई यों समझो मन में ॥
मंत्र तंत्र सेना धन-संपति, राज पाट छूटै ।
वश नहिं चलता काल लुटेरा, काय नगरि लूटै ॥६॥

चक्ररत्न हलधर सा भाई, काम नहीं आया ।
एक तीर के लगत कृष्ण की विनश गई काया ॥
देव धर्म गुरु शरण जगत में, और नहीं कोई ।
भ्रम से फिरै भटकता चेतन, यूँ ही उमर खोई ॥७॥

३. संसार भावना

जनम-मरन अरु जरा-रोग से, सदा दुखी रहता ।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव भव-परिवर्तन सहता ॥
छेदन भेदन नरक पशूगति, वध बंधन सहना ।
राग-उदय से दुख सुरगति में, कहाँ सुखी रहना ॥८॥

भोगि पुण्य फल हो इक इंद्री, क्या इसमें लाली ।
कुतवाली दिनचार वही फिर, खुरपा अरु जाली ॥
मानुष-जन्म अनेक विपतिमय, कहीं न सुख देखा ।
पंचम गति सुख मिलै शुभाशुभ को मेटो लेखा ॥९॥

४. एकत्व भावना

जनमै मरै अकेला चेतन, सुख-दुख का भोगी ।
और किसी का क्या इक दिन, यह देह जुदी होगी ॥
कमला चलत न पैंड जाय, मरघट तक परिवारा ।
अपने अपने सुख को रोवैं, पिता पुत्र दारा ॥१०॥

ज्यों मेले में पंथीजन मिल नेह फिरैं धरते ।
ज्यों तरुवर पै रैन बसेरा पंछी आ करते ॥
कोस कोई दो कोस कोई फिर थक-थक कर हारैं ।
जाय अकेला हंस संग में, कोई न पर मारैं ॥११॥

५. अन्यत्व भावना

मोह-रूप मृग-तृष्णा जग में, मिथ्या जल चमकै ।
मृग चेतन नित भ्रम में उठ उठ, दौड़ैं थक थककै ॥
जल नहिं पावै प्राण गमावै, भटक भटक मरता ।
वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नहीं करता ॥१२॥

तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड़ तू ज्ञानी ।
मिले अनादि यतनतैं बिछुडै, ज्यों पय अरु पानी ॥
रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेद ज्ञान करना ।
जौ लों पौरुष थकै न तौ लों उद्यम सों चरना ॥१३॥

६. अशुचि भावना

तू नित पोखै यह सूखे ज्यों, धोवै त्यों मैली ।
निश दिन करै उपाय देह का, रोग-दशा फैली ॥
मात-पिता रज-वीरज मिलकर, बनी देह तेरी ।
मांस हाड नश लहु राध की, प्रगट व्याधि घेरी ॥१४॥

काना पौंडा पड़ा हाथ यह चूसै तो रोवै ।
फलै अनंत जु धर्म ध्यान की, भूमि-विषै बोवै ॥
केसर चंदन पुष्प सुगंधित, वस्तु देख सारी ।
देह परसते होय अपावन, निशदिन मल जारी ॥१५॥

७. आस्रव भावना

ज्यों सर जल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मन को ।
दर्वित जीव प्रदेश गहै जब पुद्गल भरमन को ॥
भावित आस्रव भाव शुभाशुभ, निशदिन चेतन को ।
पाप पुण्य के दोनों करता, कारण बंधन को ॥१६॥

पन-मिथ्यात योग-पंद्रह द्वादश-अविरत जानो ।
पंच रु बीस कषाय मिले सब, सत्तावन मानो ॥
मोह - भाव की ममता टारै, पर परणति खोते ।
करै मोख का यतन निरास्रव, ज्ञानी जन होते ॥१७॥

८. संवर भावना

ज्यों मोरी में डाट लगावै, तब जल रुक जाता ।
त्यों आस्रव को रोकै संवर, क्यों नहिं मन लाता ॥
पंच महाव्रत समिति गुप्तिकर वचन काय मन को ।
दशविध-धर्म परीषह-बाइस, बारह भावनको ॥१८॥

यह सब भाव सत्तावन मिलकर, आस्रव को खोते ।
सुपन दशा से जागो चेतन, कहाँ पड़े सोते ॥
भाव शुभाशुभ रहित शुद्ध-भावन संवर पावै ।
डाँट लगत यह नाव पड़ी मँझधार पार जावै ॥१९॥

९. निर्जरा भावना

ज्यों सरवर जल रुका सूखता, तपन पड़ै भारी ।
संवर रोकै कर्म, निर्जरा ह्वै सोखनहारी ॥
उदयभोग सविपाक समय, पक जाय आम डाली ।
दूजी है अविपाक पकावै, पालविषै माली ॥२०॥

पहली सबकें होय नहीं, कुछ सरै काज तेरा ।
दूजी करै जू उद्यम करकै, मिटै जगत फेरा ॥
संवर सहित करो तप प्रानी, मिलै मुकत रानी ।
इस दुलहिन की यही सहेली, जानै सब ज्ञानी ॥२१॥

१०. लोकभावना

लोक अलोक अकाश माँहिं थिर, निराधार जानो ।
पुरुषरूप कर-कटी भये षट्, द्रव्यनसों मानो ॥
इसका कोई न करता हरता, अमिट अनादी है ।
जीव रु पुद्गल नाचै यामैं, कर्म उपाधी है ॥२२॥

पाप पुण्य सों जीव जगत में, नित सुख दुख भरता ।
अपनी करनी आप भरै शिर, औरन के धरता ॥
मोह कर्म को नाश, मेटकर सब जग की आसा ।
निज पद में थिर होय लोक के, शीश करो वासा ॥२३॥

११. बोधि-दुर्लभभावना

दुर्लभ है निगोद से थावर, अरु त्रस गति पानी ।
नरकाया को सुरपति तरसै सो दुर्लभ प्रानी ॥
उत्तम देश सुसंगति दुर्लभ, श्रावक कुल पाना ।
दुर्लभ सम्यक् दुर्लभ संयम, पंचम गुणठाना ॥२४॥

दुर्लभ रत्नत्रय आराधन दीक्षा का धरना ।
दुर्लभ मुनिवर के व्रत पालन, शुद्ध भाव करना ॥
दुर्लभ से दुर्लभ है चेतन, बोधि ज्ञान पावै ।
पाकर केवलज्ञान नहीं फिर, इस भव में आवै ॥२५॥

१२. धर्मभावना

एकान्तवाद के धारी जग में दर्शन बहुतेरे ।
कल्पित नाना युक्ति बनाकर ज्ञान हरें मेरे ॥
हो सुछन्द सब पाप करें सिर करता के लावैं ।
कोई छिनक कोई करता से, जग में भटकावैं ॥२६॥

वीतराग सर्वज्ञ दोष बिन, श्रीजिन की वानी ।
सप्त तत्व का वर्णन जामें, सबको सुखदानी ॥
इनका चिंतवन बार-बार कर, श्रद्धा उर धरना ।
'मंगत' इसी जतनतैं इक दिन, भवसागर-तरना ॥२७॥

सामायिक पाठ

भावना बत्तीसी

प्रेम भाव हो सब जीवों से, गुणी जनों में हर्ष प्रभो ।
करुणा स्रोत बहे दुखियों पर, दुर्जन में मध्यस्थ विभो ॥१

यह अनन्त बल शील आत्मा, हो शरीर से भिन्न प्रभो ।
ज्यों होती तलवार म्यान से, वह अनन्त बल दो मुझको ॥२

सुख दुख बैरी बन्धु वर्ग में काँच कनक में समता हो ।
वन उपवन प्रासाद कुटी में, नहीं खेद नहिं ममता हो ॥३

जिस सुन्दरतम पथ पर चलकर, जीते मोह मान मन्मथ ।
वह सुन्दर पथ ही प्रभु मेरा, बना रहे अनुशीलन पथ ॥४

एकेन्द्रिय आदिक प्राणी की, यदि मैंने हिंसा की हो ।
शुद्ध हृदय से कहता हूँ वह, निष्फल हो दुष्कृत्य प्रभो ।।५

मोक्ष मार्ग प्रतिकूल प्रवर्तन, जो कुछ किया कषायों से ।
विपथ गमन सब कालुष मेरे, मिट जावें सद्भावों से ।।६

चतुर वैद्य विष विक्षत करता, त्यों प्रभु ! मैं भी आदि उपान्त ।
अपनी निन्दा आलोचन से, करता हूँ पापों को शान्त ।।७

सत्य अहिंसादिक व्रत में भी, मैंने हृदय मलीन किया ।
व्रत विपरीत प्रवर्तन करके, शीलाचरण विलीन किया ।।८

कभी वासना की सरिता का, गहन सलिल मुझ पर छाया ।
पी-पीकर विषयों की मदिरा, मुझमें पागलपन आया ।।९

मैंने छली और मायावी, हो असत्य आचरण किया ।
परनिन्दा गाली चुगली जो, मुँह पर आया वमन किया ।।१०

निरभिमान उज्ज्वल मानस हो, सदा सत्य का ध्यान रहे ।
निर्मल जल की सरिता सदृश, हिय में निर्मल ज्ञान बहे ।।११

मुनि चक्री शक्री के हिय में, जिस अनन्त का ध्यान रहे ।
गाते वेद पुराण जिसे वह, परम देव मम हृदय रहे ।।१२

दर्शन ज्ञान स्वभावी जिसने, सब विकार ही वमन किये ।
परम ध्यान गोचर परमातम, परम देव मम हृदय रहे ।।१३

जो भव दुख का विध्वंसक है, विश्व विलोकी जिसका ज्ञान ।
योगी जन के ध्यान गम्य वह, बसे हृदय में देव महान ।।१४

मुक्तिमार्ग का दिग्दर्शक है, जनम मरण से परम अतीत ।
निष्कलंक त्रैलोक्यदर्शी वह, देव रहे मम हृदय समीप ।।१५

निखिल विश्व के वशीकरण वे, राग रहे न द्वेष रहे ।
शुद्ध अतीन्द्रिय ज्ञानस्वरूपी, परम देव मम हृदय रहे ॥१६

देख रहा जो निखिल विश्व को, कर्म कलंक विहीन विचित्र ।
स्वच्छ विनिर्मल निर्विकार वह, देव करे मम हृदय पवित्र ॥१७

कर्म कलंक अछूत न जिसका, कभी छू सके दिव्य प्रकाश ।
मोह तिमिर को भेद चला जो, परम शरण मुझको वह आप्त ॥१८

जिसकी दिव्य ज्योति के आगे, फीका पड़ता सूर्य प्रकाश ।
स्वयं ज्ञानमय स्व-पर प्रकाशी,परम शरण मुझको वह आप्त ॥१९

जिसके ज्ञान रूप दर्पण में, स्पष्ट झलकते सभी पदार्थ ।
आदि अन्त से रहित शान्त शिव,परम शरण मुझको वह आप्त ॥२०

जैसे अग्नि जलाती तरु को, तैसे नष्ट हुए स्वयमेव ।
भय-विषाद-चिन्ता नहीं जिनको, परम शरण मुझको वह देव ॥२१

तृण चौकी शिल शैल शिखर नहीं, आत्म समाधि के आसन ।
संस्तर, पूजा, संघ-सम्मिलन, नहीं समाधि के साधन ॥२२

इष्ट वियोग अनिष्ट योग में, विश्व मनाता है मातम ।
हेय सभी हैं विषय वासना, उपादेय निर्मल आतम ॥२३

बाह्य जगत कुछ भी नहीं मेरा, और न बाह्य जगत का मैं ।
यह निश्चय कर छोड़ बाह्य को, मुक्ति हेतु नित स्वस्थ रमें ॥२४

अपनी निधि तो अपने में है, बाह्य वस्तु में व्यर्थ प्रयास ।
जग का सुख तो मृग तृष्णा है, झूठे हैं उसके पुरुषार्थ ॥२५

अक्षय है शाश्वत है आत्मा, निर्मल ज्ञान स्वभावी है ।
जो कुछ बाहर है, सब पर है, कर्माधीन विनाशी है ॥२६

तन से जिसका ऐक्य नहीं हो, सुत तिय मित्रों से कैसे ।
चर्म दूर होने पर तन से, रोम समूह रहे कैसे ॥२७

महाकष्ट पाता जो करता, पर पदार्थ जड़-देह संयोग ।
मोक्ष महल का पथ है सीधा, जड़-चेतन का पूर्ण वियोग ॥२८

जो संसार पतन के कारण, उन विकल्प जालों को छोड़ ।
निर्विकल्प निर्द्वन्द्व आत्मा, फिर-फिर लीन उसी में हो ॥२९

स्वयं किये जो कर्म शुभाशुभ, फल निश्चय ही वे देते ।
करे आप, फल देय अन्य तो स्वयं किये निष्फल होते ॥३०

अपने कर्म सिवाय जीव को, कोई न फल देता कुछ भी ।
'पर देता है' यह विचार तज स्थिर हो, छोड़ प्रमाद बुद्धि ॥३१

निर्मल, सत्य, शिवं सुन्दर है, अमितगति वह देव महान ।
शाश्वत निज में अनुभव करते, पाते निर्मल पद निर्वाण ॥३२

इन बत्तीस पदों से कोई, परमातम को ध्याते हैं ।
साँची सामायिक को पाकर, भवोदधि तर जाते हैं ॥३३

भावना बत्तीसी

(पद्यानुवाद—क्षुल्लक ध्यानसागर)

मेरा आतम सब जीवों पर मैत्री भाव करे,
गुणगणमण्डित भव्य जनों पर प्रमुदित भाव धरे ।
दीन दुखी जीवों पर स्वामी! करुणाभाव करे,
और विरोधी के ऊपर नित समताभाव धरे ॥१॥

तुम प्रसाद से हो मुझमें वह शक्ति नाथ! जिससे,
अपने शुद्ध अतुल बलशाली चेतन को तन से ।

पृथक् कर सकूँ पूर्णतया मैं ज्यों योद्धा रण में,
खींचे निज तलवार म्यान से रिपु सन्मुख क्षण में ॥२॥
छोड़ा है सबमें अपनापन मैंने मन मेरा,
बना रहे नित सुख में दुःख में समता का डेरा ।
शत्रु-मित्र में, मिलन-विरह में, भवन और वन में,
चेतन को जाना न पड़े फिर नित नूतन तन में ॥३॥
अन्धकार नाशक दीपक-सम अडिग चरण तेरे,
अहो! विराजे रहें हमेशा उर में ही मेरे ।
हों मुनीश! वे घुले हुएसे या कीलित जैसे,
अथवा खुदे हुए से हों या प्रतिबिम्बित जैसे ॥४॥
हो प्रमाद-वश जहाँ-तहाँ यदि मैंने गमन किया,
एकेन्द्रिय-आदिक जीवों को घायल बना दिया ।
पृथक् किया या भिड़ा दिया हो अथवा दबा दिया,
मिथ्या हो दुष्कृत वह मेरा प्रभुपद शीश किया ॥५॥
चल विरुद्ध शिव-पथ के मैंने जो दुर्मति होके,
होके वश में दुष्ट इन्द्रियों और कषायों के ।
खण्डित की जो चरित-शुद्धि वह दुष्कृत निष्फल हो,
मेरा मन भी दुर्भावों को तजकर निर्मल हो ॥६॥
मन्त्र शक्ति से वैद्य उतारे ज्यों अहि-विष सारा,
त्यों अपनी निन्दा-गर्हा वा आलोचन द्वारा ।
मन वच तन से या कषाय से संचित अघ भारी,
भव दुख कारण नष्ट करूँ मैं होकर अविकारी ॥७॥
धर्म-क्रिया में मुझे लगा जो कोई अघकारी,
अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतीचार या अनाचार भारी ।

कुमति, प्रमाद-निमित्तक उसका प्रतिक्रमण करता,
प्रायश्चित्त बिना पापों को कौन, कहाँ हरता ? ॥८॥
चित्त शुद्धि की विधि की क्षति को अतिक्रमण कहते,
शीलबाड़ के उल्लंघन को व्यतिक्रमण कहते ।
त्यक्त विषय के सेवन को प्रभु ! अतीचार कहते,
विषयासक्तपने को जग में अनाचार कहते ॥९॥
शास्त्र-पठन में मेरे द्वारा यदि जो कहीं-कहीं,
प्रमाद से कुछ अर्थ, वाक्य, पद, मात्रा छूट गयी ।
सरस्वती मेरी उस त्रुटि को कृपया क्षमा करें,
और मुझे कैवल्यधाम में माँ अविलम्ब धरे ॥१०॥
वांछित फलदात्री चिन्तामणि सदृश मात ! तेरा,
वन्दन करने वाले मुझको मिले पता मेरा ।
बोधि, समाधि, विशुद्ध भावना, आत्मसिद्धि मुझको,
मिले और मैं पा जाऊँ माँ ! मोक्ष-महासुख को ॥११॥
सब मुनिराजों के समूह भी जिनका ध्यान करें,
सुरों-नरों के सारे स्वामी जिन गुणगान करें ।
वेद, पुराण, शास्त्र भी जिनके गीतों के डेरे,
वे देवों के देव विराजें उर में ही मेरे ॥१२॥
जो अनन्त-दृग-ज्ञान-स्वरूपी सुख-स्वभाव वाले,
भव के सभी विकारों से भी जो रहे निराले ।
जो समाधि के विषयभूत हैं परमातम नामी,
वे देवों के देव विराजें मम उर में स्वामी ॥१३॥
जो भव दुख का जाल काट कर उत्तम-सुख वरते,
अखिल-विश्व के अन्तःस्थल का अवलोकन करते ।

जो निज में लवलीन हुये प्रभु ध्येय योगियों के,
वे देवों के देव विराजें मम उर के होके ॥१४॥
मोक्षमार्ग के जो प्रतिपादक सब जग उपकारी,
जन्म मरण के संकटादि से रहित निर्विकारी ।
त्रिलोकदर्शी दिव्य-शरीरी सब कलंकनाशी,
वे देवों के देव रहे मम उर में अविनाशी ॥१५॥
आलिंगित हैं जिनके द्वारा जग के सब प्राणी,
वे रागादिक दोष न जिनके सर्वोत्तम ध्यानी ।
इन्द्रिय-रहित परम-ज्ञानी जो अविचल अविनाशी,
वे देवों के देव रहें मम उर के ही वासी ॥१६॥
जग-कल्याणी परिणति से जो व्यापक गुण-राशी,
भावी-सिद्ध, विबुद्ध, जिनेश्वर, कर्म-पाश-नाशी ।
जिसने ध्येय बनाया उसके सकल-दोष-हारी,
वे देवों के देव रहें मम उर में अविकारी ॥१७॥
कर्म कलंक दोष भी जिनको कभी न छू पाते,
ज्यों रवि के सन्मुख न कभी भी तम समूह आते ।
नित्य निरंजन जो अनेक हैं और एक भी हैं,
उन अरहंतदेव की मैंने सुखद शरण ली है ॥१८॥
जगतप्रकाशक जिनके रहते सूर्य प्रभाधारी,
किंचित भी ना शोभा पाता जिनवर अविकारी ।
निज आतम में हैं जो सुस्थित ज्ञान-प्रभाशाली,
उन अरहंतदेव की मैंने सुखद शरण पा ली ॥१९॥
जिनका दर्शन पा लेने पर प्रकट झलक आता,
अखिल विश्व से भिन्न आतमा जो शाश्वत ज्ञाता ।

शुद्ध, शान्त, शिवरूप आदि या अन्तविहीन बली,
उन अरहंतदेव की मुझको अनुपम शरण मिली ॥२०॥
जो मद, मदन, ममत्व, शोक, भय, चिन्ता, दुख, निद्रा,
जीत चुके हैं निज-पौरुष से कहती जिन-मुद्रा ।
ज्यों दावानल तरु-समूह को शीघ्र जला देता,
उन अरहंत देव की मैं भी सुखद शरण लेता ॥२१॥
ना पलाल पाषाण न धरती हैं संस्तर कोई,
ना विधिपूर्वक रचित काठ का पाटा भी कोई ।
कारण, इन्द्रिय वा कषाय-रिपु जीते जो ध्यानी,
उसका आतम ही शुचि-संस्तर माने सब ज्ञानी ॥२२॥
ना समाधि का साधन संस्तर न ही लोक-पूजा,
ना मुनि-संघों का सम्मेलन या कोई दूजा ।
इसीलिए हे भद्र! सदा तुम आतमलीन बनो,
तज बाहर की सभी वासना कुछ ना कहो-सुनो ॥२३॥
पर-पदार्थ कोई ना मेरे थे, होंगे, ना हैं,
और कभी उनका त्रिकाल में हो पाऊँगा मैं ।
ऐसा निर्णय करके पर के चक्कर को छोड़ो,
स्वस्थ रहो नित भद्र! मुक्ति से तुम नाता जोड़ो ॥२४॥
तुम अपने में अपना दर्शन करने वाले हो,
दर्शन-ज्ञानमयी शुद्धातम पर से न्यारे हो ।
जहाँ कहीं भी बैठे मुनिवर अविचल मन-धारी,
वहीं समाधि लगे उनकी जो उनको अति-प्यारी ॥२५॥
नित एकाकी मेरा आतम नित अविनाशी है,
निर्मल दर्शन-ज्ञानस्वरूपी स्व-पर-प्रकाशी है ।

देहादिक या रागादिक जो कर्म-जनित दिखते,
क्षणभंगुर हैं वे सब मेरे कैसे हो सकते?॥२६॥
जहाँ देह से नहीं एकता जो जीवनसाथी,
वहाँ मित्र सुत वनिता कैसे हों मेरे साथी ।
इस काया के ऊपर से यदि चर्म निकल जाये,
रोमछिद्र तब कैसे इसके बीच ठहर पाये॥२७॥
भव वन में संयोगों से यह संसारी-प्राणी,
भोग रहा है कष्ट अनेकों कह न सके वाणी ।
अतः त्याज्य है मन वच तन से वह संयोग सदा,
उसको, जिसको इष्ट हितैषी मुक्ति विगत-विपदा॥२८॥
भव वन में पड़ने के कारण हैं विकल्प सारे,
उनका जाल हटाकर पहुँचो शिवपुर के द्वारे ।
अपने शुद्धातम का दर्शन तुम करते-करते,
लीन रहो परमात्म-तत्त्व में दुःखों को हरते॥२९॥
किया गया जो कर्म पूर्व में स्वयं जीव द्वारा,
उसका ही फल मिले शुभाशुभ अन्य नहीं चारा ।
औरों के कारण यदि प्राणी सुख-दुख को पाता,
तो निज-कर्म अवश्य स्वयं ही निष्फल हो जाता॥३०॥
अपने अर्जित कर्म बिना इस प्राणी को जग में,
कोई अन्य न सुख दुख देता कहीं किसी डग पे ।
ऐसा अडिग विचार बना कर तुम निज को मोड़ो,
'अन्य मुझे सुख-दुख देता है' ऐसी हठ छोड़ो॥३१॥
परमातम सबसे न्यारे हैं, अतिशय अविकारी,
सन्त अमितगति से वन्दित हैं शम दम समधारी ।

जो भी भव्य मनुज प्रभुवर को नित उर में लाते,
वे निश्चित ही उत्तम वैभव मोक्ष महल पाते ॥३२॥

दोहा

जो ध्याता जगदीश को, ले यह पद बत्तीस ।
अचल-चित्त होकर वही, बने अचलपद ईश ॥३३॥

आत्म-कीर्तन

सहजानन्द वर्णी

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता द्रष्टा आतमराम ॥टेक॥

मैं वह हूँ जो है भगवान, जो मैं हूँ वह है भगवान ।
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यह राग-वितान ॥१॥

मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति-सुख-ज्ञान-निधान ।
किन्तु आशवश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान ॥२॥

सुख-दुख-दाता कोई न आन, मोह-राग-रुष दुख की खान ।
निज को निज, पर को पर जान, फिर दुख का नहिं लेश निदान ॥३॥

जिन, शिव, ईश्वर, ब्रह्मा, राम, विष्णु, बुद्ध, हरि जिनके नाम ।
राग त्यागि पहुँचूँ निज धाम, आकुलता का फिर क्या काम ॥४॥

होता स्वयं जगत-परिणाम, मैं जग का करता क्या काम ।
दूर हटो पर-कृत परिणाम, 'सहजानन्द' रहूँ अभिराम ॥५॥

भावना गीत

भावना दिन-रात मेरी, सब सुखी संसार हो ।
सत्य संयम शील का, व्यवहार हर घर द्वार हो ॥ भावना०

धर्म का प्रचार हो, और देश का उद्धार हो ।
और ये उजड़ा हुआ, भारत चमन गुलजार हो ।। भावना०

ज्ञान के अभ्यास से, जीवों का पूर्ण विकास हो ।
धर्म के परचार से, हिंसा का जग में ह्रास हो ।। भावना०

शान्ति अरु आनन्द का, हर एक घर में वास हो ।
वीर वाणी पर सभी, संसार का विश्वास हो ।। भावना०

रोग अरु भय शोक होवे, दूर हे परमातमा ।
कर सके कल्याण ज्योति, सब जगत की आतमा ।। भावना०

मेरी भावना

पण्डित जुगलकिशोर मुख्तार

जिसने राग-द्वेष-कामादिक जीते सब जग जान लिया,
सब जीवों को मोक्षमार्ग का निस्पृह हो उपदेश दिया ।
बुद्ध-वीर-जिन-हरि-हर-ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो,
भक्ति-भाव से प्रेरित हो यह चित्त उसी में लीन रहो ।।१।।

विषयों की आशा नहिं जिनके, साम्यभाव-धन रखते हैं,
निज-पर के हित-साधन में जो निश-दिन तत्पर रहते हैं ।
स्वार्थत्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुख-समूह को हरते हैं ।।२।।

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे,
उन ही जैसी चर्या में यह चित्त सदा अनुरक्त रहे ।
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहिं कहा करूँ,
पर-धन-वनिता पर न लुभाऊँ, सन्तोषामृत पिया करूँ ।।३।।

अहंकार का भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ,
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या-भाव धरूँ ।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूँ,
बने जहाँ तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूँ ॥४॥
मैत्रीभाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे,
दीन-दुखी जीवों पर मेरे उर से करुणा-स्रोत बहे ।
दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवै,
साम्यभाव रक्खूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावै ॥५॥
गुणी जनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवै,
बने जहाँ तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावै ।
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवै,
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावै ॥६॥
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावै,
लाखों वर्षों तक जीऊँ या मृत्यु आज ही आ जावै ।
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवै,
तो भी न्याय-मार्ग से मेरा कभी न पद डिगने पावै ॥७॥
होकर सुख में मग्न न फूलें, दुख में कभी न घबरावै,
पर्वत नदी श्मशान भयानक अटवी से नहिं भय खावै ।
रहे अडोल-अकम्प निरन्तर यह मन दृढ़तर बन जावै,
इष्ट-वियोग-अनिष्टयोग में सहन-शीलता दिखलावै ॥८॥
सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावै,
बैर-पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावै ।
घर-घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावै,
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज-जन्म फल सब पावै ॥९॥

ईति-भीति व्यापै नहिं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करै,
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजा का किया करै ।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करै,
परम अहिंसा-धर्म जगत में फैल सर्व-हित किया करै ॥१०॥

फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर ही रहा करे,
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहि कोई मुख से कहा करे ।
बनकर सब 'युगवीर' हृदय से देशोन्नति रत रहा करे,
वस्तु-स्वरूप-विचार खुशी से सब दुख-संकट सहा करे ॥११॥

समाधिमरण पाठ (छोटा)

द्यानतराय

गौतम स्वामी वन्दों नामी मरण समाधि भला है ।
मैं कब पाऊँ निशदिन ध्याऊँ गाऊँ वचन कला है॥
देव-धर्म-गुरु प्रीति महादृढ़ सप्त व्यसन नहि जाने ।
त्यागे बाइस अभक्ष्य संयमी बारह व्रत नित ठाने ॥१॥

चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी त्रस न विराधे ।
बनिज करै परद्रव्य हरे नहिं छहों करम इमि साधे॥
पूजा शास्त्र गुरुन की सेवा संयम तप चहु दानी ।
पर-उपकारी अल्प-अहारी सामायिक-विधि ज्ञानी ॥२॥

जाप तपै तिहूँ योग धरै दृढ़ तन की ममता टारै ।
अन्त समय वैराग्य सम्हारै ध्यान समाधि विचारै॥
आग लगै अरु नाव डुबै जब धर्म विघन है आवे ।
चार प्रकार अहार त्याग के मंत्र सु मन में ध्यावै ॥३॥

रोग असाध्य जहाँ बहु देखै कारण और निहारे ।
बात बड़ी है जो बनि आवै भार भवन को डारै ।।
जो न बनै तो घर में रहकरि सब सों होय निराला ।
मात पिता सुत तिय को सोंपे निज परिग्रह अहि काला ।।४।।

कुछ चैत्यालय कुछ श्रावकजन कुछ दुखिया धन देई ।
क्षमा क्षमा सबही सों कहिके मन की शल्य हनेई ।।
शत्रुन सों मिल निज कर जोरै मैं बहु कीन बुराई ।
तुमसे प्रीतम को दुख दीने ते सब बगसो भाई ।।५।।

धन धरती जो मुख सों मांगै सबको दे सन्तोषै ।
छहों काय के प्राणी ऊपर करुणा भाव विशेषै ।।
ऊँच नीच घर बैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पय ले ।
दूधाधारी क्रम क्रम तजिके छाछ अहार गहे ले ।।६।।

छाछ त्यागि के पानी राखे पानी तजि संथारा ।
भूमि माँहिं फिर आसन माँडै साधर्मी ढिग प्यारा ।।
जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवाणी पढ़िये ।
यों कहि मौन लेय संन्यासी पंच परमपद गहिये ।।७।।

चौ आराधन मन में ध्यावै बारह भावन भावै ।
दश लक्षणमय धर्म विचारै रत्नत्रय मन ल्यावै ।।
पैंतीस सोलह षट पन चार अरु दुई इक वरन विचारै ।
काया तेरी दुख की ढेरी ज्ञानमयी तू सारै ।।८।।

अजर अमर निज गुण सों पूरै परमानन्द सुभावै ।
आनन्द कन्द चिदानन्द साहब तीन जगतपति ध्यावै ।।
क्षुधा तृषादिक होय परीषह सहै भाव सम राखै ।
अतीचार पाँचों सब त्यागै ज्ञान सुधारस चाखै ।।९।।

हाड़ मांस सब सूखि जाय जब धरम लीन तन त्यागै ।
अद्‌भुत पुण्य उपाय सुरग में सेज उठै ज्यों जागै ॥
तहँ ते आवे शिवपद पावै विलसै सुक्ख अनन्तो ।
'द्यानत' यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥१०॥

बड़ा समाधिमरण (मृत्युमहोत्सव) पाठ

सूरचन्द्र कृत

नरेन्द्र छन्द

बन्दौं श्री अरहंत परम गुरु, जो सबको सुखदाई ।
इस जग में दुख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई ॥
अब मैं अरज करूँ प्रभु तुमसे, कर समाधि उर माँहीं ।
अन्त समय में यह वर मागूँ, सो दीजै जगराई ॥१॥

भव-भव में तनधार नये मैं, भव-भव शुभ संग पायो ।
भव-भव में नृपरिद्धि लई मैं, मात-पिता सुत थायो ॥
भव-भव में तन पुरुष तनों धर, नारी हूँ तन लीनों ।
भव-भव में मैं हुवो नपुँसक, आतम गुण नहि चीनों ॥२॥

भव-भव में सुर पदवी पाई, ताके सुख अति भोगे ।
भव-भव में गति नरकतनी धर, दुख पायो विधि योगे ॥
भव-भव में तिर्यंच योनि धर, पाये दुख अति भारी ।
भव-भव में साधर्मीजन को, संग मिल्यो हितकारी ॥३॥

भव-भव में जिन पूजन कीनी, दान सुपात्रहि दीनो ।
भव-भव में मैं समवसरण में, देख्यो जिनगुण भीनो ॥
एती वस्तु मिली भव-भव में, सम्यक गुण नहिं पायो ।
ना समाधियुत मरण कियो मैं, तातैं जग भरमायो ॥४॥

काल अनादि भयो जग भ्रमते, सदा कुमरणहिं कीनो ।
एक बार हू सम्यकयुत मैं, निज आतम नहिं चीनो ॥
जो निज पर को ज्ञान होय तो, मरण समय दुख काई ।
देह विनाशी मैं निजभासी, ज्योति स्वरूप सदाई ॥५॥

विषय कषायनि के वश होकर, देह आपनो जान्यो ।
कर मिथ्या सरधान हिये विच, आतम नाहिं पिछान्यो ॥
यो कलेश हिय धार मरणकर, चारों गति भरमायो ।
सम्यकदर्शन-ज्ञान-चरन ये, हिरदे में नहिं लायो ॥६॥

अब या अरज करूँ प्रभु सुनिये, मरण समय यह मांगों ।
रोग जनित पीड़ा मत हूवो, अरु कषाय मत जागो ॥
ये मुझ मरण समय दुखदाता, इन हर साता कीजै ।
जो समाधियुत मरण होय मुझ, अरु मिथ्यागद छीजै ॥७॥

यह तन सात कुधातमई है, देखत ही घिन आवै ।
चर्मलपेटी ऊपर सोहै, भीतर विष्टा पावै ॥
अतिदुर्गन्धि अपावन सों यह, मूरख प्रीति बढ़ावै ।
देह विनाशी, यह अविनाशी नित्य स्वरूप कहावै ॥८॥

यह तन जीर्ण कुटीसम आतम ! यातैं प्रीति न कीजै ।
नूतन महल मिलै जब भाई, तब यामें क्या छीजै ॥
मृत्यु भये से हानि कौन है, याको भय मत लावो ।
समता से जो देह तजोगे, तो शुभतन तुम पावो ॥९॥

मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इस अवसर के माँहीं ।
जीरन तन से देत नयो यह, या सम साहू नाहीं ॥
या सेती इस मृत्यु समय पर, उत्सव अति ही कीजै ।
क्लेश भाव को त्याग सयाने, समता भाव धरीजै ॥१०॥

जो तुम पूरब पुण्य किये हैं, तिनको फल सुखदाई ।
मृत्यु मित्र बिन कौन दिखावै, स्वर्ग सम्पदा भाई ॥
राग द्वेष को छोड़ सयाने, सात व्यसन दुखदाई ।
अन्त समय में समता धारो, परभव पंथ सहाई ॥११॥

कर्म महादुठ बैरी मेरो, ता सेती दुख पावै ।
तन पिंजरे में बंध कियो मोहि, यासों कौन छुड़ावै ॥
भूख तृषा दुख आदि अनेकन, इस ही तन में गाढ़े ।
मृत्युराज अब आय दयाकर, तन पिंजर सों काढ़े ॥१२॥

नाना वस्त्राभूषण मैंने, इस तन को पहिराये ।
गन्ध-सुगन्धित अतर लगाये, षट्रस अशन कराये ॥
रात दिना मैं दास होय कर, सेव करी तन केरी ।
सो तन मेरे काम न आयो, भूल रह्यो निधि मेरी ॥१३॥

मृत्युराज को शरन पाय, तन नूतन ऐसो पाऊँ ।
जामें सम्यक्रतन तीन लहि, आठों कर्म खपाऊँ ॥
देखो तन सम और कृतघ्नी, नाहिं सु या जगमाँहीं ।
मृत्यु समय में ये ही परिजन, सब ही हैं दुखदाई ॥१४॥

यह सब मोह बढ़ावन हारे, जिय को दुर्गति दाता ।
इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता ॥
मृत्यु कल्पद्रुम पाय सयाने, माँगो इच्छा जेती ।
समता धरकर मृत्यु करो तो, पावो सम्पति तेती ॥१५॥

चौ-आराधन सहित प्राण तज, तो ये पदवी पावो ।
हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर, स्वर्ग मुकति में जावो ॥
मृत्यु कल्पद्रुम सम नहिं दाता, तीनों लोक मँझारे ।
ताको पाय कलेश करो मत, जन्म जवाहर हारे ॥१६॥

इस तन में क्या राचै जियरा, दिन-दिन जीरन हो है ।
तेज कान्ति बल नित्य घटत है, या सम अथिर सु को है ॥
पाँचों इन्द्री शिथिल भई अब, स्वास शुद्ध नहिं आवै ।
तापर भी ममता नहिं छोड़ै, समता उर नहिं लावे ॥१७॥

मृत्युराज उपकारी जिय को, तनसों तोहि छुड़ावै ।
नातर या तन बन्दीगृह में, पर्यो पर्यो बिललावै ॥
पुद्‌गल के परमाणु मिलकैं, पिण्डरूप तन भासी ।
याही मूरत मैं अमूरती, ज्ञान जोति गुण खासी ॥१८॥

रोग शोक आदिक जो वेदन, ते सब पुद्‌गल लारे ।
मैं तो चेतन व्याधि बिना नित, हैं सो भाव हमारे ॥
या तन सों इस क्षेत्र सम्बन्धी, कारण आन बन्यो है ।
खानपान दे याको पोष्यो, अब समभाव ठन्यो है ॥१९॥

मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान बिन, यह तन अपनो जान्यो ।
इन्द्रीभोग गिने सुख मैंने, आपो नाहिं पिछान्यो ॥
तन विनशनतैं नाश जानि निज, यह अयान दुखदाई ।
कुटुम आदि को अपनो जान्यो, भूल अनादी छाई ॥२०॥

अब निज भेद जथारथ समझ्यो, मैं हूँ ज्योतिस्वरूपी ।
उपजै विनसै सो यह पुद्‌गल, जान्यो याको रूपी ॥
इष्टऽनिष्ट जेते सुख दुख हैं, सो सब पुद्‌गल सागे ।
मैं जब अपनो रूप विचारों, तब वे सब दुख भागे ॥२१॥

बिन समता तनऽनंत धरे मैं, तिनमें ये दुख पायो ।
शस्त्र घाततैंऽनन्त बार मर, नाना योनि भ्रमायो ॥
बार अनन्त ही अग्नि माँहिं जर, मूवो सुमति न लायो ।
सिंह व्याघ्र अहिऽनन्तबार मुझ, नाना दुःख दिखायो ॥२२॥

बिन समाधि ये दुःख लहे मैं, अब उर समता आई ।
मृत्युराज को भय नहिं मानों, देवै तन सुखदाई ॥
यातैं जब लग मृत्यु न आवै, तब लग जप-तप कीजै ।
जप-तप बिन इस जग के माँहीं, कोई भी ना सीजै ॥२३॥

स्वर्ग सम्पदा तप सों पावै, तप सों कर्म नसावै ।
तप ही सों शिवकामिनि पति ह्वै, यासों तप चित लावै ॥
अब मैं जानी समता बिन मुझ, कोऊ नाहिं सहाई ।
मात-पिता सुत बाँधव तिरिया, ये सब हैं दुखदाई ॥२४॥

मृत्यु समय में मोह करें, ये तातैं आरत हो है ।
आरत तैं गति नीची पावै, यों लख मोह तज्यो है ॥
और परिग्रह जेते जग में तिनसों प्रीत न कीजै ।
परभव में ये संग न चालैं, नाहक आरत कीजै ॥२५॥

जे-जे वस्तु लखत हैं ते पर, तिनसों नेह निवारो ।
परगति में ये साथ न चालैं, ऐसो भाव विचारो ॥
परभव में जो संग चलै तुझ, तिन सों प्रीत सु कीजै ।
पञ्च पाप तज समता धारो, दान चार विध दीजै ॥२६॥

दशलक्षण मय धर्म धरो उर, अनुकम्पा चित लावो ।
षोडशकारण नित्य चिन्तवो, द्वादश भावन भावो ॥
चारों परवी प्रोषध कीजै, अशन रात को त्यागो ।
समता धर दुरभाव निवारो, संयम सों अनुरागो ॥२७॥

अन्त समय में यह शुभ भावहिं, होवैं आनि सहाई ।
स्वर्ग मोक्षफल तोहि दिखावैं, ऋद्धि देहिं अधिकाई ॥
खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उर में समता लाके ।
जा सेती गति चार दूर कर, बसो मोक्षपुर जाके ॥२८॥

मन थिरता करके तुम चिंतौ, चौ-आराधन भाई ।
ये ही तोकों सुख की दाता, और हितू कोउ नाहीं ॥
आगैं बहु मुनिराज भये हैं, तिन गहि थिरता भारी ।
बहु उपसर्ग सहे शुभ भावन, आराधन उर धारी ॥२९॥

तिनमें कछु इक नाम कहूँ मैं, सो सुन जिय चित लाकै ।
भाव सहित वन्दौं मैं तासों, दुर्गति होय न ताकै ॥
अरु समता निज उर में आवै, भाव अधीरज जावै ।
यों निशदिन जो उन मुनिवर को, ध्यान हिये विच लावै ॥३०॥

धन्य-धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसे धीरज धारी ।
एक श्यालनी जुग बच्चाजुत पाँव भख्यो दुखकारी ॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्यु महोत्सव बारी ॥३१॥

धन्य-धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्री ने तन खायो ।
तो भी श्रीमुनि नेक डिगे नहि, आतम सों हित लायो ॥ यह०

देखो गजमुनि के शिर ऊपर, विप्र अगिनि बहु बारी ।
शीश जले जिम लकड़ी तिनको, तो भी नाहि चिगारी ॥ यह०

सनतकुमार मुनी के तन में, कुष्ठ वेदना व्यापी ।
छिन्न-भिन्न तन तासों हूवो, तब चिंतो गुण आपी ॥ यह०

श्रेणिक सुत गंगा में डूबो, तब जिननाम चितारो ।
धर सलेखना परिग्रह छाँड़ो, शुद्ध भाव उर धारो ॥ यह०

समन्तभद्र मुनिवर के तन में, क्षुधा वेदना आई ।
तो दुख में मुनि नेक न डिगियो, चिंतो निजगुण भाई ॥ यह०

ललित घटादिक तीस दोय मुनि, कौशाम्बी तट जानो ।
नद्दी में मुनि बहकर मूवे, सो दुख उन नहिं मानो ॥ यह०

धर्मघोष मुनि चम्पानगरी, बाह्य ध्यान धर ठाड़ो ।
एक मास की कर मर्यादा, तृषा दुःख सह गाढो ॥ यह०
श्रीदत मुनि को पूर्व जन्म को, बैरी देव सु आके ।
विक्रिय कर दुख शीत तनो सो, सह्यो साधु मन लाके ॥ यह०
वृषभसेन मुनि उष्णशिला पर, ध्यान धरो मन लाई ।
सूर्य घाम अरु उष्ण पवन की, वेदन सहि अधिकाई ॥ यह०
अभयघोष मुनि काकन्दीपुर, महावेदना पाई ।
बैरी चण्ड ने सब तन छेदो, दुख दीनो अधिकाई ॥ यह०
विद्युच्चर ने बहु दुख पायो, तौ भी धीर न त्यागी ।
शुभ भावन सों प्राण तजे निज, धन्य और बड़भागी ॥ यह०
पुत्र चिलाती नामा मुनि को, बैरी ने तन घातो ।
मोटे-मोटे कीट पड़े तन, तापर निज गुण रातो ॥ यह०
दण्डक नामा मुनि की देही बाणन कर अरि भेदी ।
तापर नेक डिगे नहिं वे मुनि, कर्म महारिपु छेदी ॥ यह०
अभिनन्दन मुनि आदि पाँचसौ, घानी पेलि जु मारे ।
तो भी श्रीमुनि समताधारी, पूरब कर्म विचारे ॥ यह०
चाणक मुनि गोघर के माँहीं, मूँद अगिनि परजालो ।
श्रीगुरु उर समभाव धारकै, अपनो रूप सम्हालो ॥ यह०
सात शतक मुनिवर दुख पायो, हथनापुर में जानो ।
बलि ब्राह्मणकृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहि मानो ॥ यह०
लोहमयी आभूषण गढ़ के, ताते कर पहराये ।
पाँचों पाण्डव मुनि के तन में, तौ भी नाहिं चिगाये ॥ यह०
और अनेक भये इस जग में, समता रस के स्वादी ।
वे ही हमको हों सुखदाता, हर हैं टेव प्रमादी ॥

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरन-तप, ये आराधन चारों ।
ये ही मोंको सुख की दाता, इन्हें सदा उर धारों ।।४९।।
यों समाधि उर माँहीं लावो, अपनो हित जो चाहो ।
तज ममता अरु आठों मद को, जोति स्वरूपी ध्यावो ।।
जो कोई नित करत पयानो, ग्रामान्तर के काजै ।
सो भी शकुन विचारै नीके, शुभ शुभ कारण साजै ।।५०।।
मात-पितादिक सर्व कुटुम मिल, नीके शकुन बनावै ।
हलदी धनिया पुंगी अक्षत, दूध दही फल लावै ।।
एक ग्राम जाने के कारण, करैं शुभाशुभ सारे ।
जब परगति को करत पयानो, तब नहिं सोचो प्यारे ।।५१।।
सर्वकुटुम जब रोवन लागै, तोहि रुलावैं सारे ।
ये अपशकुन करैं सुन तोकौं, तू यों क्यों न विचारे ।।
अब परगति को चालत बिरियाँ, धर्म ध्यान उर आनो ।
चारों आराधन आराधो मोह तनो दुख हानो ।।५२।।
ह्वै निःशल्य तजो सब दुविधा, आतमराम सुध्यावो ।
जब परगति को करहु पयानो, परमतत्त्व उर लावो ।।
मोह जाल को काट पियारे, अपनो रूप विचारो ।
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, यों उर निश्चय धारो ।।५३।।

दोहा

मृत्यु महोत्सव पाठ को, पढ़ो सुनो बुधिवान ।
सरधा धर नित सुख लहो, 'सूरचन्द्र' शिवथान ।।५४।।

पञ्च उभय नव एक नभ, संवत् सो सुखदाय ।
आश्विन श्यामा सप्तमी, कह्यो पाठ मन लाय ।।५५।।

आलोचनापाठ

कवि जौहरिलाल

दोहा

वंदों पांचों परम-गुरु, चौबीसों जिनराज ।
करूँ शुद्ध आलोचना, शुद्धि करन के काज ॥१॥

सखीछन्द

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी ।
तिनकी अब निर्वृत्ति काज, तुम सरन लही जिनराज ॥२॥

इक वे ते चउ इंद्री वा, मनरहित सहित जे जीवा ।
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदइ ह्वै घात विचारी ॥३॥

समरंभ समारंभ आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ ।
कृत कारित मोदन करिकैं, क्रोधादि चतुष्टय धरिकैं ॥४॥

शत आठ जु इमि भेदनतैं, अघ कीने परिछेदनतैं ।
तिनकी कहुँ कोलों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी ॥५॥

विपरीत एकांत विनय के, संशय अज्ञान कुनय के ।
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहि जाय कहीने ॥६॥

कुगुरुन की सेवा कीनी, केवल अदया करि भीनी ।
या विधि मिथ्यात बढ़ायो, चहुँगति मधि दोष उपायो ॥७॥

हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, परवनिता सों दृग जोरी ।
आरंभ परिग्रह भीनो, पन पाप जु या विधि कीनो ॥८॥

सपरस रसना घ्रानन को, चखु कान विषय-सेवन को ।
बहु करम किये मनमाने, कछु न्याय अन्याय न जाने ॥९॥

फल पंच उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चित चाये ।
नहिं अष्ट मूलगुण धारी, विसयन सेये दुखकारी ॥१०॥

दुइबीस अभख जिन गाये, सो भी निस दिन भुंजाये ।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों करि उदर भरायो ॥११॥

अनन्तानु जु बंधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो ।
संज्वलन चौकरी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये ॥१२॥

परिहास अरति रति शोग, भय ग्लानि तिवेद संयोग ।
पनबीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम ॥१३॥

निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई ।
फिर जागि विषय-वन धायो, नानाविध विष-फल खायो ॥१४॥

कियेऽहार निहार विहारा, इनमें नहिं जतन विचारा ।
बिन देखी धरी उठाई, बिन शोधी वस्तु जु खाई ॥१५॥

तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकलप उपजायो ।
कछु सुधि बुधि नाहि रही है, मिथ्या मति छाय गयी है ॥१६॥

मरजादा तुम ढिग लीनी, ताहू में दोष जु कीनी ।
भिन-भिन अब कैसें कहिये, तुम ज्ञानविषैं सब पइये ॥१७॥

हा हा! मैं दुठ अपराधी, त्रस-जीवन-राशि विराधी ।
थावर की जतन न कीनी, उर में करुना नहि लीनी ॥१८॥

पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागां चिनाई ।
पुनि विन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखा तैं पवन विलोल्यो ॥१९॥

हा हा! मैं अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी ।
ता मधि जीवन के खंदा, हम खाये धरि आनंदा ॥२०॥

हा हा! परमाद बसाई, विन देखे अगनि जलाई ।
ता मधि जे जीव जु आये, ते हू परलोक सिधाये ॥२१॥

बीध्यो अन राति पिसायो, ईंधन बिन सोधि जलायो ।
झाडू ले जागां बुहारी, चिंवटी आदिक जीव बिदारी ॥२२॥

जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारिं जु दीनी ।
नहिं जल-थानक पहुँचाई, किरिया विन पाप उपाई ॥२३॥

जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि-कुल बहु घात करायो ।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये ॥२४॥

अन्नादिक शोध कराई, तामैं जु जीव निसराई ।
तिनका नहिं जतन कराया, गरियालैं धूप डराया ॥२५॥

पुनि द्रव्य कमावन काजे, बहु आरँभ हिंसा साजे ।
किये तिसनावश अघ भारी, करुना नहिं रंच विचारी ॥२६॥

इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता ।
संतति चिरकाल उपाई, वानी तैं कहिय न जाई ॥२७॥

ताको जु उदय अब आयो, नानाविध मोहि सतायो ।
फल भुंजत जिय दुख पावै, वचतैं कैसें करि गावै ॥२८॥

तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी ।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है ॥२९॥

जो गांवपती इक होवे, सो भी दुखिया दुख खोवै ।
तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी ॥३०॥

द्रोपदि को चीर बढ़ायो, सीता प्रति कमल रचायो ।
अंजन से किये अकामी, दुख मेट्यो अंतरजामी ॥३१॥

मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपनो विरद सम्हारो ।
सब दोषरहित करि स्वामी, दुख मेटहु अंतरजामी ॥३२॥

इंद्रादिक पद नहिं चाहूँ, विषयनि में नाहिं लुभाऊँ ।
रागादिक दोष हरीजै, परमातम निज-पद दीजै ॥३३॥

दोहा

दोषरहित जिनदेव जी, निजपद दीज्यो मोय ।
सब जीवन के सुख बढ़ै, आनंद मंगल होय ॥३४॥

अनुभव माणिक पारखी, 'जौहरि' आप जिनन्द ।
ये ही वर मोहि दीजिये, चरन शरन आनन्द ॥३५॥

गुरु स्तुति

ते गुरु मेरे मन बसो जे भवजलधि जिहाज ।
आप तिरहिं पर तारहिं, ऐसे श्री ऋषिराज ॥ टेक ॥

मोह-महारिपु जानिकै, छाँड्यो सब घरबार ।
होय दिगम्बर वन बसे, आतम शुद्ध विचार ॥ ते गुरु०

रोग उरग-बिल वपु गिण्यो, भोग भुजंग समान ।
कदली तरु संसार है, त्याग्यो सब यह जान ॥ ते गुरु०

रतनत्रय-निधि उर धरैं, अरु निरग्रन्थ त्रिकाल ।
मार्यो काम-खवीस को, स्वामी परम दयाल ॥ ते गुरु०

पंचमहाव्रत आदरैं, पांचों समिति समेत ।
तीन गुपति पालैं सदा, अजर अमर पद हेत ॥ ते गुरु०

धर्म धरैं दश-लाक्षणी, भावैं भावन सार ।
सहैं परीषह बीस द्वै, चारित-रतन-भण्डार ॥ ते गुरु०

जेठ तपै रवि आकरो, सूखै सरवर नीर ।
शैल-शिखर मुनि तप तपैं, दाझै नगन शरीर ॥ ते गुरु०

पावस रैन डरावनी, बरसै जलधर-धार ।
तरुतल निवसैं तब यती, चालै झंझा व्यार ॥ ते गुरु०

शीत पड़ै कपि-मद गलै, दाहै सब वनराय ।
तालतरंगनि के तटै, ठाड़ै ध्यान लगाय ॥ ते गुरु०

इहि विधि दुद्धर तप तपैं, तीनों काल मँझार ।
लागे सहज सरूप में, तन सों ममत निवार ॥ ते गुरु०

पूरब भोग न चिंतवै, आगम वांछा नाहि ।
चहुंगति के दुख सों डरैं, सुरति लगी शिवमाँहि ॥ ते गुरु०

रंग महल में पौढ़ते, कोमल सेज बिछाय ।
ते पच्छिम निशि भूमि में, सोवें संवरि काय ॥ ते गुरु०

गज चढ़ि चलतैं गरव सों, सेना सजि चतुरंग ।
निरखि निरखि पग वे धरैं, पालैं करुणा अंग ॥ ते गुरु०

वे गुरु चरण जहाँ धरैं, जग में तीरथ जेह ।
सो रज मम मस्तक चढ़ो, 'भूधर' माँगे एह ॥ ते गुरु०

आरती

पंचपरमेष्ठी की आरती

इहविधि मंगल आरति कीजै, पंच परमपद भज सुख लीजै ।। टेक ।।
पहली आरति श्री जिनराजा, भवदधि पार उतार जिहाजा ।। इह०
दूसरि आरति सिद्धन केरी, सुमरन करत मिटै भव फेरी ।। इह०
तीजी आरति सूरि मुनिन्दा, जनम-मरन दुख दूर करिन्दा ।। इह०
चौथी आरति श्री उवझाया, दर्शन देखत पाप पलाया ।। इह०
पांचमि आरति साधु तिहारी, कुमति-विनाशन शिव अधिकारी ।। इह०
छट्ठी ग्यारह प्रतिमाधारी, श्रावक वंदों आनन्दकारी ।। इह०
सातमि आरति श्रीजिनवानी, 'द्यानत' सुरग-मुकति-सुखदानी ।। इह०

श्री महावीर स्वामी की आरती

ॐ जय महावीर प्रभो, स्वामी जय महावीर प्रभो ।
कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानन्द विभो ।। ॐ जय०

सिद्धारथ घर जन्मे, वैभव था भारी, स्वामी वैभव था भारी ।
बाल ब्रह्मचारी, व्रत पाल्यो, तपधारी ।। ॐ जय०

आतम ज्ञान विरागी, समदृष्टि धारी, स्वामी सम० ।
माया मोह विनाशक ज्ञान ज्योति जारी ।। ॐ जय०

जग में पाठ अहिंसा आप ही विस्तार्यो, स्वामी आप० ।
हिंसा पाप मिटाकर सुधर्म परिचार्यो ।। ॐ जय०

यह विधि चांदनपुर में अतिशय दर्शायो स्वामी अ० ।
ग्वाल मनोरथ पूर्यो, दूध गाय पायो ।। ॐ जय०

प्राणदान मंत्री को, तुमने प्रभु दीना, स्वामी तुमने० ।
मन्दिर तीन शिखर का निर्मित है कीना ।। ॐ जय०

जयपुर नृप भी तेरे, अतिशय के सेवी, स्वामी अति० ।
एक ग्राम तिन दीनों, सेवा हित यह भी ॥ ॐ जय०

जो कोई तेरे दर पर इच्छा कर आवे, स्वामी इच्छा० ।
होय मनोरथ पूर्यो, संकट मिट जावै ॥ ॐ जय०

निश दिन प्रभु मन्दिर में, जगमग ज्योति जरै, स्वामी ज० ।
'हरिप्रसाद' चरणों में, आनन्द मोद भरै ॥ ॐ जय०

श्री विद्यासागरजी की आरती

विद्यासागर की, गुण आगर की, शुभ मंगल दीप सजायके ।
मैं आज उतारूँ आरतिया.....॥टेक॥
मल्लप्पा श्री, श्रीमती के गर्भ विषै गुरू आये ।
ग्राम सदलगा जन्म लिया है, सब जन मंगल गाये ।
गुरू जी सब जन मंगल गाये ।.......
न रागी की, न द्वेषी की, शुभ मंगल दीप सजायके ।
मैं आज उतारूँ आरतिया......॥१॥
गुरुवर पाँच महाव्रत धारी, आतम ब्रह्म विहारी ।
खड्गधार शिव पथ पर चलकर, शिथिलाचार निवारी ॥
गुरू जी शिथिलाचार निवारी ।.......
गृह त्यागी की, वैरागी की, ले दीप सुमन का थाल रे
मैं आज उतारूँ आरतिया......॥२॥
गुरुवर आज नयन से लखकर, आलौकिक सुख पाया ।
भक्ति भाव से आरति करके, फूला नहीं समाया ॥
गुरू जी फूला नहीं समाया ।.......
ऐसे ऋषिवर को, ऐसे मुनिवर को, हो वन्दन बारम्बार हो ।
मैं आज उतारूँ आरतिया......॥३॥

संक्षिप्त सूतक विधि

सूतक में देव शास्त्र गुरु का पूजन प्रक्षालादिक तथा मन्दिर जी की जाप, वस्त्रादि को स्पर्श नहीं करना चाहिये। सूतक का समय पूर्ण होने के बाद पूजनादि करके पात्रदानादि करना चाहिये।

१. जन्म का सूतक दश दिन तक माना जाता है।

२. यदि स्त्री का गर्भपात (पांचवें, छठे महीने में) हो, तो जितने महीने का गर्भपात हो, उतने दिन का सूतक माना जाता है।

३. प्रसूता स्त्री को ४५ दिन का सूतक होता है, कहीं-कहीं चालीस दिन का भी माना जाता है। प्रसूति स्थान एक मास तक अशुद्ध है।

४. रजस्वला स्त्री चौथे दिन पति के भोजनादिक के लिए शुद्ध होती है, परन्तु देव पूजन, पात्रदान के लिए पांचवें दिन शुद्ध होती है। व्यभिचारिणी स्त्री के लिए सदा ही सूतक रहता है।

५. मृत्यु का सूतक तीन पीढ़ी तक १२ दिन का माना जाता है। चौथी पीढ़ी में छह दिन का, पांचवीं-छठी पीढ़ी तक चार दिन का, सातवीं पीढ़ी में तीन दिन, आठवीं पीढ़ी में एक दिन रात, नवमी पीढ़ी में स्नान मात्र से शुद्धता हो जाती है।

६. जन्म तथा मृत्यु का सूतक गोत्र के मनुष्य का पांच दिन का होता है। तीन दिन के बालक की मृत्यु का एक दिन का, आठ वर्ष के बालक की मृत्यु का तीन दिन का माना

जाता है। इसके आगे बारह दिन का।

७. अपने कुल के किसी गृहत्यागी का संन्यास मरण या किसी कुटुम्बी का संग्राम में मरण हो जाये तो एक दिन का सूतक माना जाता है।

८. यदि अपने कुल का कोई देशान्तर में मरण करे और १२ दिन पहले खबर सुने तो शेष दिनों का ही सूतक मानना चाहिये। यदि १२ दिन पूर्ण हो गये हों तो स्नानमात्र सूतक जानो।

९. गौ, भैंस, घोड़ी आदि पशु अपने घर में उत्पन्न होने पर एक दिन का सूतक और घर के बाहर पैदा हों तो सूतक नहीं होता। घर में दासी तथा पुत्री के प्रसूति होय तो एक दिन, मरण हो तो तीन दिन का सूतक होता है। यदि घर से बाहर हो तो सूतक नहीं। जो कोई अपने को अग्नि आदिक में जलाकर या विष, शस्त्रादि से आत्महत्या करता है तो छह महीने का सूतक होता है। इसी प्रकार और भी विचार है सो आदिपुराण से जानना।

१०. बच्चा हुये बाद भैंस का दूध १५ दिन तक, गाय का दूध १० दिन तक, बकरी का ८ दिन तक अभक्ष्य (अशुद्ध) होता है। देश भेद से सूतक विधान में कुछ न्यूनाधिक भी होता है परन्तु शास्त्र की पद्धति मिलाकर ही सूतक मानना चाहिये।

श्री आदिनाथ चालीसा

दोहा

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करूँ प्रणाम।
उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम॥
सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार।
आदिनाथ भगवान को, मन मंदिर में धार॥

चौपाई

जय जय आदिनाथ जिनस्वामी, तीनकाल तिहुँ जग में नामी।
वेष दिगम्बर धार रहे हो, करमों को तुम मार रहे हो।
हो सर्वज्ञ बात सब जानों, सारी दुनिया को पहचानों।
नगर अयोध्या जो कहलाये, राजा नाभिराय बतलाये।
मरुदेवी माता के उदर से, चैत वदी नवमी को जन्मे।
तुमने जग को ज्ञान सिखाया, कर्मभूमि का बीज उपाया।
कल्पवृक्ष जब लगे विघटने, जनता आई दुखड़ा कहने।
सबका संशय जभी भगाया, सूर्य चन्द्र का ज्ञान कराया।
खेती करना भी सिखलाया, न्याय दण्ड आदिक समझाया।
तुमने राज्य किया नीति का, सबक आपसे जग ने सीखा।
पुत्र आपका भरत बताया, चक्रवर्ती जग में कहलाया।
बाहुबली जो पुत्र तुम्हारे, सबसे पहले मोक्ष सिधारे।
सुता आपकी दो बतलाई, ब्राह्मी और सुन्दरी कहलाई।
उनको भी विद्या सिखलाई, अक्षर और गिनती बतलाई।
एक दिन राजसभा के अन्दर, एक अप्सरा नाची रही कर।
आयु बहुत थोड़ी थी बाकी, इसलिए वह थोड़ा नाची।
जभी मर गई जिसे देखकर, झट आया वैराग्य उमड़कर।

बेटों को झट पास बुलाया, राजपाट सबमें बँटवाया।
छोड़ सभी झंझट संसारी, वन जाने की करी तैयारी।
राव हजारों साथ सिधाये, राजपाट तज वन को धाये।
लेकिन जब तुमने तप कीना, सबने अपना रस्ता लीना।
वेष दिगम्बर तजकर सबने, छाल आदि के कपड़े पहिने।
भूख प्यास से जब घबराये, फल आदिक खा भूख मिटाये।
और धर्म इस भाँति फलाये, जो अब दुनिया में दिखलाये।
छह महीने तक ध्यान लगाये, फिर भोजन करने को आये।
भोजन विधि जाने नाहिं कोई, कैसे प्रभु का भोजन होई।।
इसी तरह बस चलते चलते, छह महीने भोजन को बीते।
नगर हस्तिनापुर में आये, राजा सोम श्रेयांस बताये।
याद जभी पिछला भव आया, तुमको फौरन ही पड़गाया।
रस गन्ने का तुमने पाया, दुनिया को उपदेश सुनाया।
तप कर केवलज्ञान उपाया, मोक्ष गये सब जग हर्षाया।
अतिशय युक्त तुम्हारा मन्दिर, एक है मरसलगंज के अन्दर।
उसका यह अतिशय बतलाया, कष्टक्लेश का होय सफाया।
मानतुंग पर दया दिखाई, जंजीरें सब काट गिराई।
राजसभा में मान बढ़ाया, जैनधर्म जग में फैलाया।
मुझ पर भी महिमा दिखलाओ, कष्ट चन्द्र का दूर भगाओ।

नित चालीस ही बार, पाठ करे चालीस दिन।।
खेवे धूप अपार, मरसलगंज में आय के।।
होय कुबेर समान, जन्म दरिद्री होय जो।
जिसके नहिं संतान, नाम वंश जग में चले।।

जापमंत्र-**ॐ ह्रीं अर्हं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय नमः।**

श्री चन्द्रप्रभ चालीसा

वीतराग सर्वज्ञ जिन, जिन वाणी को ध्याय।
लिखने का साहस करूँ, चालीस सिर नाय॥
देहरे के श्री चन्द्र को, पूजौं मन वच काय।
ऋद्धि सिद्धि मंगल करें, विघ्न दूर हो जाय॥

चौपाई

जय श्री चन्द्र दया के सागर, देहरे वाले ज्ञान उजागर।
शांति छवि मूरति अति प्यारी, भेष दिगंबर धारा भारी।
नासा पर है दृष्टि तुम्हारी, मोहनी मूरति कितनी प्यारी।
देवों के तुम देव कहावो, कष्ट भक्त के दूर हटावो।
समन्तभद्र मुनिवर ने ध्याया, पिंडी फटी दर्श तुम पाया।
तुम जग में सर्वज्ञ कहावो, अष्टम तीर्थंकर कहलावो।
महासेन के राजदुलारे, मात सुलक्षणा के हो प्यारे।
चन्द्रपुरी नगरी अति नामी, जन्म लिया चन्द्र-प्रभु स्वामी।
पौष वदी ग्यारस को जन्मे, नर नारी हरषे तब मन में।
काम क्रोध तृष्णा दुखकारी, त्याग सुखद मुनि दीक्षा धारी।
फाल्गुन वदी सप्तमी भाई, केवलज्ञान हुआ सुखदाई।
फिर सम्मेदशिखर पर जाके, मोक्ष गये प्रभु आप वहाँ से।
लोभ मोह और छोड़ी माया, तुमने मान कषाय नसाया।
रागी नहीं, नहीं तू द्वेषी, वीतराग तू हित उपदेशी।
पंचमकाल महा दुखदाई, धर्म कर्म भूले सब भाई।
अलवर प्रान्त में नगर तिजारा, होय जहाँ पर दर्शन प्यारा।
उत्तर दिशि में देहरा माहीं, वहाँ आकर प्रभुता प्रगटाई।
सावन सुदि दशमी शुभ नामी, प्रकट भये त्रिभुवन के स्वामी।

चिह्न चन्द्र का लख नर-नारी, चन्द्रप्रभु की मूरती मानी।
मूर्ति आपकी अति उजियाली, लगता हीरा भी है जाली।
अतिशय चन्द्रप्रभु का भारी, सुनकर आते यात्री भारी।
फाल्गुन सुदी सप्तमी प्यारी, जुड़ता है मेला यहाँ भारी।
कहलाने को तो शशि धर हो, तेज पुंज रवि से बढ़कर हो।
नाम तुम्हारा जग में सांचा, ध्यावत भागत भूत पिशाचा।
राक्षस भूतप्रेत सब भागें, तुम सुमिरत भय कभी न लागे।
कीर्ति तुम्हारी है अति भारी, गुण गाते नित नर और नारी।
जिस पर होती कृपा तुम्हारी, संकट झट कटता है भारी।
जो भी जैसी आश लगाता, पूरी उसे तुरत कर पाता।
दुखिया दर पर जो आते हैं, संकट सब खो कर जाते हैं।
खुला सभी हित प्रभु द्वार है, चमत्कार को नमस्कार है।
अन्धा भी यदि ध्यान लगावे, उसके नेत्र शीघ्र खुल जावें।
बहरा भी सुनने लग जावे, पगले का पागलपन जावे।
अखंड ज्योति का घृत जो लगावे, संकट उसका सब कट जावे।
चरणों की रज अति सुखकारी, दुख दरिद्र सब नाशनहारी।
चालीसा जो मन से ध्यावे, पुत्र पौत्र सब सम्पति पावे।
पार करो दुखियों की नैया, स्वामी तुम बिन नहीं खिवैया।
प्रभु मैं तुमसे कुछ नहिं चाहूँ, दर्श तिहारा निश दिन पाऊँ।

करूँ वन्दना आपकी, श्रीचन्द्र प्रभु जिनराज।
जंगल में मंगल कियो, रखो 'सुरेश' की लाज।

जापमंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः।

❑ ❑ ❑

श्री मुनिसुव्रतनाथ चालीसा

दोहा

अरिहंत सिद्ध आचार्य को, शत शत करूँ प्रणाम।
उपाध्याय सर्वसाधु, करते स्वपर कल्याण।
जिनधर्म, जिनागम, जिनमन्दिर पवित्र धाम।
वीतराग जिनबिंब को, कोटि कोटि प्रणाम।

चौपाई

जय मुनिसुव्रत दया के सागर, नाम प्रभु का लोक उजागर।
सुमित्र राजा के तुम नन्दा, माँ शामा की आँखों के चन्दा।
श्यामवर्ण मूरत प्रभु प्यारी, गुणगान करे निशदिन नर नारी।
मुनिसुव्रत जिन हो अन्तरयामी, श्रद्धा भाव सहित प्रणमामी।
भक्ति आपकी जो निशदिन करता, पाप, ताप भय संकट हरता।
प्रभु संकटमोचन नाम तुम्हारा, दीन दुखी जीवों का सहारा।
कोई दरिद्री या तन का रोगी, प्रभु दर्शन से हुए निरोगी।
मिथ्या तिमिर भयो अति भारी, भव की बाधा हरो हमारी।
यह संसार महा दुखदाई, सुख नहीं यहाँ दुख की खाई।
मोह जाल में फँसा है बंदा, काटो प्रभु भव भव का फँदा।
रोग शोक भय व्याधि मिटाओ, भव सागर से पार लगाओ।
घेरा कर्म से चौरासी भटका, मोह माया बन्धन में अटका।
संयोग वियोग भव-भव का नाता, राग द्वेष जग में भटकाता।
हित मित प्रिय प्रभु की वाणी, स्वपर कल्याण करे मुनि ध्यानी।
भवसागर बीच नाव हमारी, प्रभु पार करो यह विरद तिहारी।
मन विवेक मेरा अब जागा, प्रभु दर्शन से कर्ममल भागा।
नाम आपका जपे जो भाई, लोकालोक सुख सम्पदा पाई।

कृपा दृष्टि जब आपकी होवे, धन आरोग्य सुख समृद्धि पावे।
प्रभु चरणन में जो जो आवे, श्रद्धा भक्ति फलवांछित पावे।
प्रभु आपका चमत्कार न्यारा, संकटमोचन प्रभु नाम तुम्हारा।
सर्वज्ञ अनंतचतुष्टय के धारी, मन वच तन वंदना हमारी।
सम्मेदशिखर से मोक्ष सिधारे, उद्धार करो मैं शरण तिहारे।
महाराष्ट्र का पैठण तीर्थ, सुप्रसिद्ध यह अतिशय क्षेत्र।
मनोज्ञ मन्दिर बना है भारी, वीतराग की प्रतिमा सुखकारी।
चतुर्थकालीन मूर्ति निराली, मुनिसुव्रत प्रभु की छवि प्यारी।
मानस्तंभ उतंग की शोभा न्यारी, देखत गलत मान कषाय भारी।
मुनिसुव्रत शनिग्रह अधिष्ठाता, दुख संकट हर देवे सुख साता।
शनि अमावस की महिमा भारी, दूर-दूर से यहाँ आते नरनारी।

सम्यक् श्रद्धा से चालीसा, चालीस दिन पढ़िये नर-नार।
मुनि पथ के राही बन, भक्ति से होवे भव पार।

जापमंत्र–**ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनिसुव्रतनाथाय नमः।**

❑ ❑ ❑

श्री पार्श्वनाथ चालीसा

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करूँ प्रणाम।
उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम॥
सर्वसाधु और सरस्वती, जिनमंदिर सुखकार।
अहिच्छत्र और पार्श्व को, मनमन्दिर में धार॥

चौपाई

पारसनाथ जगत हितकारी, हो स्वामी तुम व्रत के धारी।
सुर नर असुर करें तुम सेवा, तुम ही सब देवन के देवा।
तुमसे करम शत्रु भी हारा, तुम कीना जग का निस्तारा।

अश्वसेन के राजदुलारे, वामा की आँखों के तारे।
काशीजी के स्वामी कहाये, सारी परजा मौज उड़ाये।
इक दिन सब मित्रों को लेके, सैर करन को वन में पहुँचे।
हाथी पर कसकर अम्बारी, इक जंगल में गई सवारी।
एक तपस्वी देख वहाँ पर, उससे बोले वचन सुनाकर।
तपसी ! तू क्यों पाप कमाये, इस लक्कड़ में जीव जलाये।
प्रभो ने जभी कुदाल उठाया, उस लक्कड़ को चीर गिराया।
निकले नाग नागिनी कारे, मरने को थे निकट बेचारे।
रहम प्रभु के दिल में आया, जभी मंत्र नवकार सुनाया[१]।
मरकर वो पाताल सिधाये, पद्मावती धरणेन्द्र कहाये।
तपसी मरकर देव कहाया, नाम कमठ ग्रंथों में गाया।
एक समय श्री पारस स्वामी, राज छोड़कर वन की ठानी।
तप करते सब कर्म खपाये, इक दिन कमठ जीव वहाँ पर आये।
फौरन ही प्रभु को पहचाना, बदला लेने को तब दिल ठाना।
बहुत अधिक बारिश बरसाई, बादल गरजे बिजली गिराई।
बहुत अधिक पत्थर बरसाये, स्वामी तन को नहीं हिलाये।
पद्मावती धरणेन्द्र भी आये, प्रभु की सेवा में चित लाये।
पद्मावती ने फण फैलाया, उस पर स्वामी को बैठाया।
धरणेन्द्र ने फण फैलाया, प्रभु के सिर पर छत्र बनाया।
कर्मनाश प्रभु ज्ञान उपाया, सवमसरण देवेन्द्र रचाया।
यही जगह अहिच्छत्र कहाये, पात्र केशरी जहाँ पर आये।

---

१. तीर्थंकर प्रकृति के धारी राजकुमार पार्श्व ने नाग-नागिन को मात्र उपदेश दिया। णमोकार मंत्र की महिमा बतलाने के उद्देश्य से णमोकार मंत्र सुनाया, ऐसा लिखा गया।

वह पण्डित ब्राह्मण विद्वाना, जिनको जाने सकल जहाना।
शिष्य पाँच सौ संग में आए, सब कट्टर ब्राह्मण कहलाये।
पार्श्वनाथ का दर्शन पाया, सबने जैन धरम अपनाया।
अहिच्छत्र थी सुन्दर नगरी, जहाँ सुखी थी परजा सगरी।
राजा श्री वसुपाल कहाये, वो इक जिन मंदिर बनवाये।
प्रतिमा पर पॉलिश करवाया, फौरन इक मिस्त्री बुलवाया।
वह मिस्तरी मांस खाता था, इससे पॉलिश गिर जाता था।
मुनि ने उसे उपाय बताया, पारस दर्शन व्रत दिलवाया।
मिस्त्री ने व्रत पालन कीना, फौरन ही रंग चढ़ा नवीना।
गदर सत्तावन का किस्सा है, इक माली को यो लिक्खा है।
माली एक प्रतिमा को लेकर, झट छुप गया कुएँ के अन्दर।
उस पानी का अतिशय भारी, दूर होये सारी बीमारी।
जो अहिच्छत्र हृदय से ध्यावे, सो नर उत्तम पदवी पावे।
पुत्र सम्पदा की बढ़ती हो, पापों की एकदम घटती हो।
है तहसील आँवला भारी, स्टेशन पर मिले सवारी।
रामनगर इक ग्राम बराबर, जिसको जाने सब नारी नर।
चालीसे को चन्द्र बनाये, हाथ जोड़कर शीश नवाये।

सोरठा

नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन॥
खेय सुगन्ध अपार, अहिच्छत्र में आय के।
होय कुबेर समान, जन्म दरिद्री होय जो।
जिसके नहीं सन्तान, नाम वंश जग में चले॥

जापमंत्र–**ॐ ह्रीं अर्हं श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः।**

❑ ❑ ❑

श्री महावीर चालीसा

दोहा

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करूँ प्रणाम।
उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम।
सर्व साधु और सरस्वती, जिनमन्दिर सुखकार।
महावीर भगवान को, मन मन्दिर में धार।

चौपाई

जय महावीर दयालु स्वामी, वीर प्रभु तुम जग में नामी।
वर्धमान है नाम तुम्हारा, लगे हृदय को प्यारा-प्यारा।
शांति छवि और मोहनी मूरत, शान हँसीली सोहनी सूरत।
तुमने वेष दिगम्बर धारा, कर्म शत्रु भी तुम से हारा।
क्रोध मान और लोभ भगाया, माया मोह ने तुमसे डर खाया।
तू सर्वज्ञ सर्व का ज्ञाता, तुमको दुनिया से क्या नाता।
तुझमें नहीं राग और द्वेष, वीतराग तू हितोपदेश।
तेरा नाम जगत् में सच्चा, जिसको जाने बच्चा-बच्चा।
भूत प्रेत तुमसे भय खावे, व्यन्तर राक्षस सब भग जावें।
महा व्याध मारी न सतावे, महा विकराल काल डर खावे।
काला नाग होय फणधारी, या हो शेर भयंकर भारी।
ना ही कोई बचाने वाला, स्वामी तुम्हीं करो प्रतिपाला।
अग्नि दावानल सुलग रही हो, तेज हवा से भड़क रही हो।
नाम तुम्हारा सब दुख खोवे, आग एकदम ठण्डी होवे।
हिंसामय था भारत सारा, तब तुमने कीना निस्तारा।
जन्म लिया कुण्डलपुर नगरी, हुई सुखी तब प्रजा सगरी।
सिद्धारथ जी पिता तुम्हारे, त्रिशला की आँखों के तारे।

छोड़ के सब झंझट संसारी, स्वामी हुए बाल ब्रह्मचारी।
पंचमकाल महा दुखदाई, चाँदनपुर महिमा दिखलाई।
टीले में अतिशय दिखलाया, एक गाय का दूध गिराया।
सोच हुआ मन में ग्वाले के, पहुँचा एक फावड़ा लेके।
सारा टीला खोद बगाया, तब तुमने दर्शन दिखलाया।
जोधराज को दुख ने घेरा, उसने नाम जपा जब तेरा।
ठंडा हुआ तोप का गोला, तब सबने जयकारा बोला।
मंत्री ने मन्दिर बनवाया, राजा ने भी द्रव्य लगाया।
बड़ी धर्मशाला बनवाई, तुमको लाने की ठहराई।
तुमने तोड़ी बीसों गाड़ी, पहिया खसका नहीं अगाड़ी।
ग्वाले ने जो हाथ लगाया, फिर तो रथ चलता ही पाया।
पहले दिन वैशाख वदी के, रथ जाता है तीर नदी के।
मीना गूजर सब आते हैं, नाच-कूद सब चित्त उमगाते हैं।
स्वामी तुमने प्रेम निभाया, ग्वाले का तुम मान बढ़ाया।
हाथ लगे ग्वाले का जब ही, स्वामी रथ चलता है तब ही।
मेरी है टूटी सी नैया, तुम बिन कोई नहीं खिवैया।
मुझ पर स्वामी जरा कृपा कर, मैं हूँ प्रभु तुम्हारा चाकर।
तुमसे मैं अरु कछु नहीं चाहूँ, जन्म जन्म तेरे दर्शन पाऊँ।
चालीसे को 'चन्द्र' बनावे, वीर प्रभु को शीश नमावे।।

नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन।।
खेय सुगन्ध अपार, वर्धमान के सामने।
होय कुबेर समान, जन्म दरिद्री होय जो।
जिसके नहीं सन्तान, नाम वश जग में चले।।

जापमंत्र–**ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय नमः।**

श्री ज्ञान चालीसा

पानी पीवे छानकर, जीव जन्तु बच जाय।
जीव दया अति पुण्य है, रोग निकट नहिं आय॥१॥

झूठे पुरुषों से कभी, कोई न करता प्रीत।
सच्चे आदर पात हैं, जग जश लेते जीत॥२॥

चोर नित्य चोरी करे, रहत न कुछ भी पास।
वनों, पहाड़ों भागते, दुख पावें दिन-रात॥३॥

सेय पराई नार को, तन मन धन खो देत।
फिर भी सुख मिलता नहीं, मौत भयानक लेत॥४॥

जोड़ जोड़ संचय करे, परिग्रह अपरम्पार।
कितने दिन है जीवना, क्यों नित ढोवें भार॥५॥

कुटुम्ब मोह का जाल है, कोई न जावे साथ।
भला बुरा जो कर गया, बनी रहेगी गाथ॥६॥

बीड़ी मदिरा पीवना, नहीं भलों को काम।
भंग आदि की लत बुरी, क्यों होते बदनाम ॥७॥

रोगी तन को ठीक कर, ब्रह्मचर्य को पाल।
बिन पैसे की यह दवा, दूर भगावे काल॥८॥

मरा कौन सब पूछते, पूछ भुलाते बात।
चाल चूक शतरंज की, हो जाती है मात॥९॥

सुख दुख निज की देखते, क्यों न लगावे ध्यान।
चिन्ता को अब छोड़कर, धारो सम्यग्ज्ञान॥१०॥

कितने दिन को जीवना, कितने धन की चाह।
ज्ञानी लेखा सोच ले, मौलिक जीवन जांह॥११॥

ऊपर से धर्मी बने, भीतर शुद्ध न एक।
रात दिवस इत उत फिरें, किस विध रहती टेक॥१२॥

कारज को करते चलो, तन मन वश में राख।
होगी निश्चय विजय, विपदा आवे लाख॥१३॥

पार अनेकों ही किये, मुक्ति किस विध होय।
छूटेंगे जंजाल सब, पाप मैल सब धोय॥१४॥

झूठा स्वारथ छोड़कर सत को उर में धार।
इस भव अति शोभा बढ़े, आगे बेड़ा पार॥१५॥

पहले निज को शुद्ध कर, पीछे पर उपदेश।
जो कहते करते नहीं, वो पाते हैं क्लेश॥१६॥

भीतर देह घिनावनी, रोगों का है धाम।
जब तक परदा ठीक है, करले अपना काम॥१७॥

देख बुढ़ापे की दशा, थर थर कांपे गात।
बुरे बुरे दिन बीतते, कोई न सुनता बात॥१८॥

पता किसी को ना पड़े, कब आवेगा काल।
क्यों माया से उलझता, है मकड़ी का जाल॥१९॥

क्यों आया क्या कर गया, ज्ञानी पूछे बात।
लेखा कैसे देयगा, क्या ले जाता हाथ॥२०॥

पापी तू तिर जायेगा, निश्चय यह ही मान।
पीछे की मत याद कर, आगे की पहचान॥२१॥

आये जो सब जायेंगे, जग की यह ही रीत
थोड़े स्वारथ के लिए, क्यों गाता है गीत॥२२॥
चाहे जितना हो भला, सुख दुख का नहीं मेल।
कब दुख कब सुख आ पड़े, देख जगत का खेल॥२३॥
रोग नहीं है छोड़ता, पापी हो या सन्त।
इससे बचने के लिए, पकड़ो आतम कन्त॥२४॥
घूम रहा संसार में, कर कर उल्टी बात।
अब भी चेतन सोच ले, तज पुद्गल को तात॥२५॥
वृषशाला दिन तीन की, नये मुसाफिर आत।
तू कब तक रह जायगा, सोच ज्ञान की बात॥२६॥
नाम लोक में करन को, रुपया खरचो लाख।
सच्ची सेवा के बिना, जम न सकेगी साख॥२७॥
मूर्ख जवानी जोर में, किये पाप बहु घोर।
अब भी चेतन चेत जा, विषय धर्म के चोर॥२८॥
बीती ताहि विसार दे, आगे की सुध लेय।
प्याला विष का छोड़कर आतम अमृत सेय॥२९॥
जीना मरना एक सा, मनुज जन्म को पाय।
आकर कुछ कभी न किया, झूठा रुदन मचाय॥३०॥
गन्धक में पारा मिला, तपे पृथक हो जाय।
इसी तरह यह आतमा, तन जड़ से हट जाय॥३१॥
क्रोध कषाय है बुरी, समझो इसको आप।
मिनटों में झूठ मारती, गिने न माँ या बाप॥३२॥

शास्त्र अनेकों ही सुन, दिया न असली ध्यान।
पोथी पढ़ पढ़ रह गये, उर में हुआ न ज्ञान॥३३॥

न्यारे न्यारे पन्थ यह, हट की करते बात।
सत कोई ना खोजता, मारग कैसे पात॥३४॥

अहंकार के कारणे, लड़ते दिन व रात।
घर को नर्क बना, तदपि न छूटी बात॥३५॥

लक्ष्मी चंचल है अति, सदा न रहती साथ।
दान न कोड़ी कर सका, जाता खाली हाथ॥३६॥

सेवा जननी जनक की, तीरथ है घर माह।
क्यों जग में खोजत फिरे, कल्पतरु की छांह॥३७॥

पुण्य चीज कछु और है, धर्म चीज कछु और।
पुण्य जगत् का खेल है, धर्म मोक्ष कछु और॥३८॥

होनी है सो होयगी, मन में धीरज धार।
झूठा शकुन विचारता, क्या पावेगा पार॥३९॥

दुख से बचने के लिए, छोड़ो पर की आस।
आतम बल सबसे बड़ा, सदा तुम्हारे पास॥४०॥

❑❑❑

समाधि भावना

दिनरात मेरे स्वामी मैं भावना ये भाऊँ।
देहान्त के समय में तुमको न भूल जाऊँ।।
शत्रु अगर कोई हो संतुष्ट उनको कर दूँ।
समता का भाव धर कर सबसे क्षमा कराऊँ ।।
त्यागूँ आहार पानी औषध विचार अवसर।
टूटे नियम न कोई दृढ़ता हृदय में लाऊँ।।
जागें नहीं कषायें नहिं वेदना सतावे।
तुमसे ही लौ लगी हो दुर्ध्यान को भगाऊँ।।
आतम स्वरूप अथवा आराधना विचारूँ।
अरहंत सिद्ध साधू रटना यही लगाऊँ।।
धर्मात्मा निकट हों चरचा धर्म सुनावें।
वे सावधान रक्खें गाफिल न होने पाऊँ।।
जीने की हो न वाञ्छा मरने की हो न इच्छा।
परिवार मित्र जन से मैं मोह को हटाऊँ।।
भोगे जो भोग पहले उनका न होवे सुमरन।
मैं राज्य सम्पदा या पद इन्द्र का न चाहूँ।।
रत्नत्रय का पालन हो अंत में समाधि।
'शिवराम' प्रार्थना यह, जीवन सफल बनाऊँ।।

❑ ❑ ❑

Contact for
order
Call and
whatsapp
9993602663
7722983010

9993602663

पीतल डिब्बा सेट

3.72KB/s 9:21 VoLTE

Like Share

8

Like Share

10"
11"

MILTON
REDMI NOTE 5 PRO
MI DUAL CAMERA

जैन मन्दिर गली नं. 2 कैलाश
आभा जैन राकेश जैन

WEIGHT g
654.0
STAND BY
STABLE →0← NET

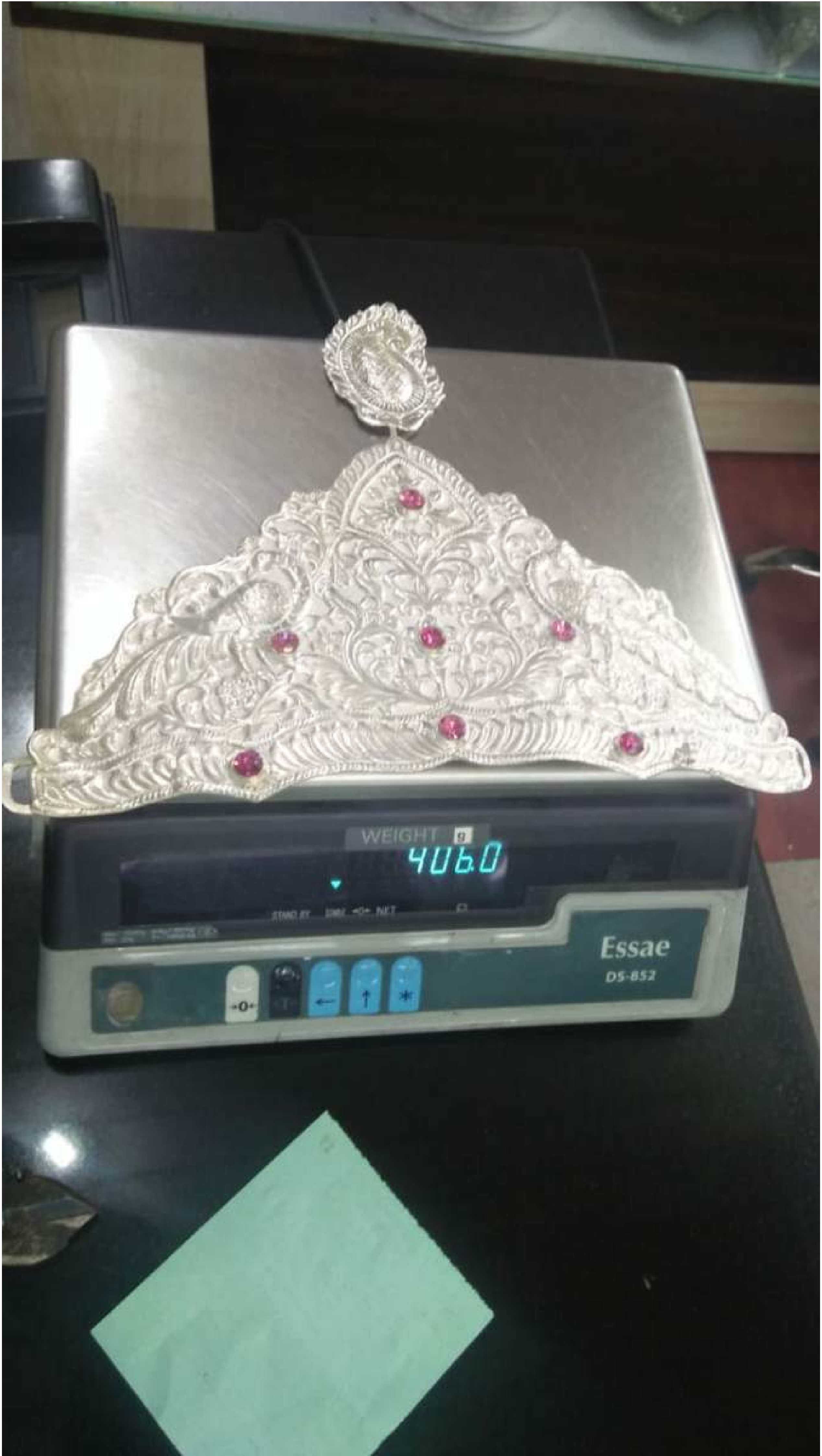

WEIGHT g
406.0
Essae
DS-852

WEIGHT
3450
DS-852

WEIGHT
42040
Essae
DS-852

PhotoGrid

REDMI NOTE 5 PRO
MI DUAL CAMERA

5/03/03